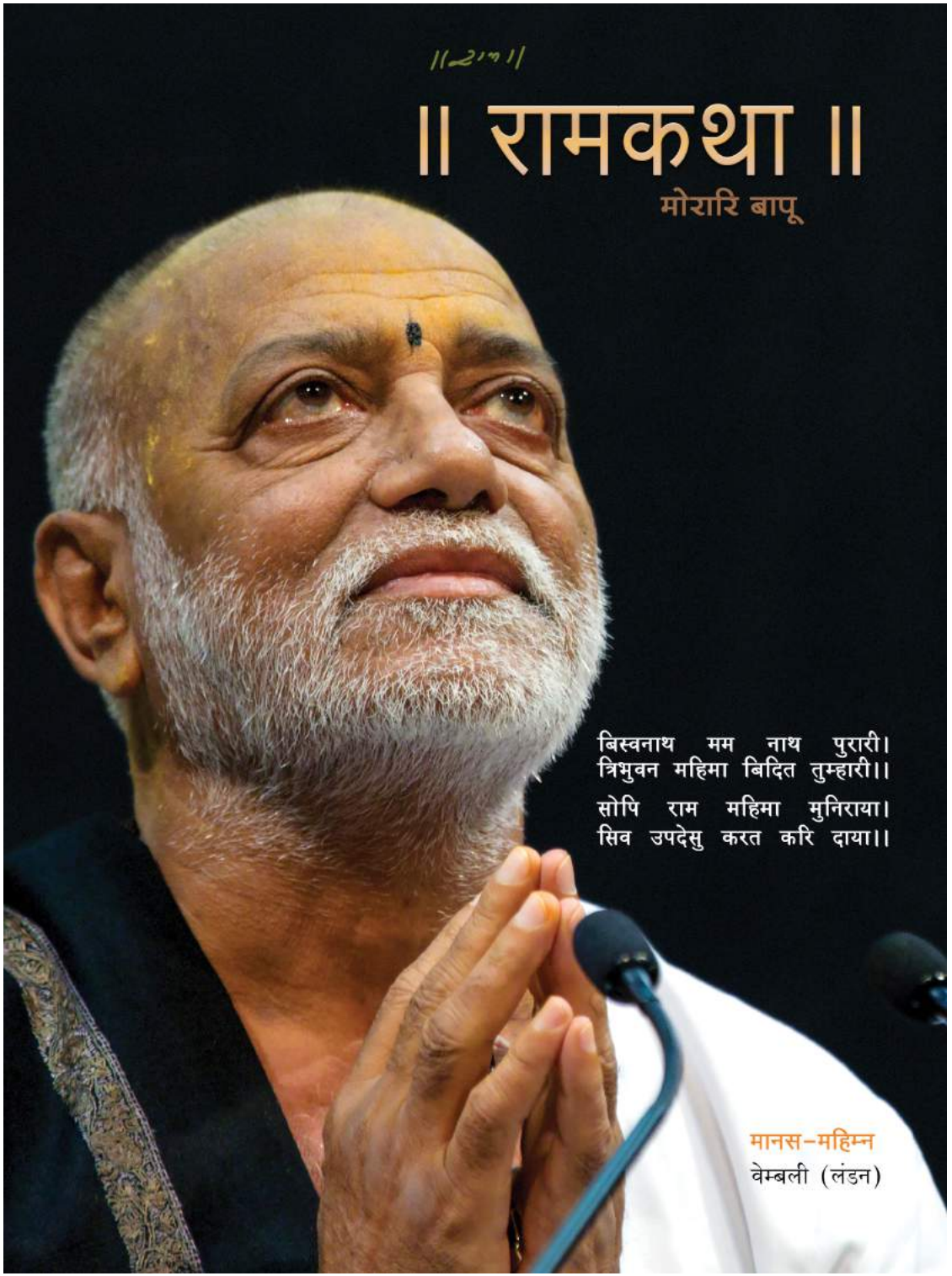
॥ रामकथा ॥
मोरारि बापू
बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी।
त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी।।
सोपि राम महिमा मुनिराया।
सिव उपदेसु करत करि दाया।।
मानस-महिम्न
वेम्बली (लंडन)

|| रामकथा ||
मानस-महिम्न

मोरारिबापू
वेम्बली (लंडन)
दिनांक : १२-८-२०१७ से २०-८-२०१७
कथा-क्रमांक : ८१६

प्रकाशन :
अक्टूबर, २०२१

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारि बापू ने वेम्बली (लंडन) में दिनांक १२-८-२०१७ से २०-८-२०१७ के दिनों में रामकथा का गान किया। सावन मास में भगवान महादेव की उपासना के पावन दिनों में गाई गई इस कथा 'मानस-महिम्न' विषय पर केन्द्रित हुई।

बापू ने इस कथा में गंधर्वराज पुष्पदंत के महिमावंत स्तोत्र 'शिवमहिम्नस्तोत्र' के परिप्रेक्ष्य में 'मानस' में हुई विभिन्न प्रकार की सत्ताईस महिमा को केन्द्र में रखते हुए अपना दर्शन प्रकट किया। 'मानस' अन्तर्गत भगवान राम की, शिव की, शैलजा की, भरत की, दशरथ और कौशल्या की, रावण की, मुनियों की, गंगा की, चित्रकूट की, सत्संग की, साधु की इत्यादि कुल मिलाकर सत्ताईस महिमा का गान हुआ है उसके संदर्भ में बापू ने अपने विचार प्रस्तुत किये।

'मानस' के सात सोपान शिव-महिमा के सात केन्द्र है, ऐसा सूत्रात्मक निवेदन करते हुए बापू ने तप, तेज, तीर्थ, तारुण्य, तत्परता, त्याग और तृप्ति जैसे महादेव की महिमा के सात केन्द्र को भी उद्घाटित किया और ऐसा सूत्रपात भी किया कि मेरी दृष्टि में 'मानस' स्वयं महादेव है।

बापू ने 'मानस' के विध-विध चरित्रों की महिमा विशद रूप में व्यक्त की तदुपरांत ऐसा निष्कर्ष भी निकाला कि 'मानस' में मानव-महिमा है। केवल भगवान की महिमा होती तो शायद दुनिया उब भी जाती। ये हमारी महिमा का शास्त्र है। केवल शिव-महिमा नहीं, जीव की भी महिमा है इसमें। जीव और शिव के बीच में सेतु बनाने का ये ग्रंथ है।

लंडन की इस कथा में सचदे परिवार के प्रेमाग्रह के कारण और बापू की व्यासपीठ के प्रति स्नेहादर के कारण भारत से बिलग-बिलग विद्या के उपासक साहित्यकार एवं कलाकार भी आये थे। विध-विध कला के उपासकों ने सायंकालीन कार्यक्रमों में अपनी कला प्रस्तुत की थी। मानो इस तरह लंडन की भूमि में कथा और कला का मणिकांचन योग हुआ था।

सुविदित है कि व्यासपीठ के माध्यम से बापू कुदरती आपत्तिग्रस्त लोगों को आर्थिक सहाय भी करते रहते हैं। उस समय गुजरात और भारत के अन्य प्रान्तों में हुई दुर्घटनाओं की वजह से जिनकी जान गई थी और सरहद पर जो जवान शहीद हुए थे इन सभी परिवारों के लिए भी इस कथा में कुछ धनराशि इकट्ठी करने का विचार बापू ने व्यक्त किया। साथ ही चित्रकूटधाम, तलगाजरडा के हनुमानजी के प्रसाद के रूप में सवा लाख रुपये भी दिये। व्यासपीठ की अपील के प्रतिघोष में सिर्फ़ सात दिनों में बापू के देश और दुनिया के फ्लावर्स द्वारा पांच करोड रुपये की धनराशि इकट्ठी हुई थी, इनमें से चार करोड रुपये का ड्राफ्ट गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री विजयभाई रूपाणी को स्वयं रमेशभाई सचदे और लोर्ड डोलरभाई पोपट (लंडन) द्वारा गुजरात आकर पहुंचाया गया। और यु.पी., आसाम, बेंगाल और केन्द्र सरकार के जवानों के राहतकोश में पचीस-पचीस लाख रुपये दिये गये। यूं इस कथा में तात्त्विक दर्शन और मानवीय संवेदन का योग भी बना।

– नीतिन वडगामा

'मानस' के सात सोपान शिव-महिमा के सात केन्द्र है

बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी। त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी।।
सोपि राम महिमा मुनिराया। सिव उपदेसु करत करि दाया।।

बाप! परमात्मा की कृपा से कुछ सालों के बाद फिर एक बार रामकथा निमित्त हम सब इकठ्ठे हुए हैं। सभा में उपस्थित सब पूजनीय चरणों में और विध-विध विद्या के, कला के उपासक यहां आये हैं, उन सभीको और आप सभीको भी व्यासपीठ से मेरा सादर प्रणाम।

बाप! रुद्रेश, ऋषि, रमेश सचदे परिवार का यह मंगलमय कथा का आयोजन; आज से प्रारंभ हो रहा है। पूरे आयोजन के पीछे जो श्रद्धा और विश्वास है, उसकी सराहना करता हुआ एडवान्स में मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

दूसरी बात, अभी प्रारंभ में हरीशभाई ने कहा, आप सब जानते हैं कि गुजरात और भारत के अन्य प्रान्त में होती छोटी-बड़ी घटनाएं, सरहद पर होती घटनाएं; इनमें जो-जो जानें गई है, इनमें जो असरग्रस्त है इन सभीके निर्वाण के लिए हम सबने व्यासपीठ से श्रद्धांजलि पेश की। इस निर्वाण को हम सबका प्रणाम।

एक बात मैं ओर भी कहनेवाला हूं। आज की कथा के समापन में रामायण की आरती के पूर्व मेरे परम स्नेही लोर्ड डोलरभाई पोपट इसकी विशेष जानकारी अंग्रेजी में या तो जिस रूप में वो व्यक्त करना चाहेंगे, कहेंगे। बात यह है जो मैं पहले संक्षेप में कह दूं। जो घटना घटी, रामकथा के आरंभ में मैंने कल कहा, वैसे मैं मुंबई से लंडन आ रहा था तो यजमान परिवार के मुख्य स्तंभ रमेशभाई, उसको मैंने अपनी मन की बात, दिल की बात कही। उसने सहर्ष स्वीकार किया। यहां आने के बाद कल सुबह डोलरभाई और हम सब बैठे थे तब भी मैंने यह बात रखी, खास तो ऋषि के सामने। ऋषि इस कथा में प्रधान है। मेरे मन में यह बात रही बाप! इस कथा के प्रसाद के रूप में कुछ राशि इकठ्ठी करके जो हानि हुई है उसकी यत्किंचित् सेवा के रूप में कुछ राशि यहां से दी जाए। लेकिन मेरी एक शर्त है। मैं व्यवस्था का आदमी नहीं हूं। आज से शुरू करके गुरुवार तक यह काम जारी रहेगा। जो देना चाहे उसमें अपनी राशि घोषित कर सकते हैं।

मैंने कड़ी सूचना दी रखी है इन वड़ीलों को, शुक्रवार के बाद किसी से कुछ न लिया जाए। शुक्रवार तक ड्राफ्ट निकल जाए और मैं मेरी व्यासपीठ से राशि शनिवार को घोषित कर दूं और अगले रविवार को पूर्णाहुति है; सोमवार या मंगलवार को डोलरभाई, रमेशभाई या जो जुड़ना चाहे, प्रतिनिधि के रूप में गांधीनगर जाए और इक्कीस या बाईस को गुजरात के चीफ मिनिस्टर आदरणीय विजयभाई रूपाणी को यह चेक या ड्राफ्ट समर्पित कर दे और बात पूरी हो जाए। बात सबको अच्छी भी लगी है। तो जब मैं यह विचार रख रहा हूं तो तलगाजरडा चित्रकूटधाम हनुमानजी के प्रसाद के रूप में सवा लाख रुपया की राशि दे रहा हूं। डोलरभाई ने ओलरेडी कहा कि बापू, मेरे ग्यारह लाख की राशि और दाणीभाई ने भी कहा, बापू, सवा लाख की राशि मेरी। अभी आपको पूरी सूचना डोलरभाई देंगे कि कैसे घोषित करना? क्या करना? लेकिन यह काम इक्कीस या बाईस को पूरा हो जाना चाहिए।

बाप! तीसरी बात मेरी प्रसन्नता की यह है कि सचदे परिवार के प्रेमाग्रह के कारण और मेरी व्यासपीठ के प्रति स्नेहादर के कारण भारत से बिलग-बिलग विद्या के शब्दसेवी साहित्यकार, कितनी विद्याओं के कई बुज़ुर्ग, कई युवा सब यहां आये हैं; करीब एक सौ तीस के आसपास आये हैं। और मैं स्पष्टता करना चाहूंगा कि कोई फ्री नहीं है। सब अपने क्षेत्र में अपने कार्यक्रमों में बहुत व्यस्त है। केवल सचदे परिवार का प्रेमाग्रह, केवल व्यासपीठ के प्रति स्नेहादर, इसके कारण वो निजानंद के लिए यहां आये हैं। और रोज़ जैसे-जैसे कार्यक्रम बनेगा, कल से हम सब लाभ लेंगे। मैं सभी विध-विध कला के उपासकों को सलाम कर रहा हूं, नमन कर रहा हूं और यह सभी अतिथियों का स्वागत करता हूं। एक बात आपके ध्यान में रहे कि यह कोई फ्री नहीं है। देश-विदेश में सभी जगह अपनी प्रतिष्ठा लिए हुए हैं। केवल हमको आनंद बांटने के लिए आये हैं, उसकी मैं विशेष खुशी व्यक्त करता हूं।

अब आइए, कथा में प्रवेश करें। सावन महीना चल रहा है। भगवान महादेव की उपासना के यह पावन दिन है। अभी यहां आने से पहले आध घंटे पर सोचा कि किस विषय चुनूं? मेरे मन में जो आया सो कहा। दो पंक्ति भी आपके सामने गाई। इस नव दिवसीय कथा का विषय रहेगा 'मानस-महिम्न।'

गंधर्वराज पुष्पदंत का एक बहुत बड़ा महिमावंत स्तोत्र है, 'शिवमहिम्न स्तोत्र।' इस कथा का नामाभिधान 'मानस-महिम्न।' 'रामचरितमानस' में सत्ताईस तत्त्वों की महिमा गाई गई है। कुल मिलाकर मेरी गिनती के अनुसार सत्ताईस तत्त्वों की महिमा का गायन मेरे तुलसीदासजी ने किया हैं। मुझे नीलेश ने भी माहिती दी थी। एक बार सुरत में भी 'मानस-महिमा' विषय पर कथा गाई गई। एक बारडोली में भी गाई लेकिन उस समय पर क्या बोला गया, क्या प्रवाह चला, परमात्मा जाने! इस पावन विषय अंतर्गत 'रामचरितमानस' का दर्शन करेंगे और शिव के चरणों में, भगवान शंकर के चरणों में हमारी वाणी समर्पित करेंगे, श्रवण समर्पित करेंगे।

तो दो पंक्तियां उठाई है मैंने 'मानस' से। कुल मिलाकर मुझे जो माहिती दी गई उसमें पूरे 'रामचरितमानस' में 'महिमा' शब्द बावन बार आया है। भूलचूक लेना-देना। यह शास्त्र है वो किसी के वश नहीं होता; हमें ही वश होना पड़ता है। तो बाप! 'मानस-महिम्न।' महिम्न का एक अर्थ होता है महिमा। गंधर्व के गायन के साथ शुरू करें।

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
माप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः।।
अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः।।

मेरे लिए 'मानस' ही महादेव है क्योंकि तुलसीदासजी ने कहा है, 'सद्गुरु ग्यान बिराग जोग के।' यह स्वयं सद्गुरु है। इसलिए मैंने यह दो पंक्तियां पसंद की है। यद्यपि कोई भी दो पंक्तियां ले सकते हैं लेकिन जो दो पंक्तिया यहां गाई गई, बिलग-बिलग जगह से है; आप खोज लीजिएगा।

तो बाप! 'मानस-महिम्न।' उस पावन विषय पर हम 'मानस' की सत्ताईस महिमा का गायन-श्रवण करेंगे। 'मानस' में भगवान राम की महिमा तो है ही। 'मानस' में शिव की महिमा है। 'मानस' में शैलजा की महिमा है। 'मानस' में गंगा की महिमा है। 'मानस' में दशरथ और कौशल्या की महिमा है। 'मानस' में रावण की भी महिमा गोस्वामीजी ने गाई है। मुनियों की महिमा है; चित्रकूट की

महिमा है; सत्संग की महिमा है; साधु की महिमा है; भरत की महिमा है। जितना स्मरण में आया उतना आपके सामने रख रहा हूं। कुल मिलाकर सत्ताईस महिमा का गायन इस कथा में है। मेरी व्यासपीठ उसको कहेगी 'मानस-महिम्न।' उसकी चर्चा हम मिलकर करेंगे स्वान्तः सुखाय।

रुद्र इतना सुंदर इंग्लिश बोला, उसको भी मैं दुआ देता हूं। तो बाप! 'मानस' की महिमा अतुलनीय है। 'मानस' के सातों कांडों की महिमा अतुलनीय है। आप गुजराती थोड़ा पढ़िये बच्चों। परिवार में गुजराती बोलो, सीखो, पढ़ाओ। ताकि बच्चें गुजराती भूल न जाए। जिसकी जो प्रांतीय भाषा हो लेकिन ज्यादातर गुजराती भाई-बहन हैं; गुजराती पकड़े रखो। गुजराती अखबार लंडन में भी निकल रहे हैं वो भी अच्छी सेवा है। गुजराती भाषा लोगों तक पहुंचे उसकी भी मैं सराहना करूंगा।

मेरा सालों से वक्तव्य रहा कि जिसको अच्छा वक्ता होना है उसको अच्छा श्रोता होना ही चाहिए। श्रवण एक विद्या है; श्रवण कुंडल है। महाभारत में कर्ण के कवच-कुंडल ले लिये गये इसका मतलब तलगाजरडा को यह लगता है कि शायद कृष्ण ने यह समझकर कैसे भी योजना बनाकर कर्ण की श्रवणविद्या छीन ली कि यह आदमी 'गीता' सुन लेगा तो पहले पहुंच जाएगा और मेरी जो नियति है उसमें बाधा बनेगा! तो बाप! श्रवण करना। परमात्मा की जितनी-जितनी विभूतियां है, जितने-जितने तत्त्व है 'मानस' में; श्रवण करना और सुनकर सुनाना।

'मानस' के सातों कांड में सात प्रकार की महिमा है। पहले दिन ग्रंथ की महिमा कहनी पड़ती है। महादेव का क्या कहे बाप! गंधर्वराज पुष्पदंत कहता है-

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।

कौन उसकी महिमा गाए? 'महिम्नः पारं ते' महिमा का आरपार नहीं साहब! कौन आरपार गाएगा? लेकिन मेरे लिए जब मैं 'मानस' गाता हूं और 'मानस' के गायन का प्रारंभ करता हूं तब जब त्रिभुवन गुरु होगा उसकी चार वस्तु होगी।

दुनिया में छः प्रकार के गुरु होते हैं। 'मानस' के आधार पर एक गुरु होता है। दूसरा होता है श्रीगुरु।

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष विभंजन।

यह गुरु केवल गुरु। दूसरा-

श्री गुरु चरन सरोज रज निज मन मुकुर सुधारी।

उसकी व्याख्या कभी की है। तीसरा होता है कुलगुरु। कुल पुरोहित, कुलदेवता उसको हम कुलगुरु कहते हैं। चौथा होता है, धर्मगुरु। यह चौथे प्रकार का गुरु है। पांचवां गुरु है, सद्गुरु। 'सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा।' छठ्ठा गुरु है-

तुम्ह त्रिभुवन गुर बेद बखाना।
जान जीव पाँवर का जाना।।

त्रिभुवन गुरु जो होता है, जो शिव है। शिव के अतिरिक्त कौन? त्रिभुवन गुरु है महादेव। अनंत गुण है उसमें कोई गा नहीं सकता, कोई लिख नहीं सकता। जैसे गंधर्वराज ने कहा।

'मानस' के सातों कांड में शिव की सात वस्तु दिखती है। शिव में पहली वस्तु है तप। शिव की तपस्या गज़ब है! भवानी की भी तपस्या गज़ब है! महिमा का पहला सूत्र है तप। दूसरा, तेज। महादेव जैसा तेज!

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम्।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियं
वन्दे भक्तजाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्।।

सूर्य, शशांक, अग्नि जिसके नेत्र है उसके समान तेज किसका होगा? शिव की दूसरी महिमा है तेज। शिव है तीर्थरूप। जैसे हम कहते हैं, तीर्थों में स्नान करो तो सब पाप जाए। शिव की महिमा का एक केन्द्र है तीर्थ। तप, तेज, तीर्थ और चौथा तारुण्य। शिव बूढ़ा नहीं है। तारुण्य है; रोज़ जोबन है। हां, फिर कोई कविता में मेरे तुलसीदासजी भी 'बूढ़ो बड़ो प्रमाणिक' कह देते हैं। शिवजी ने ज्योतिषी का रूप लिया; बहुत बूढ़ा था। यह तो अपनी-अपनी लाड लडाने की रीत है। शिव में तारुण्य है।

करहिं बिबिध बिधि भोग बिलासा।
गनन्ह समेत बसहिं कैलासा।।

तारुण्य; यह चौथा महिमा का केन्द्र है शिव का। पांचवां है तत्परता, तीव्रता। शिव की तत्परता गज़ब है। छठ्ठा शिव का महिमा का केन्द्र है त्याग।

महोक्षः खट्वांगं परशुरजिनं भस्म फणिनः

क्या त्यागमूर्ति है महादेव! त्याग है एक महिमा का केन्द्रबिंदु। सातवां महिमा का केन्द्र है तृप्ति।

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।

जब मैं तलगाजरडा वो कोना याद करता हूं तब मुझे 'मानस'

के सभी सोपान में उसमें 'बालकांड' उठाई तो महादेव का तप दिखता है, पूरा 'बालकांड' तपस्या से भरा हुआ है साहब! उसमें पार्वती का तप; उसमें शिव का तप; मनु-शतरूपा का तप; देवर्षि नारद का तप। गोस्वामीजी कहते हैं-

तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता
तब बल बिष्नु सकल जग त्राता।।
तप अधार सब सृष्टि भवानी।
करहि जाइ तपु अस जियँ जानी।।

तप की भूरिशः चर्चा गोस्वामीजी ने 'बालकांड' में की है। तप-महिमा का कांड है 'बालकांड।'

शिव का दूसरा महिमा का केन्द्र है त्याग। 'अयोध्याकांड' त्याग का केन्द्र है। भरत का त्याग। त्याग, त्याग, त्याग। त्याग की एक बहुत खूबसूरत स्पर्धा चल रही है। यह शिव की महिमा का तत्त्व 'अयोध्याकांड' में मिलता है जहां त्याग, त्याग, त्याग। 'अरण्यकांड' में कितने ऋषिमुनि, कितने आश्रम! सब तीर्थपना है। यह शिव की महिमा का तीसरा केन्द्रबिन्दु है तीर्थता, तीर्थपना। शिव का चौथा महिमा का तत्त्व जो तारुण्य है वो है 'किष्किन्धाकांड।' सुग्रीव तरुण है। इवन वाली भी तरुण है, युवान है। आज युवादिवस है, 'युथ डे' है। यह समाचार ठीक है? वाली तरुण है। विचारों का तारुण्य है वाली में। तारुण्य है वाली में। थोड़ी तारुण्य शक्ति बिलग रास्ते पर चली गई थी लेकिन कृपा हुई और सही मार्ग पर आ गई। सुग्रीव तरुण है। सुग्रीव जैसा दौड़नेवाला कोई नहीं और अद्‌भुत तारुण्य है दौड़ने में ऐसा कोई दौड़वीर पैदा नहीं हुआ। सुग्रीव के नाम से ही दौड़ स्पर्धा होनी चाहिए। उसके समान कोई दौड़वीर नहीं है; जो भागता है। अंगद युवराज तरुण है। और सबसे बड़ा तरुण तो 'किष्किन्धा' में ही तुलसी ने हनुमान का प्रवेश बताया और इसके समान तरुण कौन है?

महाबीर बिक्रम बजरंगी।
कुमति निवार सुमति के संगी।।
कंचन बरन बिराज सुबेसा।
कानन कुंडल कुंचित केसा।।

सोना कभी बूढ़ा नहीं होता। हाथ वज्र। 'अयं मे हस्तो भगवान।' जो भगवती श्रुति का उद्‌घोष है। वेद कहता है, मेरा हाथ विश्व की समस्त बीमारियों की औषधि है।

तो श्री हनुमानजी तरुण है, युवान है। 'किष्किन्धाकांड' में भगवान शिव की तारुण्य तत्त्व की महिमा दिखती है। तत्परता, तड़प यह 'सुंदरकांड' का केन्द्र विषय है। जहां जानकी तड़पती है। सीता के वियोग में भगवान राघवेन्द्र तड़पते हैं। हनुमान के मुख से 'सुन्दरकांड' में भगवान के शब्द सुनिए-

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।
जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।
सो मनु सदा सहत तोहि पाहीं।
जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं।।

भगवान सीता को प्राप्त करने के लिए बहुत तत्पर है, तड़प रहे हैं। एक प्रकार की तड़प, तत्परता, तीव्रता। यह 'सुन्दरकांड' में वर्णित महादेव का सूत्र है।

तो तप, त्याग, तीर्थपना, तारुण्य और तत्परता। 'लंकाकांड' में 'शिवमहिम्न' का सूत्र तेजस्विता है। रावण को कितनी ही गालियां दो, हर साल उसको जलाओ ठीक है लेकिन रावण की तेजस्विता को प्रणाम ही करना पड़ेगा।

तासु तेज समान प्रभु आनन।
हरषे देखि संभु चतुरानन।।

मेरे गोस्वामीजी कहते हैं, रावण को जब इकतीसवां बाण लगा, वो गिरा तब कहते हैं, रावण का तेज भगवान राम के मुख में समा गया। 'उत्तरकांड' में शिव-महिमा का बिलकुल सारसूत्र है तृप्ति। 'पायो परम विश्राम।'

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

तो बाप! तृप्ति, एक डकार, एक तसल्ली, जो शिव का महिमावंत सूत्र है। 'उत्तरकांड' में आप पाओगे तृप्ति। तो 'मानस' के सात सोपान शिव-महिमा के सात केन्द्र है। यह सात सोपानों में सात सूत्र निहित लगते हैं। गुरुकृपा हो, शास्त्र की कृपा हो वहीं से सत्य ढूंढनेवाले को मिलता है। खिड़की खुली होनी चाहिए साहब!

राशिद किसे सुनाए गली में तेरी गज़ल,
उनके मकां का कोई दरीचा खुला न था।

तो बाप! 'मानस-महिम्न' की जो बातें हैं, हम और आप साथ मिलकर चर्चा करेंगे आगे। आज पहले दिन जिसको मैं ग्रंथ-परिचय कहता हूं। श्रोताओं को किस शास्त्र पर चर्चा होनेवाली है केन्द्रस्थ शास्त्र कौन है? उसी का परिचय करवाना वक्ता का कर्तव्य है। कथाओं की पावनी परंपरा में पहले दिन की कथा में यह महिमा गाई जाती है। तुलसी ने मानसरोवर का एक रूपक उठाया। उसके चार घाट बनाये। एक ज्ञानघाट; एक उपासना का घाट; एक शरणागति का घाट और एक कर्म का घाट। ज्ञानघाट के आचार्य भगवान शिव शिवा को, पार्वती को सुनाते हैं।

उपासना के आचार्य बाबा कागभुशुंडी गरुड को सुनाते हैं। कर्म के घाट पर बैठे परम विवेकी याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी को सुनाते हैं। तो ऐसा एक शास्त्र शिवजी ने रचा; तुलसी ने संपादित किया; श्लोक को लोकबोली में उतारा। तुलसी ने 'मानस' की रचना की। सात सोपान-बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर, लंका और उत्तर। सात सोपान में उसको ग्रंथस्थ किया। सात मंत्रों में तुलसी ने 'बालकांड' का मंगलाचरण किया।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।
वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंङ्कररूपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।।

सात मंत्रों में मंगलाचरण करने के बाद तुलसी का संकल्प था, भाषाबद्ध करूं; लोकबोली में शास्त्र लिखूं। और जितने-जितने महापुरुष इसाईधर्म, इस्लामधर्म, हिन्दुधर्म, बौद्धधर्म, जैनधर्म जो-जो अपनी पवित्र परंपराएं है, अपनी उपासना के जो अपने-अपने रास्ते से जा रहे हैं, सबने ज्यादा से ज्यादा लोकबोली का उपयोग किया है। पयगंबर साहब अपनी बोली में बोले हैं। बुद्ध ने अपनी बोली में लोकभाषा में बातें रखी। जिसस ने अपनी बोली में बातें रखी। कबीर साहब तो बिलकुल साधुकडी बोली में आये। तुलसीदासजी पूरा शास्त्र संस्कृत में लिख सकते थे। श्लोक को लोक तक पहुंचाने के लिए मेरे गोस्वामीजी एकदम लोकभाषा में उतर आये। शुरूआत श्लोकबोली से करते हैं। हमारी देवगिरा संस्कृत को प्रणाम करते हुए पांच सोरठें लिखे तुलसी ने पहले।

गणेश, दुर्गा, शिव, भगवान विष्णु और सूर्य; भगवान आदिजगद्‌गुरु शंकराचार्य ने पंचदेव की बात की थी। पंच विचार रखे थे, चलो। सनातन दिव्यधारा है उसके पथिकों को चाहिए यह पंचदेव का वो करें। गणेश, शिव, दुर्गा, विष्णु और सूर्य; तुलसी ने चार सोरठे में यह पांच का वर्णन किया और पांचवें सोरठे में यह पांचों जिस में दिखा वो गुरु का वर्णन किया।

मेरी व्यासपीठ मानती है कि यह पंच विचार है। स्थूल रूप में गणपति की पूजा जो इस परंपरा को स्वीकार करते हैं वो करे। मुबारक। पूजनीय है यह लोग। गणेश एक विचार है। देव भी है लेकिन मेरा गणेश का मतलब है विवेक। युवान भाई-बहनों, हम विवेक से जीए तो निरंतर गणेश की पूजा कर रहे हैं। चौबीस घंटों में से बारह घंटे गणेश की बड़े-बड़े श्लोकों से पूजा करो लेकिन विवेकशून्यता है तो? अमारो गुजराती शायर नाज़िर कहे छे-

हुं हाथने मारा फेलावुं तो तारी खुदाई दूर नथी,
हुं मांगु ने तुं आपी दे ए वात मने मंजूर नथी।

तो बाप! विवेक गणेशपूजा है। बुज़ुर्गों का आदर करो। समवयस्क से प्रीत से मैत्री करो। छोटों को वात्सल्य से नहाला दो। यह विवेक गणेश की पूजा है। सूर्य की पूजा; हम जल चढ़ायें, नमस्कार करें यह तो करे ही लेकिन जो न कर सके तो कम से कम उजाले में रहने का शिवसंकल्प वो सूर्य की पूजा की। जहां तक संभव हो, हम उजाले में रहें यह सूर्यपूजा है मेरी समझ में। शिव की पूजा; यह सावन मास चल रहा है। हम सब अभिषेक करते हैं शिव की पूजा में। लेकिन शिव का अर्थ है कल्याण। विश्व के कल्याण की जिसमें निरंतर भावना है वो चौबीस घंटों शिव-अभिषेक कर रहा है। दुर्गापूजा; भवानी को तुलसी ने श्रद्धा कहा है। अपनी श्रद्धा को अकबंध रखो, दूसरे की श्रद्धा को तोड़ो ना यह दुर्गा पूजा है। हमारे जलन साहब तो गुजराती में कहते हैं-

श्रद्धानो हो विषय तो पुरावानी शी जरूर?
कुर्रानमां तो क्यांय पयंबरनी सही नथी।

विष्णु का अर्थ है व्यापक। विशाल विचार, संकीर्ण नहीं। विशालता यह विष्णुपूजा है। यह पंच विचारों का सेवन यह पंचदेवों की पूजा है। और कोई बुद्धपुरुष मिल जाए, कोई पहुंचा हुआ फ़कीर मिल जाए तो उसमें पांचों आ जाते हैं। गुरु गौरी भी है; गुरु गणेश भी है; गुरु गिरिजापति भी है; गुरु भगवान भास्कर भी है और गुरु विष्णु भी है। गुरु को ब्रह्मा भी कहते हैं, विष्णु भी कहते हैं, शंकर भी कहते हैं। तो एक ही बुद्धपुरुष में पांचों तत्त्व समाहित होते रहते हैं इसलिए पांचवें सोरठे में तुलसी ने कहा-

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरुवंदना गोस्वामीजी शुरू करते हैं। 'रामचरितमानस' का पहला प्रकरण गुरु की महिमा है। आइये, इसमें से चंद पंक्ति का गायन कर लें, जिसको मेरी व्यासपीठ 'गुरुगीता' कहती है।

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरु की महिमा का तुलसी ने पहले प्रकरण में गायन किया; गुरुवंदना की। वहीं से पहली चौपाई शुरू होती है। चौपाईयों से गुरुवंदना की और गुरु की चरणरज से अपना नेत्र पावन कर दिया गया और पूरा जगत राममय, ब्रह्ममय दिखने लगा। इसलिए तुलसी ने सबकी वंदना की उसमें राक्षसों की भी वंदना की। असुरों, जड़, चेतन, जलचर, थलचर,

नभचर, जीवमात्र की तुलसी ने वंदना की क्योंकि जिसकी आंख गुरुकृपा से पावन हो गई, वो किसकी निंदा करेगा? वो सबको वंदन ही करेगा। बुद्धपुरुष निदान करेगा, निंदा नहीं करेगा। आपने पूछा नहीं लेकिन मैं तलगाजरडी राय दूं कि दूसरों को ज्यादा जानने की कसरत ही छोड़ दो। जितना ज्यादा जानोगे, राग-द्वेष बढ़ेगा। हरि भजो। अति रोशनी आंखों को अंधा कर सकती है। अति जानकारी अच्छी नहीं। थोड़े अनपढ़ रहो। समय मिले तो घर के एक कोने में बैठकर हरि को याद करके, अपने परम को याद करके दो-दो आंसू बहा लो। इससे बड़ी संपदा कौन है?

कितना महफूज़ हूं मैं कोने में?
कोई अडचन नहीं है रोने में।

कोना बहुत मदद करता था। आदमी कोने में बैठकर रोकर अपने को पवित्र कर देता था।

उसको मैंने बचा लिया वरना,
डूब जाता वो मुझे डूबोने में।

तो बाप! जिसकी दृष्टि पवित्र हो गई उसको सब ब्रह्ममय लगता है। तो तुलसी आखिर में पवित्र दृष्टि के कारण एक पंक्ति लिख देते हैं-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

पूरे संसार सीयराममय देखकर, मेरे दोनों हाथ जोड़कर मैं सबको प्रणाम करता हूं। ऐसी वंदना प्रकरण में माँ कौशल्या की वंदना करते हैं; दशरथजी की, जनक राजा की, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न सभी की वंदना करते हुए गोस्वामीजी अनिवार्य और नितांत आवश्यक वंदना बीच में लाते हैं-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

हनुमानजी की वंदना गोस्वामीजी करते हैं। हनुमानजी श्वास और विश्वास का प्रतीक है। श्वास के लिए हनुमंतत्त्व क्योंकि यह पवनपुत्र है; प्राणतत्त्व है। श्वास के लिए भी हनुमानजी ज़रूरी और शंकर के रूप में यह विश्वास है इसलिए विश्वास के लिए भी हनुमंतत्त्व ज़रूरी है। यह कोई एक देश का, कोई एक कोम का तत्त्व नहीं है। यह परमतत्त्व है हनुमान। सोना कभी कोमवादी होता है? हनुमानजी 'कंचन बरन बिराज सुबेसा।' यह सोने का है इसलिए यह भेदों से दूर है। वायु कभी हिन्दु-मुस्लिम नहीं होता; इसाई-पारसी नहीं होता। हनुमान पवनपुत्र है। इसलिए भेदमुक्त है, सूर्य के शिष्य है; सूर्य सबका होता है। इसलिए भेदमुक्त है। हनुमंततत्त्व की नितांत आवश्यकता रहती है। तुलसी ने हनुमानजी की वंदना की। आइए, तुलसी के महानग्रंथ 'विनयपत्रिका' से हनुमंततत्त्व की वंदना करता हुआ यह पद, उसकी एकाद पंक्ति गाते हुए आज की कथा को विराम की ओर ले चलें।

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।

हनुमानजी की वंदना गोस्वामीजी ने की। हनुमानजी की साधना के लिए तुलसीदासजी ने जो 'हनुमानचालीसा' का सर्जन किया है वो सिद्ध भी है और मेरी समझ में शुद्ध भी है। 'हनुमानचालीसा' का आश्रय करना। तो 'हनुमानचालीसा' सिद्ध भी है, शुद्ध भी है; उसका आश्रय करें।

'मानस' के सातों कांड में शिव की सात वस्तु दिखती है। शिव में पहली वस्तु है तप। शिव की तपस्या गज़ब है! दूसरा, तेज। सूर्य, शशांक, अग्नि जिसके नेत्र है उसके समान तेज किसका होगा? शिव है तीर्थरूप। शिव की महिमा का एक केन्द्र है तीर्थ। तप, तेज, तीर्थ और चौथा तारुण्य। शिव बूढ़ा नहीं है। तारुण्य चौथा महिमा का केन्द्र है शिव का। पांचवां है तत्परता, तीव्रता। शिव की महिमा का छठ्ठा केन्द्र है त्याग। क्या त्यागमूर्ति है महादेव! और सातवां महिमा का केन्द्र है तृप्ति। और 'मानस' के सात सोपान शिव-महिमा के सात केन्द्र है।

मेरी दृष्टि में 'मानस' स्वयं महादेव है

शुरूआत में 'हनुमानचालीसा' का गायन; चारों वेद के मंत्रों का उच्चारण; उसके बाद बेटी ने अपने विचार अंग्रेजी में प्रस्तुत कर दिए और फिर आदरणीय, हम सबके वडील मुरब्बी नगीनदास बापा ने कल की कथा का सारांश अंग्रेजी भाषा में प्रस्तुत किया। बापा को प्रणाम। यद्यपि बापा ने सभी तालियां मेरे लिए रिज़र्व रखने को कहा था और मैंने ही शुरूआत करा दी थी कि तालियां बजाओ। तालियां इकठ्ठी करने से मिलती नहीं और मना करने से रुकती नहीं साहब!

अरे! प्रारब्ध तो घेलुं रहे छे दूर मागे तो,
न मागे दोडतुं आवे, न विश्वासे कदी रहेजे।
-बालाशंकर कंथारिया

बापा के प्रति हम सबका आदर। ९७, रनिंग नाव! फिर एक बार मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आइए, हम विषय प्रवेश करें।

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः।।

'मानस-महिम्न', 'मानस-महिमा'; शिवआराधना की जितनी स्तुतियां है, यद्यपि भगवान शंकराचार्य अग्रसर है, फिर भी गंधर्वराज जगद्गुरु शंकराचार्य के पदनक्ष पर जा रहे हैं। मूलतः पुष्पदंत गंधर्वो के राजा थे।

श्री पुष्पदन्तमुखपंकजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण।

क्या शब्दरचना है! वो सूक्ष्मरूप धारण कर सकता था, वायुरूप ले सकता था। शिव के प्रति पूरी निष्ठा थी, अनन्य निष्ठा थी इसमें कोई दो राय नहीं। लेकिन एक राजा के बाग से वायुरूप धारण करके शिव-आराधना के लिए पुष्प की चोरी करता था। लक्ष्य तो अच्छा था, लेकिन साधनशुद्धि नहीं थी। और हम सब जानते हैं, विश्ववंद्य गांधीबापू ने अपने जीवनकाल में हमें मार्गदर्शन देते हुए साधनशुद्धि पर बहुत बल दिया। साध्य कितना भी पवित्र क्यों न हो, साधनशुद्धि नितांत आवश्यक है। शूर्पणखा को राम को पाना था; साध्य बड़ा प्यारा था, लक्ष्य बड़ा अद्‌भुत था लेकिन राम को पाने के लिए जिस साधन का उपयोग किया वो शुद्ध नहीं था। राम को तो वो ही पा सकता है, 'मानस' में लिखा है, 'मोहि कपट छल छिद्र न भावा।' वो पर्दा रखकर सुंदरी का वेश धारण करके गई। दुनिया में कई भाई-बहन की जोड़ियां पूरे विश्व में प्रसिद्ध है लेकिन रामकथा के ये दो भाई-बहन रावण और शूर्पणखा जरा विचित्र है। दोनों का लक्ष्य पवित्र है लेकिन दोनों का साधन अशुद्ध है। तो शूर्पणखा चाहती थी राम को लेकिन साधनशुद्धि नहीं थी, इसलिए वो विफल गई। और रावण चाहता था सीता को; दोनों भाई-बहन के लक्ष्य बिलग थे; एक चाहता था भक्ति को, एक चाहती थी ब्रह्म को। राम ब्रह्म है, सीता भक्ति है। रावण की साधनशुद्धि नहीं थी; वो संन्यासी का नकली वेश लेकर आया था।

तो बाप! साधनशुद्धि बहुत ज़रूरी है। मैं बहुत बार बोला हूं, सर्दी के दिनों में बहुत कड़ी ठंडी में हम खरीदा हुआ कंबल ओढ़कर सोए तो नींद आ भी जाएगी लेकिन किसी का चुराया हुआ कंबल ओढेंगे तो शायद खरीदे हुए कंबल से चुराया हुआ कंबल ज्यादा कीमती हो, फिर भी ठंडक जाएगी नहीं, क्योंकि साधन शुद्ध नहीं है। हमारे भगतबापू कहते हैं-

झडपेलुं अमी अमर करशे,
पण अभय नहीं आपी शकशे।

किसी का छिना हुआ अमृत अमर तो कर भी दे लेकिन निर्भय नहीं कर सकता।

तो बाप! साधनशुद्धि ज़रूरी है। मैं आप सबको बिनती करूं कि भक्ति ही भजन है; माला फेरना ही भजन है; तिलक करना ही भजन है; विशेष प्रकार का गणवेश जो आपको स्वाभाविक अच्छा लगे वो पहनना ही भजन है, ऐसी भ्रांति में मत रहियो। भक्ति भी भजन ही है, लेकिन कर्म भी भजन है ये न भूले। और तलगाजरडा को पूछेंगे तो कहेगा, ज्ञान भी भजन है। ज्ञान याने समझ। मैं कोई अद्वैत, ब्रह्म, अनीह, व्यापक उसकी चर्चा में नहीं जाऊंगा। ज्ञान याने विवेक, समझ, सावधानी, जागृति ये सब भजन है। ज्ञान भी भजन है; कर्म भी मेरी समझ में भजन है। और भक्ति तो भजन है ही। तो कर्म भी भजन है।

एक लेखक विश्व को प्रेरणा देने के लिए अपनी लेखनी से सत्कर्म कर रहा है तो वो उसका भजन है। एक शायर अपनी शायरी से जगत को प्रेरणा देता है तो वो भजन है। एक संगीतज्ञ गाकर जगत को प्रकाशित करता है तो भजन है। एक वाद्यकार वाद्य के द्वारा भजन करता है। तो अपनी-अपनी विद्या से परमतत्त्व के ही गुणगान यहां गाए जा रहे हैं। तो कर्म भी भजन है। भक्ति तो भजन है ही। समझ भजन है। विवेक भजन है। सावधानी भजन है। क्यों भजन को संकीर्ण कर दिया जाए?

मैं बात कर रहा था कि लक्ष्य कितना भी पवित्र हो, साधन शुद्ध न हो; गांधीजी कहे, कर्मशुद्धि न हो तो लक्ष्य पाया नहीं जा सकता। गंधर्वराज शिव का परम उपासक; सूक्ष्म देह धारण करने की विद्या थी इसलिए राजा के बाग में से पूजा के लिए फूल और बिल्वपत्र की चोरी करता था। आपने जितना दान किया होगा वो ही सही होगा, बाकी का गलत भी हो सकता है। रमेशभाई मुझे रास्ते में पूछ रहे थे कि बापू, उदारता कैसे आये? भजन से आये? जप से आये? मुझ में ये क्यों नहीं आती? ये स्वीकार भी एक महिमावंत बात है। मुझे उनकी प्रशंसा करने का कोई कारण नहीं है; मैं बीस तारीख को निकल जाऊंगा। उसका क्या है, कम देने में बहुत संकोच करते हैं; एक डोलर न दे लेकिन लाख डोलर देने हो तो तुरंत दे देते हैं! इसीलिए कल उन्होंने ग्यारह लाख दिए। जब ये डिक्लेर हुआ था तब उन्होंने ग्यारह लाख दे दिए थे। हमारे 'फूलछाब' अखबार में जब राहतनिधि शुरू हुई तो हमने भी चित्रकूटधाम की प्रसादी के रूप में पत्र-पुष्प दिया था। कहने का मेरा मतलब है, उदारता एक स्वभाव होता है। उसकी जिज्ञासा भी बहुत बड़ी बात है। 'God my silent partner.' ये रमेशभाई की कंपनी का नाम है, 'परमात्मा मेरा मूक भागीदार है।' वो बोलता नहीं इसलिए इसे जैसे करना हो करते रहते हैं लेकिन मैं बोलता हूं इसलिए छोडूं नहीं! और रमेशभाई, चुप रहना बहुत बड़ी बात है। 'Silence is language of god.' ऐसा रूमी ने कहा है।

तो मैं मूल बात यही कर रहा था कि गंधर्वराज का साधन शुद्ध नहीं था। महादेव का अनन्य उपासक लेकिन चोरी से पुष्प चुनता है। पूरा बाग उजाड़ देता है, ऐसी शिव की पूजा कैसी मानी जाएगी कि एक ओर बाग उजड़ जाए, दूसरी ओर शंकर को संवारा जाए! शंकर इससे राज़ी नहीं होगा। एक गुलाब का फूल अथवा तो एक भाव का पुष्प दे दो तो भी चलेगा। गंधर्वराज राजा का पूरा बाग उजाड़ रहा है। ये बात फैलती-फैलती राजा के पास गई। नौकरों ने कहा, महाराज, पता नहीं, कोई अज्ञात शक्ति रात में सब फूल-पत्तें ले जाता है। हम पूरी देखभाल करते हैं लेकिन वो पकड़ा नहीं जाता है। एक रात को राजा स्वयं देखने गया कि ये चोर है कौन? देखा तो फूल-पत्तियां चुनी जा रही है लेकिन आदमी नहीं दिखता! था गंधर्वराज पुष्पदंत। राजा ने सोचा कि ये है कोई शिवभक्त लेकिन साधनशुद्धि नहीं है। कैसे पकड़ा जाए? शिवभक्त होगा तो वो कोई चूक करे तो उसकी विद्या खत्म हो जाएगी। तो सोचा कि शिव को जो चढ़ा हुआ है वो शिवनिर्माल्य रास्ते में रख दे और शिव का भगत उस पर अपना पैर दे दे तो शिवअपराध हो जाएगा और शिवअपराध होते ही उसमें जो रहस्य है, शक्ति है वो विफल हो जाएगी। राजा ने युक्ति की। कहीं करेण के फूल, गुलाब के फूल, मोगरे के फूल, बिल्वपत्र सब शिव को चढ़े हुए थे वो रख दिए।

तो राजा ने निर्माल्य बिछा दिए। अनन्यता का भी अहंकार न हो जाए इसके लिए सावधान रहना चाहिए। जैसे ही शिवनिर्माल्य पर शिवभक्त ने पैर रखा; अपराध हुआ और प्राप्त हुई विद्या चली गई! प्रगट हो गया गंधर्वराज। राजा ने पकड़ा कि आप कौन? वो बोला, मैं गंधर्वराज पुष्पदंत हूं। राजा ने कहा, मुझे माफ़ करिएगा, मुझे लगा कि मेरा बाग कौन उजाड़ रहा है? तो मैंने ये युक्ति की और निर्माल्य बिछा दिए। गंधर्वराज ने कहा, तेरा कोई कसूर नहीं, मेरी साधना में विक्षेप हुआ ये मेरे अहंकार और मेरी विद्या के कारण हुआ। मेरा साधन शुद्ध नहीं था उसी का ये परिणाम है। उसी समय शिवअपराध से मुक्त होने के लिए पुष्पदंत के मुख से 'शिवमहिम्नस्तोत्र' का गान होता है।

'महिम्न' का अर्थ होता है, महिमा, गौरवगान। शब्दकोश में कितने उसके अर्थ मिलेंगे। किसी की गुणातीत ख्याति का वर्णन करना; गुणातीत प्रतिष्ठा का गुणगान करना दोष नहीं है। प्रतिष्ठा तीन प्रकार की होती है। पहली, कोई प्रतिष्ठा तमोगुणी होती है। रावण कम प्रतिष्ठावान नहीं था। लेकिन उसकी तमोगुणी प्रतिष्ठा थी। उसका गुणगान नहीं होना चाहिए। दूसरी, कोई रजोगुणी प्रतिष्ठा होती है। पैसा खराब है, ऐसा मैं नहीं कहूं लेकिन केवल रजोगुण से मिली पद-प्रतिष्ठा का अच्छा आदमी गुणगान नहीं करेगा, सावधान करेगा। तीसरी, कुछ प्रतिष्ठा सत्त्वगुणी होती है। ये आगे की दो की तुलना में अच्छी है। आदमी शांत हो, शीलवान हो, सत्त्वगुणप्रधान हो। अच्छी प्रतिष्ठा है। मुझे लगता है, जो गुणातीत प्रतिष्ठा है उसमें न तमोगुण, न रजोगुण, न सत्त्वगुण है। तीनों गुणों से पर जिसकी प्रतिष्ठा है उसीका गौरवगान करने का नाम है 'महिम्न।' मेरा महादेव है गुणातीत प्रतिष्ठा।

प्रतिष्ठा का गायन, महिमा का गायन, ख्याति का गायन जो गुणातीत है उसका होना चाहिए। लेकिन परख कैसे करें? तो तीन वस्तु याद रखें। पहला, गुणातीत प्रभाव हो तो गायन होना चाहिए। राम में कितना प्रभाव है! लेकिन गुणातीत है, इसीलिए ही पूरा 'रामचरितमानस' लिख दिया। 'वाल्मीकि रामायण' में राम के गुणों की जो पूरी शृंखला नारद लिख रहे हैं वो प्रतिष्ठा का ही गायन है, लेकिन गुणातीत है। तो प्रभाव का महिम्न होना चाहिए। दूसरा, स्वभाव; जिसका स्वभाव सरल, साधु स्वभाव हो, रांक स्वभाव हो, उसका महिम्न होना चाहिए। आदमी न करे तो अस्तित्व करेगा। तीसरा, अभाव; अभाव याने फ़कीरी। जिसमें फ़कीरी है, त्याग की प्रबलता है उसका महिमागान होना चाहिए।

शिव में तीनों है। प्रभाव है। वाणी का भी प्रभाव होता है। अपनी तंदुरस्ती पर पानी का भी प्रभाव होता है। कौन-सा जल पीते हैं उसका हमारी मानसिकता पर, शरीर पर प्रभाव होता है। मैं सोचता रहता हूं कि गंधर्व जब बोला होगा तो कैसे वाणी फूटी होगी? शंकराचार्य जब स्तोत्रगायन करते होंगे तो कैसे करते होंगे? तो महादेव के प्रभाव का वर्णन कौन करे? हमारा कवि दादल वर्णन करते हुए कहता है, 'चपटी भभूत में है खजाना कुबेर का।'

'मानस' कहता है, पांच लोगों को इन्द्र की, इन्द्र के पिता की माया लागू नहीं होती। यद्यपि कृष्ण ने 'गीता' में डिमडिम घोष करते हुए कहा, 'मम माया दुरत्यया।' तुलसी ने भी कहा, 'हरि माया अति दुस्तर।' शंकर भी माया का प्रभाव देखकर हंस पड़े, 'बोले बिहसि महेस हरिमाया बलु जानि जियँ।' लेकिन 'रामचरितमानस' में

लिखा है, ये पांच तत्त्व अपने मूल शीलस्वभाव को पकड़ रखे तो माया की ऐसी-तेसी! माया उसे छू नहीं सकती।

'अयोध्याकांड' की यात्रा करो। अयोध्या छोड़कर चित्रकूट चलो। भरत और राम के संवाद में कहीं राम लौट न जाए अयोध्या और हमारी बनाई बाजी बिगड़ न जाए इसीलिए देवराज इन्द्र मौका मिलते ही माया का प्रयोग करता है कि कुछ ऐसी माया का प्रपात कर दिया जाए कि इन लोगों को चित्रकूट रहने के बजाय घर याद आये। और असर हुई भी। तुलसी कहते हैं, देवताओं ने माया का प्रयोग चित्रकूट की सभा पर किया, जहां जनक का समाज और अवध का समाज निर्णय नहीं कर पा रहा, तब पांच को छोड़कर माया सबको लागू हुई। एक साथ बारिश हो तो सब भीग जाने चाहिए। वर्षा भेद नहीं कर सकती लेकिन गुरुकृपा का छाता होगा तो वो कम भीगेंगे। टेढ़ी बारिश हो और हमें भीगा दे ये बात बिलग है। अब तो मेरी इच्छा ऐसी ही है कि बहुत ऊंचे मंदिर बनाने की अब ज़रूरत नहीं है, टेढ़े मंदिर बनाओ। टेढ़ा मंदिर है सेतु जोड़ने की बात। सबको जोड़ा जाए। राम ने रामेश्वर की स्थापना की लेकिन मंदिर बांधा ऐसा नहीं लिखा है। राम का ये मंदिर था सेतु जोड़ना। कोम-कोम को जोड़ो; मज़हब-मज़हब को जोड़ो; समाज-समाज को जोड़ो; भाषा-भाषा को जोड़ो; परिवार-परिवार को जोड़ो।

कल मुझे एक चिठ्ठी मिली थी उसमें लिखा है, बापू, कल भी आप 'अल्लाह जाने' ऐसा बोलते थे; उर्दू शायरी बोल रहे हैं; इतना समन्वय किए जा रहे हैं, तो आप जात-पात-कोम में नहीं मानते? हिन्दु होने का मुझे आनंद है, गौरव है। हिन्दुस्तानी होने का विशेष गौरव है। इस पृथ्वी का जीव हूं, उसका विशेष गौरव है और परमात्मा के बनाए हुए अस्तित्व की मैं भी एक औलाद हूं, उसका मुझे विशेष गर्व है। लेकिन कोम की बात नहीं। हम कोमवाले नहीं है, हम कोमन है। सर्व साधारण जीओ।

तो ये जोड़ने की बात। ऐसे भी लोग है, जिसको देवमाया नहीं पकड़ पाएगी। इसमें पांच लिखे हैं- भरत, जनक, मुनिगण, सचिव, सचेत साधु।

भरतु जनकु मुनिजन सचिव साधु सचेत बिहाइ।
लागि देवमाया सबहि जथा जोगु जनु पाइ।।

तुलसी कहते हैं, चित्रकूट में देवताओं ने माया का प्रभाव डाला तो पहले तो भरत को माया नहीं लगी। दूसरा जनक विदेहराज है, परमज्ञानी है उसको माया की कोई असर नहीं हुई। जितने मुनिगण थे, योगी थे, साधनारत थे उनको माया कुछ नहीं कर पाई। ऐसे मंत्री थे कि जिसको माया छू नहीं सकती थी। सचिव का आध्यात्मिक अर्थ 'मानस' को पूछकर करूं तो सत्य और वैराग्य को तुलसी ने सचिव कहा है। ऐसे सचिव को माया क्या कर सकती है? और कहा, साधु को माया छू नहीं पाई। केवल नामधारी साधु नहीं। सावधानी तुलसी की देखिए, एक शब्दप्रयोग किया है, 'सचेत', जागृत साधु, सावधान साधु, होशवान साधु। कोई भी साधु मिल जाए तो आदर के पात्र है; वेश को भी प्रणाम करो लेकिन यहां सावधान साधु की बात है। हमारे यहां कहते हैं, 'साधु तो चलता भला।' साधु 'चरैवेति' है; घूमता रहता है; एक जगह बैठता नहीं। हमारे वसीम बरेलवी साहब का बहुत प्यारा शे'र है-

वो जहां भी रहेगा, रोशनी लुटायेगा,
चरागों को अपना कोई मकान नहीं होता।

दीये को अपना मठ, पीठ, आश्रम नहीं होता। दीया तो जहां भी रखो, उजाला फैला देता है, 'चरैवेति।' 'साधु तो चलता भला।' ये सूत्र बड़ा प्यारा है। कुछ समय से तलगाजरडा सोच रहा है, उसमें कुछ एड करे तो मुझे जो अंदर से प्रेरणा आती है तो मैं कहता हूं, साधु तो चलता भला और साधु तो जागता भला। तो तुलसी कहते हैं, इन पांचों को छोड़कर सबको देवमाया ने पकड़ लिया कैसे-कैसे? जैसा आदमी था उसको इस प्रकार माया ने पकड़ लिया।

तो मेरे भाई-बहन, स्वभाव की महिमा का गायन होना चाहिए। प्रभाव की महिमा गुणातीत हो तो महिमागान होना चाहिए, ये बात याद रखना। तीसरा, अभाव का महिम्न होना चाहिए। अभाव याने फ़कीरी। शंकर अभाव में जीते हैं। उसके घर का सामान तो देखो! पुष्पदंत कहता है-

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फलिनः।
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।

शंकर के घर एक ही चारपाई थी, उसके तीन ही पैर थे; कितना अकिंचन था कि चौथा पैर ही न करवाया! तो महादेव तीन पैरवाली खटियां रखते थे। उनको तीन-तीन वस्तुएं बहुत पसंद है। त्रयशूल, त्रिपुंड, त्रिलोचन, तीन पत्ते का बिल्वपत्र, तीन पैरवाली खटियां। और वाहन में नंदी वो भी बूढ़ा! भस्म उसकी विभूति है, ऐश्वर्य है। फणीधर सर्प रखते थे। मैं आपको पूछुं, शंकर के आश्रय में

रहे सर्प ने किसी को काटा है? इतिहास है तो बताओ। महादेव के संग में आ जाता है वो विषवाले भी दंश देना बंद कर देते हैं।

महादेव की घर की सामग्री तो देखो! तीन पैरवाली खटियां, ये हमें संकेत करता है कि भोगमुक्त परमात्मा है। वो उसकी शैया नहीं, उसकी समाधि है। साधना के लिए साधन-सामग्री की ज़रूरत नहीं। शिवतत्त्व गज़ब है। गंधर्वराज कहते हैं, शिव के समान कोई देवता नहीं। और खुद कहते हैं, महिम्न के समान कोई स्तोत्र नहीं। 'नास्ति तत्त्वं गुरोपरं।' पुष्पदंत कहता है, गुरु के समान कोई तत्त्व नहीं है।

सुरास्तां तामृद्धिं दधति च भवद्भ्रूप्रणिहितां।
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति।।

जो स्वात्माराम में लीन है, उसको कोई ज़रूरत नहीं पड़ती; इसी में ही उसका काम चलता है।

तो प्रभाव भी ऐसा कि चपटी भभूत में खज़ाना भी दे दे और स्वभाव भी बिलकुल ऐसा। और अभाव भी है। एक फ़कीरी, अलमस्त दशा है महादेव की। उसका महिम्न गाना ही चाहिए। और मैंने कल निवेदन किया कि ये 'मानस' मेरी दृष्टि में महादेव है। चेहरा हम नहीं है; चेहरा तो हमारा रूप है। हम तो हृदय है। चेहरा थोड़ा बिगड़ जाएगा तो चलेगा; विकृत हो जाए, चलेगा लेकिन हृदय होना चाहिए। हृदय हमारा स्वरूप है। आत्मा की बातें बहुत कठिन है, हम नहीं पहुंच पायेंगे। हृदय जो धड़कता है, महसूस कर रहे हैं वो हमारा स्वरूप है और स्वरूप ही शिव है।

संकर सहज सरूपु सम्हारा।
लागि समाधि अखंड अपारा।।

'गीता' में कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन, 'गीता' मेरा हृदय है यानी 'गीता' मैं हूं। और 'रचि महेस निज मानस राखा।' शंकर कहते हैं, 'मानस' मेरा हृदय है; तो हृदय ही महादेव है। अब उसकी गंगा कौन? 'मानस' महादेव के त्रिलोचन कौन? उसकी जटा कौन? भुजंग कौन? उसकी गणना करनी पड़ेगी। शिवस्वरूप है 'मानस।' शंकर ने 'मानस' की रचना करके बुद्धि में नहीं रखा। समय आने पर पार्वती के सामने हृदय खोल दिया। और किताब नहीं खोली, कलेजा खोला। तो तलगाजरडा के कोने से जो प्रसाद मिला वो बांट रहा हूं। होठ मेरे हिल रहे हैं, बोल कोई दूसरा रहा है।

मुझे मेरे दादा समझाते थे कि बेटा, 'मानस' हमारे लिए शंकर है। सालों पहले की बात की अब स्मृति आ रही है, 'स्मृतिर्लब्धा।' तो 'मानस'रूपी शंकर की जटा कौन? गंगा कौन? वक्रचंद्र कौन? त्रिलोचन कौन? दादा ने तीन-चार बताए थे; कुछ मैंने उनकी कृपा से जोड़ दिया। आपके सामने पेश करूं। 'मानस' है महादेव, अवधूत है; ये अवधूती शास्त्र है। तो शंकर की जटा से गंगा निकलती है। 'मानस'रूपी महादेव की गंगा है अविरत बहती 'रामचरितमानस' की चौपाईयां। धीरे-धीरे चौपाईयां बहती ही रहती है। नर्तन करती चौपाईयां, डान्सिंग चौपाईयां। हर चौपाई मेरे लिए नृत्य कर रही है। ये मुझे लगता है, आप कुबूल करे न करे आपकी कोई बाध्यता नहीं।

तो 'मानस'रूपी महादेव की गंगा है चौपाईयां। भगवान शिव का त्रिपुंड है सोरठा। 'मानस' में जो बीच-बीच में आते हैं वो सोरठे है त्रिपुंड। त्रिलोचन मैंने डाला है गुरुकृपा से। सत्य, प्रेम, करुणा ये महादेव की तीन आंखें हैं। सत्य दायीं आंख है। प्रेम मध्य में और करुणा बायीं आंख है। सत्य है सूर्य, प्रेम है अग्नि, 'वन्दे सूर्य शशांकवह्निनयनं।' नेत्रों की चर्चा करते हुए, संस्कृत के महात्मा कहते हैं, हे त्रिलोचन, तेरे एक नेत्र है सूर्य, दूसरा अग्नि, तीसरा चंद्र। तो मेरी समझ में आया कि दायीं आंख सत्य है। बायीं आंख है करुणा। वो चंद्र है। बीच में अग्नितत्त्व जो है वो प्रेम है। तो शिव के त्रिलोचन है-सत्य, प्रेम और करुणा। प्रेम है मध्य में; वो अग्नि आंख है। 'प्रेमपंथ पावकनी ज्वाळा।' प्रेमपंथ पावक की ज्वाला। 'मानस' के दोहे जितने जटिल और कठिन है इतने चौपाई, सोरठे और श्लोक भी नहीं है। तलगाजरडा की दृष्टि में ये दोहे ही शंकर की जटा है। दोहे में इतनी ताकत है कि समझ पड़े तो ऐसे ही पड़ जाए, न समझ में आए तो पीएच.डी. है तो भी न समझ पा सके! क्योंकि पूरा दोहन करना पड़ता है। साधक स्वयं पूरा दोहा जाए, पूरा अपना निचोड़ निकाल दे तब कभी-कभी दोहा समझ में आए। ये मेरे महादेव की जटाजूट है। बादशाह ज़फ़र का शे'र है-

आंधियां गम की चलेगी तो संवर जाऊंगा।
मैं तेरी झुल्फ नहीं हूं कि बिखर जाऊंगा।

शायर कहता है, कितने भी गम आये, आंधियां आये, मैं ओर संवर जाऊंगा।

मुझे शूली पर चढ़ाने की ज़रूरत क्या है?
मेरे हाथों से कलम छीन लो, मर जाऊंगा।

दोहे जटिल है। कोई-कोई अति कठिन दोहे हैं।

भरत राम की मिलनि लखि बिसरे सबहि अपान।

भरत और राम चित्रकूट में मिले उस घटना का ये दोहा है। अपान एक वायु है। राम-भरत मिल रहे हैं, उसी समय अपान चला गया। अपान का एक अर्थ होता है अपनापन, खुदी। सब खुदी चली गई, किसी को पता नहीं कि हम कौन है? कहां है? दो भाईयों का प्रेम देखते अपान खुद चली गई। अपान वायु की बात आये तो पूरी योग प्रक्रिया आ गई। अपान की विस्मृति योगसाधना के क्रमश: विकास की गति है। उससे कुंडलिनी जागृति होती है ऐसा कहा जाता है।

तो कई दोहे मैं आपके सामने गुरुकृपा से रख सकता हूं, जिस जटा को खोलना कठिन है। कई बड़ों-बड़ों की गंगा इसमें उलझ जाए! वो तो शंकर कृपा करे और एक झूंड खोले तो ही हो सकता है। तो दोहा है जटा; सोरठे हैं त्रिपुंड; चौपाई है निरंतर बहती गंगधारा। पूर्णिमा के चंद्र में कलंक होता है। शिव के भाल में जो चंद्र है वो निष्कलंक है। 'मानस' का संस्कृत का एक-एक श्लोक भालचंद्र है। आप कोई न कह सको कि इसमें त्रूटि है। ये दूज का चांद है। और दूज के चांद की महिमा ये है कि उसमें वृद्धि की संभावना है; क्षयपक्ष आता ही नहीं। पूर्णिमा तक मत पहुंचना, वरना क्षयपक्ष शुरू हो जाता है। तो श्लोक है चंद्रबिंब। 'मानस' के श्लोक चंद्रबिंब है।

स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा।
लसद्भालबालेन्दु कण्ठे भुजंगा।।

छंद है भुजंग। शंकर के गले में रहे भुजंग ने किसी को काटा नहीं है। छंद सुंदर लिखे हैं तुलसी ने। उसमें भी जितना आपका कौशल्य, समझदारी, जानकारी। क्लासिकल में भी आप गा सकते हैं, सुगम में भी गा सकते हैं, लोकढाल तो है ही मूल में। जहां-जहां संस्कृत की बात आई; 'रुद्राष्टक' लो। मैंने तो अपील की है। कई संगीतकार उस पर काम कर रहे हैं। मैंने कहा है, 'रुद्राष्टक' के आठ श्लोक है वो आठ रागों में गाया गया है। एक भाग खुद पार्वती ने गाया है। मेरा मानना है कि पार्वती ने जो एक श्लोक गाया होगा वो दुर्गा में ही गाया होगा। उसके सिवा कोई ओर राग में वो गा ही नहीं सकती। बिलग-बिलग आठ लोगों ने रुद्राष्टक गाया है। और मैंने प्रार्थना की है कि संगीत के जानकारों आठों राग में एक-एक टुकड़ा कम्पोझ करो। मैं निश्चित नहीं हूं, लेकिन भूपाली राग में या तो सरस्वती ने गाया या गणपति ने गाया। किसीने केदार में गाया; किसीने मालकोश में गाया; किसीने भैरवी में; किसीने यमन में गाया है; किसीने बागेश्री में गाया है; किसीने शिवरंजनी में गाया है।

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं।
गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

तो श्लोक है 'मानस'-महादेव का दूज का चांद। त्रिलोचन, त्रिपुंड, गंगधारा। जिसने अकाम भाव से और निश्छल भाव से 'मानस' का आश्रय किया उसके त्रिताप मिट जाते हैं, क्योंकि 'त्रय:शूल निर्मूलनं शूलपाणिं।' त्रिशूल ये शिव का शस्त्र नहीं है। कथानकों में जो आता है वो भले आता हो, बाकी तुलसी को पूछो तो कहते हैं कि 'त्रय:शूल निर्मूलनं' तीन प्रकार के ताप को नष्ट करता है। ये त्रय:शूल को मिटानेवाला त्रिशूल है। लेकिन शंकर की शोभा में वृद्धि करनेवाला बहुत बड़ा तत्त्व, वो है विष। 'नीलकंठं दयालं।' तो 'मानस'रूपी शंकर का विष क्या है? तुलसी के जीवन में भी कई विषम परिस्थितियां आई, उनकी जीवनी देखते है तो। और स्वयं महादेव के जीवन में भी विषम परिस्थितियों की गणना नहीं, इतनी विषम परिस्थितियों से वो गुज़रे हैं। शंकर वो है जो जीवन में आनेवाली विषम परिस्थिति का विष कंठ में धारण करे। विषम परिस्थिति यदि अंदर ही डाले जाओगे तो पेट फट जाएगा, दु:खी हो जाओगे; वमन करोगे तो तुम्हारे दु:ख और विषम परिस्थिति का वर्णन सुनकर संवेदनशील लोग दु:खी हो जाएंगे। न विष को पेट में डाला जाए, न विष का वमन किया जाए। शंकर ने सिखाया, विष को कंठ में धारण किया जाए। तो जीवन में आनेवाली विषम परिस्थिति ही विष है। ये टुकड़ा पंडित रामकिंकरजी का है। साधकों के जीवन में, समझदार के जीवन में जो-जो विषम परिस्थितियां आये, वो ही विष को पीना पड़ता है। उसको कंठ की शोभा बनाना होता है।

हवे तो दोस्तो भेगा मळी वहेंचीने पी नाखो,
जगतनां झेर पीवाने हवे शंकर नहीं आवे।

अपनी-अपनी विषम परिस्थिति अपने को ही पीनी पड़ेगी। तो वो है 'मानस'-महादेव के नीलकंठ की नीलिमा।

तो मेरी दृष्टि में 'मानस' स्वयं शंकर है। इसलिए हम 'मानस' में रही सत्ताईस घटनाओं का महिम्नगान कर रहे हैं। उसमें पहला जो महिमागान है, 'सत संगति महिमा नहिं गोई।' उद्घाटन यहीं से हो रहा है। आप 'बालकांड' का आरंभ करे, उसमें ये बात करते हैं, सबसे बड़ी महिमा सत्संग की है। जगद्गुरु शंकराचार्य अपने अद्भुत ग्रंथ में कहते हैं कि जगत में तीन वस्तु दुर्लभ है-मनुष्यजन्म, मनुष्यता और सद्पुरुषों का संग।

तो सत्संग महिमावंत है। सत्संग याने मैं कथा कहूं, आप सुनो ये अच्छी बात है, लेकिन सत्संग का अर्थ है, जहां सत्य हो उसका संग करना। भले कोई बात न हो, चर्चा न हो, चलेगा। सत् का संग करना। सत्य को गाना अच्छा है, सद्वार्ता अच्छी वस्तु है, लेकिन सत्संग का मूल अर्थ है सत्य के संगी हो जाना। सत्संग की महिमा गुप्त नहीं है। जिसने सत्संग किया वो क्या से क्या हो गए! तो सत्संग का महिम्नस्तोत्र रचा, भले एक पंक्ति में।

बिधि हरिहर कबि कोबिद बानी।
कहत साधु महिमा सकुचानी।।

सत्ताईस तत्त्वों का गान 'मानस' में हुआ, उसमें दूसरा महिमागान है साधुमहिमा। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों की बानी साधु की महिमा गाने में असफल रहती है। दूसरा 'साधुमहिम्न स्तोत्र' उठाया तुलसी ने। तो जिसकी आंख में शिकारभाव न हो, पूजारीभाव हो; जिसकी वाणी में प्रियसत्य हो; वरना श्रेष्ठवाणी है मौन। जिसके जीवन के व्यवहार में भारतीय शास्त्रों का अनुसरण हो। ओशो कहते थे, सद्गुरु शास्त्र का पुनर्जन्म है। शास्त्र जीवंत होकर हमारे बीच में घूमता है। कभी शंकराचार्य घूमे होंगे; तब शायद तत्कालीन समाज न पहचान पाए! कृष्ण को भी कौन पहचान पाया था? जीवंत-बुद्धपुरुष की बात है। तो जिसके आचरण में जीवंत शास्त्रों का अनुसरण हो, वास्तविक और प्रेक्टिकल अनुसरण हो ये साधु का लक्षण है। स्वामी रामसुखदासजी साधु का एक लक्षण बताते हुए बोलते हैं कि साधु उसको समझना जो अपने लिए न खाए; तुम्हारी प्रसन्नता के लिए खाए वो साधु है। उसको नहीं खाना होगा तो भी ज्यादा खा लेगा क्योंकि तुम्हारे मन को भरना है, खुद का पेट नहीं भरना है। जो खुद के लिए नहीं, जमाने के लिए जीए वो साधु है। किसी के जीवन में बाधक न बने वो साधु है। सच्चे साधु ने किसी को खलेल पहुंचाई हो ऐसा इतिहास में नहीं बना।

तो साधु की परिभाषा अनंत है। 'अरण्यकांड' के समापन में नारदजी ने जब पूछा कि भगवन्, मुझे साधु की व्याख्या बताओ, तब भगवान ने वहां कुछ लक्षण तो बताएं लेकिन बताते-बताते राम रुक गये और बोले, 'कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पद पंकज गहे।' मैं क्या, सहस्रशिश शेष और सरस्वती भी साधु की महिमा का गान नहीं कर सकती। नारद भगवान के चरणों में गिर पड़े। सत्ताईस तत्त्वों की महिमा का गायन हुआ है। इनमें सत्संग से आरंभ होता है। साधुता का गायन हुआ है। क्रमश: नव दिन में हम जितना ले पाएं इतनी महिमावंत तत्त्वों की चर्चा करेंगे। ये है मेरी समझ में 'मानस-महिम्न।'

मेरी दृष्टि में 'मानस' स्वयं महादेव है। 'मानस'रूपी महादेव की गंगा है अविरत बहती चौपाईयां। धीरे-धीरे चौपाईयां बहती ही रहती है। 'मानस' में बीच-बीच में आते हैं वे सोरठे है त्रिपुंड। सत्य, प्रेम, करुणा ये महादेव की तीन आंखें है। सत्य दायीं आंख है। प्रेम मध्य में और करुणा बायीं आंख है। तलगाजरडा की दृष्टि में 'मानस' के दोहे शंकर की जटा है। 'मानस' का संस्कृत का एक-एक श्लोक भालचंद्र है। 'मानस' के श्लोक चंद्रबिंब है। छंद है भुजंग। 'मानस'रूपी शंकर का विष क्या है? शंकर वो है जो जीवन में आनेवाली विषम परिस्थिति का विष कंठ में धारण करे। अपनी-अपनी विषम परिस्थिति का विष अपने को ही पीना पड़ेगा। तो वो है 'मानस'-महादेव के नीलकंठ की नीलिमा।

रामनाम कलियुग का कल्पतरु है

'महिम्नस्तोत्र' में लिखा है कि श्रेष्ठ कला, विद्या जिसके पास है, उसमें यदि कोई कमियां है तो वो भी सराहनीय है, निंदनीय नहीं है। मैं नहीं बोलता, गंधर्वराज पुष्पदंत बोल रहा है।

विकारोऽपि श्लाध्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः।

श्रेष्ठ में यदि कोई विकृति भी है तो भी सराहनीय है, निंदनीय नहीं। शंकर में कितने विकार है, देखो! सकल कला और गुण के धाम है, उनमें भी कमजोरियां पुष्पदंत ने भी दिखाई लेकिन शिव आराधनीय है। मेरे देश की किसी भी विद्या का उपासक, यदि आपको लगे कि उसका स्वभाव ठीक नहीं है। नहीं, ये देखो ही मत; उसकी कला को वंदन करो। शंकर के गले में विष है, मंगल वस्तु नहीं है; अमंगल है। पुष्पदंत कहता है, तेरे गले में जो कालापन है वो कल्मष है लेकिन तेरे गले में है इसीलिए परम मंगलमय है। हे विद्या के उपासक, तू स्पष्ट वक्ता है; सच बोल देता है; किसी को अपमान लगे इसको हम नहीं देखेंगे; हम तो देखेंगे, तेरा कंठ कितना सुंदर दिया है! हे गायक, तू कितना अच्छा लगता है! और आदमी अच्छे कर्मों से ही अच्छा लगता है; जिसके कर्म अच्छे न हो वो अच्छा है ही नहीं।

सौंदर्य पामतां पहेलां सौन्दर्य बनवुं पडे।

सौंदर्य मिलने से पहले सुंदर बनना पड़ता है। तो बाप! शिव के गले की कालिमा भी सौंदर्य बन गई। शिव के पास जितने तत्त्व है, कोई मंगल नहीं है; सब अमंगल है। पुष्पदंत कहता है, मैं तो केवल बता रहा हूं। सहजता से जीओ; जो भी हममें है वो है। किसी की नकल न करो। मैंने सुना कि राहत साहब की तरह कोई युवान गज़ल पेश कर रहा था और राहत साहब बैठे थे, तो राहत साहब ने ये देखा। राहत साहब की अपनी अदा है। सबकी गज़ब तरह की प्रस्तुति होती है। वो युवान तालियां बटोरने के लिए उन्हींकी अदा में बोलने लगा शेर; बड़े लोग तो खुश होते है ना! कल झाकीर कितना खुश हो रहा था! कोई खानदानी तो इस आदमी से सीखे! उसकी ऊंगलियां तबला नहीं बजा रही थी, तबला ऊंगलियों को बजा रहा था! कहने का मतलब, भगवान शिव कितनी-कितनी अमंगल वस्तुओं को लिए बैठे हैं और पुष्पदंत ने उसकी आलोचना की

है। बड़ों की कमज़ोरियों को न देखी जाए; विद्यावान की कमज़ोरियां न देखी जाए; कला की कमज़ोरियां न देखी जाए। आदमी में कमज़ोरियां होती है, विद्या देखो, कला देखो। तो राहत साहब अपनी नकल होती देखकर मुस्कुरा रहे थे, हद तो तब हो गई, इंदौरी साहब ने कहा, 'बेटा, तू सब मेरी तरह बोल रहा है, बहुत धन्यवाद। दुआ देता हूं, लेकिन मेरे जैसे होने के लिए तुझे मुंह काला करना पड़ेगा!' दोनों अर्थ में राहत साहब बोल गए! क्योंकि उनका वर्ण भी सांवरा है। और मुंह काला करना पड़ता है ये दूसरे संदर्भ में कहा है। अब पुष्पदंत शिव की कमज़ोरियां बता रहे हैं-

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि।।

इसमें शंकर के पास कोई वस्तु शुभ है? स्मशान में निरंतर रहना शुभ नहीं माना जाता साहब! जिसको हम ले जाते हैं उसकी चेतना भी दूसरी बोडी में चली जाती है अथवा तो निर्वाण होती है। परमात्मा जाने, जो होता हो! वो जलाने जाते हैं वो भी बाद में चले आते हैं। कोई सदा स्मशान में नहीं रहता; मेरा भोला ही रहता है। अमंगल माना गया है स्मशान। उसीमें ये क्रीड़ा करते हैं, शुभ नहीं है।

'स्मरहर' याने शिव। 'स्मर' याने कामदेव को हरनेवाला। भूत, प्रेत और पिशाच उनके सहचर है। जो भूतप्रेत को साथ में रखे, कितना अमंगल दृश्य होगा! हमारे भगत बापू का एक दोहा है, 'भेळां राखे भूत, कैलासवाळो कागडा।' कैलासवाळा भूतप्रेत साथ में रखता है। भूतप्रेत मंगल नहीं है। चिता की भस्म का लेपन मंगल नहीं है। मनुष्य की खोपड़ी की माला अमंगल है। और चुकादा देता है पुष्पदंत, 'अमंगल्यं शीलं।' यहां शील का अर्थ है स्वभाव; जिसका स्वभाव अमंगल दिखता है, वेश अमंगल दिखता है; ये सब अभद्रता है। फिर भी तेरा जो स्मरण करेगा, उसके लिए तुम 'वरद परमं मंगलमसि।' सदा मंगल है। जो सकल कला के धाम महादेव है, उसमें कई कमज़ोरियां पुष्पदंत ने दिखाई। भांग पीता है। 'महिम्नस्तोत्र' में तो कहा है, तू भांग नहीं पीता; नशेवाले पदार्थों का सेवन नहीं करता; तेरा व्यसन है, 'भुवनभयभंगव्यसनिनः।' ये अर्थ मैंने सबसे पहले सुना था ब्रह्मलीन डोंगरेबापा से। संसार का भय मिटे उसी का जिसको व्यसन है। दो-पांच लोगों का कष्ट दूर न करे तब तक उसका दिन नहीं गुज़रता। तो चारों और अमंगल है, लेकिन 'वरद परमं मंगलमसि।' तू सदा मंगल है। ये पर्वत के गड्ढे हैं, जमीन से बहुत ऊंचे हैं। अपनी विद्या में कुशल लोग कोई कमज़ोरी भी हो तो भी हमसे ऊंचे हैं। उनकी ऊंचाई को देखो, उनकी विद्या को देखो। मेरा तुलसी क्या लिखता है? मुझे आखिर तो यहां पूछना पड़ता है।

नाम प्रसाद संभु अबिनासी।
साज अमंगल मंगल रासी।।

सीधा पुष्पदंत का अनुवाद है-

अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि।।

सांप पहने हैं; भस्म लगाई है; विष रखा है। क्या अमंगल साज़ है! तू सब अमंगल चीज़ रखता है लेकिन मंगल की खदान है। तो बाप! किसी में भी कोई कला, विद्या देखो तो 'विकारोऽपि श्लाध्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः।' उसके मूल को देखो। कमज़ोरियां कहां नहीं होती? तो बाप! कल सायं संध्या में बहुत आनंद आया। आज सायं संध्या में भी बहुत आनंद आएगा और श्रावण महीने का श्रवण-श्रावणी जो है उसका लाभ उठायेंगे।

तो ये थी भूमिका। अब कथा शुरू होगी साहब! लेकिन ओशो की एक प्रवचन श्रेणी थी उसमें कहा था, 'जो बोले सो हरिकथा, भजन कहे निःकाम।' जो भी बोला जाए वो हरिकथा है, 'स्तोत्राणि सर्वांगिरो।' शंकराचार्य कहते हैं, जो भी तुम बोलो वो स्तोत्र बन जाए तब समझना तुम्हारे भीतर परमेश्वर बोल रहा है। तो बाप! 'मानस-महिम्न' तीसरे दिन का अब शुरू हो रहा है।

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः।।

गंधर्वराज पुष्पदंत गाता है कि मन और वाणी से तेरा महिमा न गाया जाता है, न सोचा जाता है। ऐसे शिवमहिमा के इन पावन दिनों में हम 'मानस' को शिव समझकर 'मानस' अंतर्गत सत्ताईस तत्त्वों की महिमा का गायन किया है, उसी का कुछ ओर सात्त्विक-तात्त्विक दर्शन करें। कल हम चर्चा कर रहे थे, 'सतसंगति महिमा नहिं गोई।' सत्संग की महिमा और-

बिधि हरिहर कबि कोबिद बानी।
कहत साधु महिमा सकुचानी।

अब तीसरी महिमा का गायन जो है, उसमें नाम प्रधान है।

महिमा जासु जान गनराऊ।
प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ।।

ये नाममहिम्न है, परमात्मा के पवित्र नाम की महिमा। तुलसीजी कहते हैं, नाम की महिमा जितना गणेश जानता है, कौन ओर जानता है? गणेशजी ने नाम की महिमा जानी तो विश्व में उनकी प्रथम पूजा होने लगी। बाप! नाम-महिमा गज़ब है! सतजुग में ध्यान की महिमा थी। त्रेतायुग में यज्ञयाग की प्रधानता रही। बड़े-बड़े यज्ञ होते थे। द्वापरयुग में लोग वैष्णवी पद्धति से घंटों तक पूजन-अर्चन करते थे; ये भी एक रीत है। कोई भी रीत की आलोचना मत करना। कलियुग में केवल परमात्मा के नाम की महिमा है। इसका मतलब ये नहीं कि कलियुग में लोग ध्यान न करे। कई लोग ध्यान कराते हैं; बहुत अच्छी पद्धति है। तो ध्यान की बड़ी महिमा है। यज्ञयाग करो ये भी अच्छा है, करो। लेकिन आज कलियुग में कहां इतना कर सकते हैं? घंटों तक हम व्यस्त है। कहां इतनी पूजा-अर्चा करे? इसीलिए तुलसी ने कहा, कलि में केवल नाम की महिमा है। जो नाम में आपकी रुचि हो; राम, कृष्ण, शिव, अल्लाह, खुदा, माँ कोई भी। ठाकुर तो 'माँ-माँ' गाते ही समाधि में चले जाते थे। केवल नाम से उनको समाधि लगती थी, जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं 'देव्यपराधक्षमापनस्तोत्र' में, मेरी अंतिम इच्छा ये है कि 'शिव शिव भवानीति जपतः।' मैं निरंतर शिव-भवानी जपता रहूं। अद्वैतवादी शंकर और ये कहते हैं। रावण ने 'शिवतांडव स्तोत्र' में कहा कि मेरे लिए अच्छे दिन कब आएंगे? वो कहता है, गिरि की कंदराओं में मैं बैठा हूं अकेला और हाथ की अंजलि जोड़कर मैं 'शिव-शिव' का आराधन करूं ये मेरे जीवन में कब आएगा?

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुंजकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरः स्थमंजलिं वहन्।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्।।

आखिर में नाम ही है साहब! नाम से बड़ा कुछ नहीं है। तो तुलसी ने यहां जो तीसरे तत्त्व की महिमा गाई, वो नाम-महिमा गाई। बड़ा लंबा प्रकरण है। नाम के प्रताप से शंकर 'साज अमंगल मंगल रासी।' नाम की महिमा में बड़े-बड़े सिद्ध लोग, योगी लोग ब्रह्मसुख का भोग कर लेते हैं। प्रह्लाद ने नाम का आश्रय किया तो-

नारद जानेउ नाम प्रतापू।
जग प्रिय हरि हरिहर प्रिय आपू।।

नारद ने नाम के प्रताप को जाना। जगत को हरि प्रिय है लेकिन हरि को कौन प्रिय है? हरि को हर प्रिय है। विष्णु को शंकर प्रिय है और नारद दोनों को प्रिय है नाम के प्रताप से। नाम महिम्न गाते तुलसी कहते हैं, ध्रुव को पिता ने गोद में नहीं बैठने दिया और ग्लानि से भर गया और नाम का आश्रय किया तो एक ध्रुवता प्राप्त कर ली। ध्रुव तारक अचल है।

सुमिरि पवनसुत पावन नामू।
अपने बस करि राखे रामू।।

पवनपुत्र हनुमानजी ने नाम के सुमिरन से पूरे जगत को जो बस करता है, ऐसे परमात्मा को अपने बस में कर लिया।

नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु।
जो सुमिरत भयो भांग ते तुलसी तुलसीदासु।।

रामनाम कलियुग का कल्पतरु है। ये व्याख्या नहीं है। केवल रामनाम दादा ने मुझे दिया, मेरे लिए कल्पतरु सिद्ध हो गया। ये अभिमान नहीं है, आपकी दुआ है। करीब-करीब जो चाहो वो हो जाए; जो मनोरथ करो वो पूर्ण हो जाए। मैं अनुभव कर रहा हूं। हमारे पास है क्या? केवल रामनाम। और इतना बहुत है कि कभी थोड़ा होनेवाला नहीं है।

हमारे सौराष्ट्र युनिवर्सिटी राजकोट में अभी मेघाणी और हेमुभाई गढवी का अवोर्ड जो प्रतिवर्ष देते हैं वो कार्यक्रम था। तो मैंने हृदय से कहा कि कई लोग कहते हैं कि बापू हमसे सीखते हैं और फिर बोलते हैं! ये बेईमानी है! मैं कुछ सीखता हूं तो स्वान्तः सुख के लिए। मेरे पास रामनाम है। मेरा कोई सीखने का शेष नहीं है। ये मेरा सौराष्ट्र युनिवर्सिटी का वक्तव्य है। पत्थर का कोई लक्षण नहीं कि पानी में तैरे; आश्रय करे उसे भी डूबो दे! और बंदर इतनी चंचल जात है कि सेतु बना ही नहीं पाते। और समुद्र भी तरंगायित रहता है, उस पर सेतु कैसे बने? न समंदर का करिश्मा है, न बंदरों का प्रभाव है, न पत्थरों का स्वभाव है। तो तुलसी ने कहा, 'श्री रघुबीर प्रताप ते सिंधु तरे पाषान।' ये सेतु रामनाम का प्रताप है।

हम सब क्यों इतने जुड़े हुए हैं? इतने विद्या के उपासक केवल महोब्बत के कारण क्यों आते हैं? मैं फिर एक बार कहूं, सब व्यस्त है अपने कार्यक्रमों में। ये कौन इकठ्ठा कर रहा है? ये रामनाम का प्रताप है। किसी हिन्दीभाषी ने चिठ्ठी लिखी है, 'बापू, आप बचपन से कथा

कहने लगे हैं तो आपने जीवन में क्या-क्या काम किया है?' ये पूछो कि क्या-क्या नहीं किया है? मैंने सुथार का काम भी किया है याने मैं तुलसी के काष्ठ लेकर मालाएं बनाता था। हमारे पास लाला लोहार रहता था। वो तपे हुए लोहे पर ओजार मारते थे; मुझे दया आती तो लालो भाई अकेले हो तब मैं वहां जाता और वो लोहा हाथ में रखे और मैं ओजार मारूं। तो मैंने ये लोहार काम किया है। मैंने मज़दूरी भी की है। माँ ना कहती थी। ज़रूरत थी घर में तब मैं प्याज निकालने की मज़दूरी करता था। आधा दिन गया तो माँ दौड़कर आई, कुछ नहीं चाहिए, घर वापिस आ जा!

मैंने खेती काम भी किया है। भवान नागजी की वाडी, जहां स्नान करने जाता था तब उसका कोश भी चलाया है। रामजी मंदिर के नलिये उतारें तब पचीस पैसे मिले। और भवान राजा रामजी मंदिर की गली में रहे वो साधु के बच्चों को पचीस पैसे दे तब रामजी मंदिर के नलिये उतारने का काम भी मैंने किया है। फिर शिक्षक की डिग्री प्राप्त की। हाथों से क्लीन सेव करता, तो नाई का काम भी किया है। वो स्वर्णिम बचपना था! अभाव की भी एक संपदा होती है, यदि कोई जीने की कला सीख ले तो। आज की सब सुविधा मुझे तुच्छ लगती है। तो नाई-काम किया है। शाहपुर में पी.टी.सी. की तालीम लेने गया तब शौचालय भी साफ़ किए हैं मैंने गांधीविचार के अनुसार। खादी को बुनी है मैंने; हमारा ये विषय भी आता और उसके गुण भी मिलते थे क्योंकि संस्था गांधीवादी थी। रतुभाई अदाणी, अकबरभाई नागोरी, मदीनाबहन नागोरी सर्वोदय और गांधीप्रभावितों की संस्था थी। तो सबकुछ किया है, साहब!

तो मेरे कहने का मतलब केवल रामनाम का प्रताप है कि हम सब इकठ्ठे हुए हैं। रामनाम के प्रताप से ये परिवार तिजोरी खोलकर बैठा है कि सब प्रसन्न रहे। ये ('मानस') कल्पतरु है; जो संकल्प करो तो प्रभु किसी को निमित्त बनाकर पूर्ण करता है। रामनाम कल्याण का निवास है। जिस रामनाम का सिमरन करते हुए तुलसी अपना अनुभव कहते हैं कि मैं भांग जैसा पौधा एक नशा चढ़ा दे ऐसा निम्न प्रकार था लेकिन नाम के प्रताप से तुलसी का पौधा बन गया, तुलसीदास बन गया। हे याज्ञवल्क्य महाराज, मुझे वो राम की महिमा सुनाओ। जिस रामनाम का उपदेश काशी में बैठकर कृपा करके जीवमात्र को मुक्ति दे दे। तो रामनाम की महिमा अतुलनीय है।

कहौं कहां लगि नाम बड़ाई।
रामु न सकहिं नाम गुन गाई।।

यहां रामनाम की महिमा है, इसका मतलब ये नहीं कि केवल राम; तुम्हारा जो इष्ट हो उस नाम की बड़ी महिमा है। एक ही बात है, कोई अल्लाह-अल्लाह करे, क्या फ़र्क पड़ता है? कोई अलीमौला कहे, कोई हरिबोल कहे, क्या फ़र्क पड़ता है? यहां तो सबका स्वीकार है। नाम याने आपकी रुचि और स्वभाव के अनुकूल हो उसी का नाम। नाम की महिमा अतुलनीय है।

कबीरा कुआ एक है, पनिहारी अनेक।
बरतन सब न्यारे भए पानी सबमें एक।

पुष्पदंत भी कहते हैं-

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति।
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां।

'एकोऽहं बहुस्यां।' तो कलियुग में नाम की महिमा है, जो नाम में आपकी रुचि हो। ओर साधन थकानेवाले हैं, रामनाम विश्राम देता है, ऐसा 'विनयपत्रिका' में लिखा है-

नाहिंन आवत आन भरोसो।
यहि कलिकाल सकल साधन तरु
है स्रम-फलनि फरो सो।।

तो 'मानस' में रामनाम की बहुत महिमा है। फिर आगे माँ दुर्गा की, माँ पार्वती की महिमा तुलसी ने गाई। पार्वती को ऐसा वर मिलेगा ये सब सुनकर सब दुःखी हो गए तब वेदशिरा नामक महात्मा हिमालय के घर आये और कहा कि तुम्हें जगदंबा की महिमा का पता ही नहीं। जगदंबा की बड़ी महिमा है। आदमी कुछ न करे, केवल एक कमरे में बैठकर आंख में आंसू भर जाए और 'माँ-माँ' करे। भावनगर के ईशरदान जब भी आए, माताजी की स्तुति वो गाते थे और मैं खास गवाता था उनसे और वो गाए। उसकी अनुभूति वो जाने लेकिन मैं कहता था, आप जो जगदंबा की स्तुति गाते हैं वो किसी मंदिर में जाकर पांच मिनट गाओ तो माँ उत्तर दे। माँ की महिमा गज़ब है! इसलिए-

सोनलमा आभ कपाळी,
भजां तने भेळियावाळी।
ऊगमणा ओरडावाळी,
भजां तने भेळियावाळी।

●

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

'रामचरितमानस' में पार्वती की महिमा गाते हुए तुलसी ने भवानी के दो रूप प्रस्तुत किए। एक जगदंबा का रूप है सती। एक रूप है बुद्धि, मति। 'आत्मा त्वं गिरिजामति।' मति एक रूप है, जो सती के रूप में प्रगट हुआ। दूसरा रूप है, 'भवानीशंङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।' श्रद्धा ये उनका दूसरा रूप है। मति के रूप में पार्वती दक्षकन्या है और श्रद्धा के रूप में वो शिव की धर्मपत्नी है।

तो ये सत्ताईस तत्त्व जो है 'मानस' के जिसका महिमागान तुलसी ने किया है, उसमें ज्यादा से ज्यादा दो तत्त्वों की महिमा गाई। नाम की महिमा तो है ही। और शिव की महिमा का अद्‌भुत वर्णन है, इसीलिए तो याज्ञवल्क्य महाराज ने रामचरित्र को प्रधानता देने से पहले शिवकथा कही। तो बाप! 'मानस-महिम्न', उसमें सत्ताईस तत्त्वों की महिमा का गान है जो क्रमशः या क्रम में न भी आए, स्मृति में आए ऐसे बोलता जाऊंगा। शेष जो भाग है, इसमें कथा का क्रम लूं, इससे पहले आपके कुछ प्रश्न है। दिला ने बसीम बरेलवी साहब की गज़ल लिखकर दी है-

दरिया का सारा नशा ऊतरता चला गया।
मुझको डुबोया और मैं ऊभरता चला गया।
वो पैरवी तो झूठ की करता चला गया।
लेकिन उसका चेहरा ऊतरता चला गया।

अतुल साहब की एक गज़ल है-

फ़कीरों का कोई घर न जमीन होती है।
दिन गुज़रता है कहीं, रात कहीं होती है।

एक अच्छा प्रश्न है, 'बापू, मारीच सोने का मृग हुआ था कि कपटमृग?' हम कहते हैं कि मारीच स्वर्णमृग बनाया गया और हुआ भी 'होहु कपट मृग तुम्ह छलकारी।' रावण उसे कहता है, तू कपटमृग हो जा। तुलसी भी 'मायामृग पाछें सो धावा।' यहां 'मायामृग' शब्द रख दिया। हां, ज़रूर सोने का था, जब मारीच कपटमृग हुआ तो तुलसी लिखते हैं, उसका देह स्वर्ण का हुआ उसमें मणि लगे हुए थे। रावण ने मारीच को मृग बनने को क्यों कहा? केवल जानकी को आकर्षित करना था। सुंदर चमड़ा देखकर माँ जानकी लोभित हो जाती है कि हे प्रभु, इस मृग को मारकर चमड़ा ला दो।

तो रावण ओर भी कुछ बना सकता था। मृग ही क्यों बनाया? ये प्रश्न बड़ा महत्त्व का है। मैं सोचूं तो ये भी इसके उत्तर में कह सकता हूं कि रावण मारीच को अच्छा कुत्ता भी बना सकता था अथवा कोई भी पशु का चमड़ा धारण करवा सकता था। गुजराती में हिरन को हरण कहते हैं। यहां मारीच और रावण की मनोवैज्ञानिक पद्धति से थोड़ा साम्य है। रावण मारीच को इसीलिए हरण बनाता है ताकि रावण को सीता का हरण करना था। ये एक सामान्य अर्थ निकला। दूसरा अर्थ, रावण और मारीच में साम्य ये भी है कि जो आदमी सोने की लंका में रहता है उसे जो भी बनाना होता है वो सोने का बनाने की ही जिद्द करता है। इसीलिए स्वर्णमृग की योजना बनी; हो सकता है। एक साधु का मत ये है कि एक साम्य ये है कि रावण जानता है कि मृग की नाभि में कस्तूरी होती है। रावण जानता है कि मारीच हिरन बने तो उसकी नाभि में कस्तूरी हो। और रावण को पता है कि उसकी नाभि में अमृत है। ये मनोवैज्ञानिक जोड़ है। रावण की नाभि में अमृत है ये विभीषण जानता था और मृग की नाभि में कस्तूरी होती है ये रावण जानता था। जब मारीच पंचवटी में आता है तो अभंग प्रीत लेकर आता है।

कीरति बिधु तुम्ह कीन्ह अनूपा।
जहँ बस राम पेम मृगरूपा।

भरद्वाजजी के वचन है। भरत की महिमा गाते हुए वो बोले हैं, कीर्तिरूपी चंद्रमाँ को आपने निरुपम बना दिया, क्योंकि चंद्रमाँ के समान कीर्ति बनी है आपकी। और भरत की कीर्तिरूपी चंद्र में राम का प्रेम मृग है। एक साधु को लगता है, ये स्वर्णमृग नहीं था, ये प्रेममृग था। और प्रेम सोना जैसा ही होता है। इसीलिए प्रेममृग कहो अथवा स्वर्णमृग कहो। कहा जाता है कि कस्तूरी मृग की नाभि में होती है और वो मृग चारो और खोजता है कि गंध कहां से आती है? जिसकी नाभि में कस्तूरी होती है उसको खबर नहीं होती। रावण को खबर थी। इत्र की खुश्बू इत्र लगानेवाले को न भी आए लेकिन उसे पता तो है कि मैंने माला में इत्र लगाया है।

तो हमारे यहां कहा जाता है कि मृग को गंध आती है तो बेचारा दौड़ता है कि गंध कहां से आती है? कबीर साहब ने कितने अच्छे अंदाज़ में ये बात पेश की! लेकिन एक साधु को कुछ ओर बात कहनी है कि ये मृग क्यों दौड़ता है? उसको पता है कि मेरे में कस्तूरी बसी है लेकिन ये प्रेममृग है तो उसको तो पता है कि मेरे में प्रेम भरा हुआ है, चारो ओर दौड़ता इसलिए है कि मैं जितना प्रेम बांटू। जिसके पास होता है वो बांटे बिना नहीं रहता; देना ही पड़ता है। तो बांटने के लिए वो इधर-उधर दौड़ता है। कभी दौड़कर निकट आता है, कभी दूर चला जाता है। सुभाषितकार कहते हैं, 'असंभवो हेममृगस्य जन्मं।' सोने का मृग असंभव है। विनाश काल में बुद्धि बिगड़ जाती है, ऐसा एक आक्षेप भी हो गया। ये प्रेममृग है इसीलिए दौड़ता है।

भगवान राम ये सब जानते थे; उसकी युक्ति थी; फिर भी भगवान ने सीता का क्या हो उसकी जरा भी चिंता किए बिना सोचा, कोई प्रेमी इतना कूदता-उछलता मेरे पास आता हो तब मुझे घर की चिंता नहीं करनी है, मैं उसके पीछे दौडूं। परमात्मा उनके पीछे दौड़ते हैं। मारीच प्रेमी है; उछल-कूद करता है। प्रेम नचाएगा, गवाएगा। तो ये प्रेममृग है। फिर तो कथा आप जानते हैं कि भगवान ने निर्वाण दे दिया और भगवान लौटे। उस मृग का चर्म लाना था तो ले आए। लक्ष्मणजी को प्रभु ने कहा, तू क्यों पीछे आया? सीता को पंचवटी में नहीं देखा तो भगवान विकल हो गए! लक्ष्मणजी ने कह दिया कि प्रभु, अब मृगचर्म की कोई ज़रूरत नहीं है, अब फैंक दो। तब ठाकुरजी ने कहा, ये मृगछाल साथ में रखो। ये प्रेमी की मृगछाल है; जब ज़रूरत पड़ेगी तो लंका में बैठने का होगा तब ये मृगछाल बिछा देना; उस पर बैठकर इस प्रेमी की स्मृति का अनुसंधान करूंगा। भगवान राम ने मृगछाल ले ली साथ में और भगवान ने उस पर विश्राम भी किया।

तो मेरी समझ में पक्का है कि स्वर्णमृग यानी प्रेममृग। आप देहातों में रहे होंगे तो आपने देखा होगा; मेरा तो अनुभव है। तलगाजरडा में जहां रहे हैं हम। तो पुराना घर था उस पर हिरन का सींग हम रखते थे। तो मैं कभी-कभी माँ को पूछुं कि माँ, ये हिरन का सींग क्यों? तो बोले, बेटा, जिस छत में हिरन का सींग होता है वहां सांप नहीं आता। मुद्दा इतना ही कि जिसके शरीर में प्रेम हो वहां दुर्गुण, विषय, कल्मष नहीं आते। तो मारीच की जो कथा आपने पूछी उसमें एक साधु को ऐसा लगता है कि ये घटना घट सकती है। कस्तूरी और अमृत दोनों का केन्द्र नाभि है।

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

हनुमानजी की हमने वंदना की थी। उसके बाद गोस्वामीजी ने राम के माता-पिता की वंदना की। फिर जनकजी की महिमा गाई। भरत, शत्रुघ्न, लखन ये सबकी वंदना के रूप में महिमा गाई गई। उसके बीच में हनुमानजी की महिमा गाई गई, जिसे पहले दिन गाई वहां कथा रुकी थी। उसके बाद भगवान के सहयोगी की वंदना 'मानस' में क्रम में आई। सीतारामजी की वंदना गोस्वामीजी ने की। माँ जानकी की वंदना की 'मातृदेवो भव।' उसके बाद 'पितृदेवो भव।' भगवान राम की वंदना। फिर दोनों के अभिन्न रूप की वंदना की। उसके बाद परमात्मा के नाम की महिमा गाई। नाम-महिमा के अंत में कह दिया, परमात्मा के नाम की महिमा कहां तक गाई जाए? स्वयं राम भी नहीं गा सकते।

तो नामवंदना की। उसके बाद थोड़ा कथा का इतिहास दिखाया। उसके बाद 'मानस' सर के चार घाट बताए, जिसकी व्याख्या भी पंडित रामकिंकरजी से पहली बार पाई है। 'मानस' के चार घाट है। एक रूपक बनाया। ज्ञानघाट, उपासनाघाट, कर्मघाट, प्रपत्ति का घाट। चार आचार्यों की बात कही। शरणागति के घाट से तुलसी ने कथा का आरंभ किया। लोग कहते हैं, शरणागति के बाद कुछ करना नहीं। पूर्ण शरणागति के बाद कुछ नहीं करना, सब होता है। हम जैसे पूर्ण शरणागति नहीं कर पाते। तुलसी ने कहा, शरणागति के घाट पर आप बैठे हो तो भी कर्म का घाट चुकना मत। इसीलिए भरद्वाजजी के आश्रम से कथा प्रारंभ की। शरणागति याने प्रमाद नहीं; प्रमाद तो मृत्यु है। सच्ची शरणागति आदमी को सच्चे काम में जोड़ती है।

एक बार के प्रयागकुंभ में कल्पवास करके महात्मा बिदा होने लगे तब परमविवेकी भरद्वाजजी ने याज्ञवल्क्य के चरण पकड़कर रोक लिया और जिज्ञासा की कि महाराज, आपके हाथ में सब वेदों के तत्त्व है; आप मेरी एक जिज्ञासा को सुलझाओ कि रामतत्त्व क्या है? याज्ञवल्क्यजी श्रोता की जिज्ञासा सुनकर मुस्कुराए, प्रसन्नता व्यक्त की और रामकथा की महिमा का गान किया। फिर रामकथा का आरंभ किया शिवमहिमा की कथा से। शिवचरित्र की चर्चा हम कल करेंगे।

रामनाम कलियुग का कल्पतरु है। ये व्याख्या नहीं है। केवल रामनाम दादा ने मुझे दिया, मेरे लिए कल्पतरु सिद्ध हो गया। ये अभिमान नहीं है, आपकी दुआ है। करीब-करीब जो चाहो वो हो जाए; जो मनोरथ करो वो पूर्ण हो जाए। मैं अनुभव कर रहा हूं। हमारे पास है क्या? केवल रामनाम। और इतना बहुत है कि कभी थोड़ा होनेवाला नहीं है।

प्रवाहित जीवन महिमा गानेयोग्य है

मानस-महिम्न : ४

'मानस-महिम्न', जो इस कथा का केन्द्रबिंदु है। अभी आदरणीय बापा ने प्रतिदिन की भांति गत दिन की कथा का सरल अंग्रेजी में सारांश सुनाया। बापा, प्रणाम। कल सायंकाल रमेशभाई के घर हम सब मिले और गुजराती साहित्य के अपनी-अपनी विद्या को लेकर भाई अंकित के सुसंकलन में सबसे पहले आदरणीय नरोत्तम बापा ने भगवान रामानुज का स्मरण कराया; अपने विचार प्रस्तुत किए। उसके बाद भाई जय ने अपने विचार प्रस्तुत किए। आनंद आया। उसके बाद एक के बाद एक हमारी गौरववंती गुजराती भाषा के अपनी-अपनी विधाओं में यशस्वी सभी कविओं ने अपनी दो-दो कवितायें सुना करके हम सबको प्रसन्नता से भर दिया। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

कल हमने बापा को पूछा। मेरे पास बात आई कि स्वातंत्र्य दिन है, राष्ट्रध्वज फ़हराना, राष्ट्रवंदना करनी? मैंने कहा, यहां तो ये होल है, मुझे खबर नहीं। जहां भी कथा होती है, स्वातंत्र्य दिन या तो प्रजासत्ताक दिन जब कथा के बीच में आता है या तो आदि-अंत में आता है तो ध्वजवंदन का कार्यक्रम करीब-करीब हम कर लेते हैं। यहां की बात थी कि होल में फ़हराया जाय कि बाहर? कहीं कोई नियमभंग न हो। तो ये आयोजन आयोजकों के युवा सदस्यों ने किया।

मैं राष्ट्रध्वज को प्रणाम करके यहां आया हूं। फिर बापा ने पूछा कि आप सलामी दोगे? मैंने कहा, सलामी तो देनी ही पड़ती है; आदर और वंदन तो करना ही पड़ता है। बोले, आप फ़हराओगे? मैंने कहा, मैं फ़हरा सकता हूं। लेकिन मेरी इच्छा है, छोटे बच्चें फ़हराये। शायद उसके हाथ ज्यादा पवित्र है। और मेरे देश का राष्ट्रध्वज जिसके ज्यादा पवित्र हाथ हो उसी के द्वारा ही फ़हराना विशेष उचित रहेगा। हां, संविधान का जो नियम है उसके मुताबिक भारत के प्रधानमंत्री लालकिल्ले पर अपने हाथों से राष्ट्रध्वज फ़हराकर राष्ट्र को संबोधन करते हैं। लेकिन मैंने कभी कहा था कि एक नागरिक के रूप में मेरा कोई विचार यदि प्रस्तुत करने की छूट हो तो मैं ये कहूंगा कि राष्ट्रध्वज किसान और जवान के हाथों से फ़हराया

जाय। किसान हमारा पोषण करता है और जवान हमारा रक्षण करता है। ऐसे भी किया जा सकता है। लेकिन नियम है वो तो निभाना ही चाहिए पूरे आदर के साथ। तो आज बड़ा प्यारा दिन और हमारे गजाननजी ने अच्छा मौके पर बजा भी लिया कि 'ये भारत देश है मेरा।' भाव से तीन बार बोलिए-

वंदे मातरम्। वंदे मातरम्। वंदे मातरम्।

और बाप! राष्ट्रध्वज में जो तीन रंग है उसका कई विद्वानों ने अपना-अपना भाष्य किया है। हरा रंग का ये अर्थ; सफेद का ये अर्थ; गेरुआ का ये अर्थ; चक्र का ये अर्थ। मेरी व्यासपीठ को भी कोई व्याख्या करनी है भारत के एक नागरिक के रूप में, तो मैं ये कह सकता हूं कि हमारे राष्ट्रध्वज में जो सफेद रंग है, सत्य का प्रतीक है। सत्य कायम शुभ्र ही होता है। सत्य कायम श्वेत ही होता है। तो मेरी समझ में सत्य का रंग श्वेत है। हमारे यहां राष्ट्र में एक बात आती है कि कोई बात बहुत स्पष्ट रूप में लोकसभा या राष्ट्र में कहीं भी पेश करनी होती है तो वो लोक मांग करते हैं कि श्वेतपत्र निकालो। इसका मतलब है, सत्य उद्घोषित किया जाय।

लाल रंग, गेरुआ रंग ये एक ही वर्ण के हैं। ये जो भगवा रंग है, मेरी दृष्टि में ये प्रेम का रंग है। त्याग का, बलिदान का, शहीदी का, कसुंबल रंग है। तो गेरुआ रंग है वो है प्रेम। और जो हरा रंग है, पूरा राष्ट्र, पूरा विश्व हराभरा रहे ऐसी सद्भावना ये करुणा का रंग है। श्वेत सत्य का रंग। गेरुआ प्रेम का रंग। और हरा करुणा का। बारिश बरसती है, करुणा करती है; धरती करुणा करती है और पूरी धरती हरियाली हो जाती है। केन्द्र में करुणा है। अब प्रश्न ये आयेगा कि चक्र क्या? चक्र के भी बहुत अर्थ है। प्रगति का चक्र माना गया। धर्मचक्र प्रवर्तक के बारे में भी बातें हुई। लेकिन मेरी समझ में ये आता है कि सत्य का, प्रेम का, करुणा का सुदर्शन करना वो ही चक्र है। और इस चक्रवाले का तो आज जनमदिन है। सत्य का सुदर्शन हो। झूठ दर्शन न हो। प्रेम का सच दर्शन हो। और करुणा का सच दर्शन हो, वो सुदर्शन है। सुदर्शन की कोई धर्म मना नहीं करेगा। यही सुदर्शन मेरी व्यक्तिगत समझ में चक्र है। अब रहा दंड। मेरी समझ में दंड है शरणागति। आप कहे कि दंड शरणागति कैसे? दंड तो शायद सज़ा का संकेत करता है; प्रहार का संकेत करता है। दंड दोनों प्रकार की शरणागति कराता है बाप! दंड कभी मजबूरी से शरणागति कराता है। दंड कभी स्वयं महोब्बत के कारण शरणागति कराता है। कोई लाठी लेकर हमें कहे, झुको, वर्ना मार देंगे! तो हमें झुकना पड़ता है। हम पैर पकड़ लेते हैं। वहां मजबूरी है। लेकिन हमारे यहां एक शब्द आया है 'दंडवत् प्रणाम।' जहां प्यार होता है, जहां महोब्बत होती है। श्रीभरतजी चित्रकूट पहुंचे तो धरती पर दंड की तरह गिर पड़े। दंड यहां संन्यासीओं के हाथों में होता है।

दंड है मेरी समझ में महोब्बतभरी शरणागति, राष्ट्रशरणागति, विश्वमंगल के लिए शरणागति ये दंड है। और ये शरणागति में यदि कहीं अकारण बाधा हो तो दंड अपना काम भी कर सकता है। तो दंड ये है शरणागति। शरणागति ठहरी हुई होनी चाहिए। और सत्य-प्रेम-करुणा फ़हरता हुआ चाहिए। ठहरी हुई शरणागति का मतलब है शरणागति व्यभिचारिणी नहीं होनी चाहिए। शरणागति एक की और एक बार ही होती है; भटकती हुई नहीं। उसी को मेरी व्यासपीठ दंड कहेगी। इसी रूप में भी, वैश्विक रूप में भी किसी को पूर्वग्रह न हो तो मुझे नहीं लगता कि ये नकारा जाय।

तो पहले तो कृष्ण की शरणागति कहे। 'गीता' में कृष्ण ने कह दिया समझाते-समझाते कि ले, अब छोड़ता हूं शरणागति। 'यथेच्छसि तथा कुरु।' अब तुझे जो करना है तू कर। उसके बाद जाकर वो कहता है, 'करिष्ये वचनं तव।' आज कृष्ण की याद होना स्वाभाविक है। कौन होगा भारतीय, कौन होगा पूर्वीय संस्कृति का, कौन होगा धरती पर का जीव जिसको कृष्ण ने छूआ न हो? भले आज हम लंडन में बैठे हो लेकिन पुकारा जाय कि कोई जाकर-

हमारो प्रणाम श्री बांके बिहारी को।

कोई हमारा संदेश भेजो। कोई कहो, द्वारिकाधीश, हम दूर माईलों दूर लंडन में बैठकर तुम्हें याद कर रहे हैं।

आ ए ज हशे वृंदावन?
एक समे ज्यां कृष्णराधिका करतां आवन-जावन?
- हरीन्द्र दवे

कितने हम भाग्यवान है, भारत में पैदा हुए हैं। जहां गोविंद प्रगट हुआ। और मैंने एक दिन चर्चा की थी कि आठ

मातृशरीर- नारीचरित्र जो कृष्ण से जुड़े हुए हैं इन आठ देवियों को आज कृष्ण कितना याद आता होगा!

तो बाप! ये सत्य, प्रेम और करुणा, स्थिर शरणागति विश्व में फ़हरती रहे यही मंगल भावना के साथ आज कथा का आरंभ हो रहा है। तो आज बड़ा पावन पर्व है हमारे लिए। आदि सनातन पर्व जन्माष्टमी और सत्तर साल हुए हमारे भारतवर्ष को स्वतंत्र हुए। उसी का भी ये बहुत पावन दिन है। फिर एक बार बहुत-बहुत बधाई। शुभकामनायें।

'मानस-महिम्न', थोड़ा ओर आगे बढ़ें। तो 'रामचरितमानस' में जिन-जिन तत्त्वों की महिमा का गायन हुआ है उनमें एक है नदी। सरयू नदी की महिमा का तुलसी ने गायन किया। नदी की महिमा क्यों गाई गई? भारत में तो विशेषरूप में। नदी अगल-बगल में स्वच्छ हो और भीतर से पवित्र हो। जो इर्दगिर्द में स्वच्छ हो और भीतर पवित्र हो ऐसा कोई भी जीवनप्रवाह महिमा गानेयोग्य है। गंगा बहिर्रूप में हमने प्रदूषित कर डाली है, लेकिन गंगा का आंतरिक पावित्र्य तो अटूट है। हम स्वच्छता अभियान तो चलाते हैं राष्ट्र में; चलता रहना चाहिए, लेकिन फिर भी हमारी मानसिकता स्वच्छता में थोड़ी कमज़ोर रही। जो प्रवाह बहिर् भी स्वच्छ हो और भीतर भी पवित्र हो ये महिमा गानेयोग्य है। और सरजू का जन्मस्थान तो आप जानते हैं, मानसरोवर है। सरजू नदी मानसरोवर से प्रगटी है। सर से प्रगटी है इसीलिए सरजू। ये पवित्र मानस मानी हृदय। मानस का एक अर्थ है हृदय। शंकर का हृदय। जो हृदय से प्रवाह निकले ये कितना पवित्र रहा होगा! बुद्धि का प्रवाह हो सकता है मलिन हो भी। लेकिन हार्दिक प्रवाह ये पवित्र होता है।

तो एक तो नदी का आंतर्-बाह्य पावित्र्य उसकी महिमा गाने के लिए हमें बाध्य करता है। दूसरा, वो बहती रहती है। और वो ही नदी ज्यादा महिमा गानेयोग्य होती है जो किनारों का ध्यान रखे। अत्यंत बाढ़ आने के बाद वो ही नदी विनाशक रौद्र रूप लेती है तब कुछ भीषण रूप लेती है। इसलिए जो किनारों में बहे; जिसका जीवनप्रवाह लोक और वेद दो के बीच बहे। 'लोक बेद दुई मंजुल कुला।' एक लोक-संस्कृति, एक वेद-संस्कृति। एक गार्गी-संस्कृति, एक मार्गी-संस्कृति। जीवन का प्रवाह मार्गी सभ्यता और गार्गी सभ्यता के बीच हो। मार्गी का मतलब लोक। और गार्गी मानी वेद। मैं मान लूं, मुझे कोई आपत्ति नहीं। गार्गी बड़ी बहन है लेकिन मार्गी छोटी बहन तो है। छोटी बहन ज्यादा प्रिय लगती है। ये मैंने दोनों को बहनें बनाई। गार्गी गाती है; उसको तो पाठ-पारायण करना है। मार्गी नाचती है; गायेगी भी लेकिन नाचेगी। गार्गी वेदपाठ करेगी; वेदों के मंत्र गायेगी। गार्गी को वेद के श्लोकों का आहार है। गार्गी पुष्ट होती है वेदमंत्रों से। मार्गी पुष्ट होता है गंगासती के शब्दो में, 'सदाय भजननो आहार।' मार्गी पुष्ट होती है भजन से। गार्गी पुष्ट होती है श्लोकों से। गार्गी को समझ पाये केवल विद्वत्गण; मार्गी जो नहीं समझ पाये उसके घर-घर लौट मांगने के बहाने गई है। भजन घर-घर गया। वेद सीमित हो गया; कुछ लोगों के बीच में रह गये। दोनों पवित्र है; गार्गी-मार्गी दोनों। ऐसा प्रवाह जो इन किनारों को तोड़े ना। दो किनारे एक हो जाएगा तो नदी का प्रवाह रुक जाएगा। ये डेम बन जाएगा।

जीवनपद्धति को प्रवाहित रखने के लिए, ये प्रवाह को अक्षुण्ण रखने के लिए दो किनारों की ज़रूरत होती है। कोई भी प्रवाह किनारे पैदा कर देता है। लेकिन जुड़े रखता है प्रवाह। इसलिए उसकी महिमा गाई जाय। नदी इसलिए महिमावंत है क्योंकि अगल-बगल को हराभरा करती है। जो अपने आसपास के जीवन को धन्य करे ऐसी नदी, ऐसा जीवनप्रवाह महिमा गानेयोग्य है। और ये सब करते-करते अपना लक्ष्य न चूके। कोई भी जीवनपद्धति को, कोई भी प्रवाहित जीवन को अपना लक्ष्य याद रहना चाहिए। और फिर ये भी बात साथ-साथ सुनो कि नदी को खबर ही नहीं कि मुझे समंदर में जाना है। ये तो हमने निर्णय किया है कि बेचारी को समंदर में जाना है। कृष्णमूर्ति का एक वाक्य है, रिक्तता निमंत्रण है। शून्य हमें निमंत्रित करता है। एक गड्ढा होता है तो प्रवाह को निमंत्रित करता है कि पहले मुझे भर। मिट्टी को निमंत्रित करता है कि पानी के साथ मिट्टी भी आये और मैं समथल हो जाऊं। कृष्णमूर्ति का ये वाक्य मुझे प्रिय है, रिक्तता विश्व को निमंत्रण देती है। शून्य निमंत्रण देता है। भरा हुआ आदमी धक्का देता है। उसी में से उपेक्षा आई। जिसने समझा कि मैं भरा हुआ; मैं पंडित हो गया, उसने कुछ लोगों की उपेक्षा कर दी। और सदियों से मेरा देश उसका प्रायश्चित्त कर रहा है।

मैं जब पढ़ता था प्राइमरी स्कूल में तब हमने कुछ छात्रों ने एक टीम बनाई थी तलगाजरडा में और तलगाजरडा की गलियों को हम साफ़ करते थे। शौचालय की बात हुई। हमें आश्रम में वो करना पड़ता था। जिसको आप दलित कहते हो उसका काम भी मोरारि बापू ने किया है। मुझे कुछ कहने का अधिकार है, क्योंकि मैं उसमें से गुज़रा हूं। कोई कितना ही बड़ा वक्ता है, कितना ही बड़ा लेखक है, कितना ही बड़ा कवि है, सर्जक है लेकिन आदमी सत्य से थोड़ा दूर जाता है उसकी वाणी में तत्क्षण मलिनता आ जाती है; वाणी स्खलन हो जाता है।

मेरे श्रोता भाई-बहन, खास करके मेरे युवान फ्लावर्स और नयी-नयी चेतनायें, मैं प्रार्थना करूं, हां, प्रेम करो सबको। बाहु प्रसारे खड़े रहो। ये विश्व जीने जैसा है। विश्व महोब्बत करने जैसा है। हमने कितने की उपेक्षा की! मातृशरीरों की उपेक्षा की! तुम्हें ये अधिकार नहीं! कृष्ण ने किसी को धक्का नहीं दिया। कुब्जा ने निमंत्रण दिया तो वहां रहा। दुर्योधन ने छप्पन भोग तैयार किये थे जब संधि का प्रस्ताव लेकर मेरा गोविंद गया था हस्तिनापुर। जैसे दुर्योधन का भवन निकट आने लगा और कृष्ण की आंखें किसी को खोजने लगी। आंखें खोज रही थी चाचा विदुर को, विदुरानी को। दूर खड़े चाचा विदुर का दर्शन किया। कृष्ण ने आंखों से पूछा।

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें ओर होती है।
- राज कौशिक

चाचा विदुर का दर्शन किया और आंखों ने बात कर ली। सबका स्वीकार।

निषेध कोईनो नहीं, विदाय कोईने नहीं।
हुं शुद्ध आवकार छुं, हुं सर्वनो समास छुं।
- राजेन्द्र शुक्ल

किसी की उपेक्षा नहीं की इस आदमी ने। जहां प्रेम देखा, वहां दौड़ा। कोई विपत्ति में, तो भी दौड़ा; कोई संपत्ति में, तो भी दौड़ा। कोई अपनी गति में, तो भी दौड़ा; कोई दुर्गति में, तो भी दौड़ा। उसकी गति सबकी गति देखकर गतिशील रही। ये है कृष्ण।

तो किसी भी रूप में प्रवाहित जीवन ये महिमा के योग्य है। इसलिए तुलसी सरजू की महिमा करते हैं। लेकिन ये सरजू होनी चाहिए; मानस से निकली होनी चाहिए। और मानस है हृदय। हृदय से जिसका प्रादुर्भाव होता है वो प्रवाह उसका महिम्न करना चाहिए, उसका महिमागान होना चाहिए। इसलिए तुलसी 'मानस' के सत्ताईस तत्त्वों में एक तत्त्व का महिमागान करते हुए सरजू की महिमा गाते हैं। उसके बाद तुलसीदासजी एक पंक्ति में राम के माता-पिता के महिम्नस्तोत्र गा रहे हैं-

जिन्हहि बिरचि बड़ भयउ बिधाता।
महिमा अवधि राम पितु माता।।

तुलसी कहते हैं, जिसका सर्जन करके विधाता को बड़ाई मिली। राम के माता-पिता का सर्जन करके स्वयं ब्रह्मा बड़े हो गये; प्रतिष्ठित हो गये। ऐसे दशरथ और कौशल्या महिमा की अवधि है। एक नया महिम्न। बच्चों, माँ-बाप की महिमा होनी चाहिए। ये महिमा की अवधि है। हां, ये प्रश्न ज़रूर उठता है वर्तमानजगत में कि माँ-बाप कैसे हो कि उसकी महिमा गाय? मैं 'मानस' से दशरथजी का दर्शन कराऊं तो मैं कह सकता हूं कि एक माँ कौशल्या और एक बाप दशरथ उसके जीवन में पांच संकट आये और पांचों संकट में जिस इन दोनों से मातापिता ने जिस रूप से रास्ता निकाला। परिवार में माता-पिता ऐसे हो कि परिवार में पांच प्रकार के संकट आये और इन पांचों संकट से अपने बच्चों को उबार ले। ऐसे माँ-बाप महिम्नस्तोत्र के योग्य है।

दशरथ-परिवार पर पांच संकट आये। 'मानस' के आधार पर गिनते जाओ। एक, दशरथ के जीवन में धर्मसंकट आया। हम बहुत खुल्ले दिल से शब्दप्रयोग करते हैं दुनिया में भई, धर्मसंकट था। दशरथ के जीवन में धर्मसंकट आया। महाराज दशरथ के जीवन में प्राणसंकट आया। एक दूसरा शब्द हम यूज़ करते हैं 'प्राणसंकट।' एक तीसरा शब्द हम यूज़ करते हैं 'राष्ट्रसंकट।' कभी राष्ट्र में कोई अकल्प्य नौबत आती है तो हम कहते हैं, राष्ट्रसंकट खड़ा हो गया। एक अर्थ में आप देखो तो भारत में कहीं बाढ़, कहीं अकस्मात, कहीं बोर्डर पर किसी के द्वारा अनीति का आचरण, कहीं आतंकवाद; कहीं कोई गलत सारवार के कारण है; ओक्सिजन ठीक नहीं या तो कुछ कारण; गोरखपुर का जो हादसा हुआ। इतने बच्चे की डेथ

हो गई! कहीं ये, कहीं ये, कहीं ये। और बोर्डर पर तो कुछ न कुछ गड़बड़ होती ही रहती है!

गुजरात के संकट के कारण आप सबने मिलकर व्यासपीठ की प्रार्थना पर इतनी बड़ी राशि इकठ्ठी कर ली है। मैंने तो रमेशभाई को कहा कि एक करोड या तो सवा करोड जितनी राशि हो जाय तो सन्मानित राशि है। लेकिन अभी मुझे रमेशभाई रास्ते में बता रहे थे कि बापू, दो करोड से ऊपर चली गई! केन्द्र सरकार ने दो-दो करोड रुपये डिक्लेर किये थे। हमारे आदरणीय प्रधानमंत्री साहब जब आये और उसने तुरंत घोषणा की। अच्छा कदम उठा लिया। केन्द्र इतना देगा, कथा इससे दुगुना देगी! ये आप सबने किया। जब राष्ट्र में कोई संकट हो, किसी न किसी बहाने से हमें उसमें शरीक होना चाहिए।

तो धर्मसंकट, राष्ट्रसंकट, प्राणसंकट। कभी-कभी जीवन में लोगों को पारिवारिक संकट आता है। पारिवारिक संकट; परिवार में कोई ऐसी घटना घटे कि आप क्या करे, कोई सूझ न पड़े! राष्ट्रसंकट, धर्मसंकट, प्राणसंकट, परिवारसंकट और प्रेमसंकट आकर खड़ा रह जाय। महाराज दशरथजी और कौशल्या के जीवन में 'अयोध्याकांड' में पांच संकट आये और पांचों संकट से कैसे निवृत्त हुए इसी कारण तुलसी कहते हैं।

पहला धर्मसंकट। धर्म मानी सत्य। सत्य मानी वादा। दशरथ ने वादा किया था; जो पूर्वकथा है, कैकेयी के पुत्र को मैं राज दूंगा। लेकिन जब वरदान की मांग हुई तब राजा के जीवन में धर्मसंकट पैदा हुआ कि क्या करूं अब? निभाऊं, न निभाऊं? क्या करूं? और धर्म मानी सत्य। 'धरमु न दूसर सत्य समाना।' इस धर्मसंकट का निवारण सद्पुत्र ने किया। धर्मसंकट था, वचन कैसे निभाये जाय? राम को राज देने का वचन; पूरी अयोध्या उत्सव मना रही थी। उधर पहले कैकेयी के वचन की बात आई; दशरथजी अब क्या करे? धर्मसंकट में फंसे। तब राम कैकेयी भवन में जाकर कहते हैं, माँ, ऐसा बेटा बहुत बड़भागी है, जो माता-पिता के बचन के अनुसार चले। मेरे पिता को धर्मसंकट है ना, जरा भी चिंता न करे। छोटे भाई को राज मिलना चाहिए। आपने मुझे पहले क्यों नहीं बताया? मैं वन में चल गया होता। और मेरे लिए तुमने कितना अच्छा कर लिया माँ! मैं वन में जाऊंगा तो महात्माओं का सत्संग होगा।

मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भांति हित मोर।

माँ, सब प्रकार से मेरा कल्याण होने जा रहा है। इससे मेरे पिता की आज्ञा, उसका वचन, मैं पूरा करूं। और माँ, इससे भी ज्यादा खुशी की बात है, जिसमें मेरी कैकेयी माँ संमत है। इतने फ़ायदे होते हैं। वो माता-पिता के धर्मसंकट संतान मिटाये और धर्मसंकट में फंसे हुए माता-पिता को मुक्त करे और धर्मसंकट में फंसने के बाद क्या करूं? क्या करूं? ऐसी स्थिति में जो माँ-बाप रहे उसकी महिमा गाई जाय।

दूसरा, दशरथ का प्राणसंकट; जी नहीं सके। राम के बिना राजा जी पायेगा? प्राणसंकट था राजा का। और तुलसी ने लिखा ये बाप के बारे में-

बंदऊँ अवध भुआल सत्य प्रेम जेहि राम पद।
बिछुरत दीनदयाल प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ।।

एक ही दोहे में सत्य, प्रेम, करुणा, तीनों। दयालुपना कृपा है; कृपा करुणा है। 'बिछुरत दीनदयाल', ये करुणावाचक शब्द है। दीनदयाल, दीन पर करुणा करनेवाला।

राम के विरह में प्राणसंकट आया। महाराज ने राम के विरह में अपना प्राण छोड़ दिया। प्रेमसंकट; प्रेम निभाऊं, न निभाऊं, करूं क्या? शंकर के जीवन में भी प्रेमसंकट आया। सती को त्यागने की बात आई तब सोचे कि इतनी प्यारी सती को छोड़ भी नहीं सकता और अब उसके साथ जीऊं तो भी पाप हो जाएगा क्योंकि सती ने सीता का रूप लेकर अनर्थ कर दिया है। प्रेमसंकट था राजा का। प्राणसंकट था राजा का। परिवारसंकट; परिवार संकट का निवारण माँ कौशल्या ने कर दिया। राघव, तूने तेरे पिता ने ही वन जाने को कहा है तो मैं रोक तो नहीं पाती लेकिन कम से कम तेरे पिता के साथ विचारविमर्श कर सकती हूं क्योंकि मैं अयोध्या की पटमहिषी हूं। मैं इतना तो पूछुंगी कि आप जो निर्णय करे मालिक, कुबूल है। लेकिन राम का कौन कुसूर है कि आप उसको वन में भेजते हो? लेकिन-

जौं पितु मातु कहेउ बन जाना।

'माता' शब्द ये कैकेयी की और है। कैकेयी और दशरथजी दोनों ने यदि वन में जाने को कहा तो-

तौ कानन सत अवध समाना।।

तो वन तुझे सौ अयोध्या का सुख दे। माँ की ये शक्ति है। पारिवारिक संकट माता के सिवा कोई नहीं निपटा सकता। एक माँ घर में बैठी हो अथवा तो किसी में भी मातृत्व छलकता हो वो पारिवारिक संकट से उबारेगी; ये माता की अद्भुत शक्ति है। माँ कौशल्या ने पारिवारिक संकट दूर किया। और राष्ट्रसंकट आया; अब क्या किया जाय? कौन राष्ट्र का राजा बने? राम या भरत? थोड़ी देर लगी संकट निवारण में लेकिन चित्रकूट की सभाओं ने राष्ट्रसंकट का निवारण कर दिया। भरतजी लौट आये पादुका लेकर और प्रेमराज्य की स्थापना कर दी। तो पांच प्रकार के संकटों में फंसे माता-पिता अपने सत्य, प्रेम, करुणा के द्वारा अथवा तो ऐसी विचारधारा में जीनेवालों के समर्थन से वो बाहर निकल जाये। ऐसे माता-पिता 'मानस' के आधार पर महिमा गानेयोग्य है।

तो सरजू की महिमा, महाराज दशरथ और कौशल्या की महिमा। अब आगे बढ़ें। जो मूल पंक्ति हमने उठाई है।

बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी।
त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी।।

पार्वती कहती हैं, हे विश्वनाथ, हे मेरे नाथ, आपकी महिमा त्रिभुवन में प्रसिद्ध है। यहां 'नाथ' शब्द महत्त्व का है। नाथ किसको कहे? जैसे हमारे यहां पति को नाथ कहते हैं। मेरे प्राणनाथ! हमारे यहां एक नाथ परंपरा है। गोरखनाथ, मछंदरनाथ आदि के जो सूत्र है बड़े प्यारे!

नाथ संप्रदाय में नाथ की पांच व्याख्या है। और भगवान शंकर त्रिभुवन के नाथ है। इसमें पांच क्या, पंद्रह हजार निकलती है। लेकिन पांच समझने से शिवमहिम्न ज्यादा समझ में आयेगा। शिव को समझाने के लिए मुझे नाथ संप्रदाय मदद कर रहा है।

नाथ की पहली परिभाषा नाथ संप्रदाय से प्राप्त हुई वो है, अत्यंत सहनशीलता जिसमें हो वो नाथ होने के काबिल है। फिर भले तुमसे छोटा भाई हो; भले आपका बच्चा हो; भले बेटी हो, पत्नी हो, माँ हो; परिवार का कोई भी सदस्य जो अतिशय सहनशील व्यक्ति तुम महसूस करो तो समझना, ये हमारे जीवन का आधार है; ये नाथ है। भगवान शंकर वो है।

दूसरा, अंदर से बिलकुल जो स्वस्थ है वो नाथ होने के लिए योग्य है। अंदर की स्थिति अथवा तो स्वामी शरणानंद महाराज के शब्द में कहूं तो जिसकी बुद्धि किसी भी परिस्थिति में ठहरी हुई हो। गंगासती क्या पढ़ी? कितने लोग उन पर पीएच.डी. कर चुके हैं! मुझे कहने में जरा भी वो नहीं है कि उसकी ठहरी हुई बुद्धि ज़रूर होगी कि सभी शास्त्र उसमें ऊतर गये। उसी का वो पद-

मेरु रे डगे पण जेनां मनडां डगे नहीं,
मरने भांगी रे पडे भरमांड रे।
विपद पडे पण वणसे नहीं,
ई तो हरिजननां परमाण रे।

तीसरा सूत्र है नाथ संप्रदाय का उदारता, औदार्य। इसीलिए उसको हम रघुनाथ कहते हैं। भीतरी स्वस्थता, उदारता, सहनशीलता। और चौथा सूत्र है; अपने शब्दो में डाल रहा हूं, वो परम पावनी प्रवाही परंपरा के शब्द, चौथा है सुकोमलता। संवेदनशील हो; ऋजु हो; सुहृद हो ये नाथ संप्रदाय का चौथा सूत्र है। और पांचवां और अंतिम सूत्र है, जरा भी मुखरता नहीं। जो आदमी ज्यादा मुखर नहीं है, मौन है वो नाथ होने के काबिल है।

आइये, अब थोड़ा कथा का क्रम लूं। मेरा इरादा है आज कृष्णजनम है; कल रामजनम कराऊं। आज तो कृष्णजन्म है; ऐसा आज मंगलदिन है। गोस्वामीजी कथा को आगे बढ़ाते हुए 'मानस' में कहते हैं कि याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाजजी की जिज्ञासा पर शिवचरित्र सुनाना शुरू किया। शिव है द्वार रामकथा में प्रवेश करने का। तो पहले शिवचरित्र की कथा सुनाई। एक बार के त्रेतायुग में शिव सती को लेकर कुंभज ऋषि के आश्रम में कथाश्रवण हेतु गये। कुंभज ने शिव की, सती की पूजा की। कुंभज बहुत प्रसन्न हुए कि रामकथा का सर्जक स्वयं मेरी कथा सुने ये मेरा कितना बड़ा सौभाग्य! लेकिन सती ने ठीक अर्थ नहीं लिया। सती तो बुद्धिमान की बेटी है तो उसने सोचा कि हम आये हैं, हमारी पूजा करने लगा ये क्या खाक कथा सुनायेगा? परिणाम ये हुआ, शिव ने बहुत सुख से कथा सुनी। श्रोतागण से सती का नाम तुलसी ने निकाल दिया! कथा तो पूरी हो गई। शिव ने अधिकारी समझकर कुंभज को भक्ति का दान किया।

वर्तमान जो त्रेतायुग था उसी का राम अवतार उस समय वर्तमान था। और माया सीता का रावण ने अपहरण कर दिया। सीता के वियोग में ललित नरलीला करते हुए राम रो रहे हैं। और यहां रास्ते में दूर से शिव ने दर्शन किया; 'सच्चिदानंद' कहकर के प्रणाम किया। सती को संशय हुआ कि ये कहां का ब्रह्म है, जो अपनी पत्नी को खोज रहा है! भगवान कहते हैं, ये मेरे इष्टदेव भगवान राम है। फिर भी सती मानने को तैयार नहीं। शंकर कहते हैं कि मेरी बात पर यकीन न हो तो आप परीक्षा करके देखो, नर है कि नारायण? मनुष्य है कि परमात्मा?

सती जाती है राम की परीक्षा करने। सीता का रूप बनाती है। भगवान अन्तर्यामी पहचान जाते हैं। पकड़ी गई! एक भी शब्द बोले बिना सती लौट जाती है। भगवान ने ऐश्वर्य बताया और सती ग्लानि लेकर लौटी। शिव के पास आती है। शिव ने पूछा, आपने परीक्षा की? सती झूठ बोलती है, मैंने कोई परीक्षा नहीं की। भगवान शंकर ने ध्यान में देखा; सती ने जो किया सब दिखाई दिया लेकिन कुछ बोले नहीं। लेकिन मन में निर्णय किया कि अब क्या करूं? सती यदि सीता बनी तो उसके साथ मैं संबंध कैसे रखूं? सीता तो मेरी माँ है। सती का ये शरीर जब तक हो मेरा और उनका कोई संबंध नहीं। कैलास पहुंचे।

सत्तासी हजार साल तक शिव समाधि में बैठे। सत्तासी हजार साल के बाद समाधि से बाहर आये। 'राम-राम' बोलने लगे। शिव ने सोचा कि सती दु:खी है। कथायें शुरू की। फिर दक्ष की कथा आती है। यज्ञ करते हैं शंकर के अपमान के लिए। सती जिद्द करके दक्ष के यज्ञ में गई। और दक्ष के यज्ञ में अपना देह विलीन कर दिया अग्नि में और दक्षयज्ञ विफल गया।

सती जल गई। दूसरा जन्म लिया हिमालय के घर। पर्वत के घर पार्वती आई; शैल के घर शैलजा आई। बड़ा उत्सव मनाया गया हिमालय में। नारदजी आते हैं; भविष्यवाणी करते हैं; हस्तरेखा देखते हैं और पार्वती को कैसा पति मिलेगा वो बता देते हैं। माता-पिता दु:खी हुए लेकिन पार्वती समझ गई कि जो वर के दोष बताये गये वो शिव में ही है, दूसरे में नहीं है। नारद ने कहा, तुम्हारी बेटी तप करे; सब शुभ होगा। पार्वती तप करने गई। आकाशवाणी हुई, देवी, आपका तप सफल हो चुका है। तुम्हें शिव मिलेगा।

यहां सती के विरह में शिव घूमते रहे। भगवान प्रगट हुए और शिव से एक वरदान मांगते हैं। महाराज, आप पार्वती का स्वीकार करो। आपने प्रतिज्ञा ली थी कि सती के साथ तुम्हारा कोई संबंध नहीं; ये सती नहीं है, पार्वती है। वो तो जल गई। शिव ने जगमंगल के लिए हां कह दिया। यहां सप्तऋषि आये। पार्वती की प्रेमपरीक्षा की। उत्तीर्ण हुई। भगवान पार्वती की अनन्य शरणागति सुनकर बहुत आनंदित हुए फिर वो समाधि में चले गये। उसके बाद तारकासुर नामक एक राक्षस की बात आती है। देवता मिलकर शंकर की समाधि तुड़वाते हैं क्योंकि तारकासुर का नाश शंकर का पुत्र ही कर सकता है। कामदेव समाधि तोड़ने आया। भगवान शंकर ने काम को जला दिया। फिर अनंग रूप में स्थापित किया। देवताओं ने प्रार्थना की, आप शादी करो। प्रभु के बचन याद आये और शिव हा कहते हैं। और भगवान शंकर के ब्याह का उत्सव शुरू होता है।

जीवनपद्धति को प्रवाहित रखने के लिए, ये प्रवाह को अक्षुण्ण रखने के लिए दो किनारों की ज़रूरत होती है। कोई भी प्रवाह किनारे पैदा कर देता है। लेकिन जुड़े रखता है प्रवाह। इसलिए उसकी महिमा गाई जाय। नदी इसलिए महिमावंत है क्योंकि अगल-बगल को हराभरा करती है। जो अपने आसपास के जीवन को धन्य करे ऐसी नदी, ऐसा जीवनप्रवाह महिमा गानेयोग्य है। और कोई भी प्रवाहित जीवन को अपना लक्ष्य याद रहना चाहिए। तो किसी भी रूप में प्रवाहित जीवन महिमा गानेयोग्य है। इसलिए तुलसी सरजू की महिमा करते हैं।

परमात्मा की महिमा अलौकिक है

पहले कल सायंकाल की प्रसन्नता व्यक्त करूं कि कल हम सब मिले रमेशभाई के नये निवास पर और आदरणीय भद्रायुभाई ने विस्मय को केन्द्र में रखते हुए चार 'म'कार को लिए हुए मेरी दृष्टि में बहुत चिंतनीय ऐसा एक सुंदर वक्तव्य दिया। भद्रायुभाई ने एक चिठ्ठी भी लिखी है कि बापू, आप कभी 'मानस-विस्मय' पर बोलेंगे? मैं इतना ही कहना चाहूं भद्रायुभाई, आप जब बोल रहे थे तभी मैंने निर्णय ले लिया था; मेरे गुरु की कृपा हो जाये, आप सबकी शुभकामनाओं को लेकर आई विल ट्राय। क्योंकि 'रामचरितमानस' बड़ा विस्मित करनेवाला शास्त्र है। कई प्रसंग मिलते हैं, जो विस्मय से भरा हुआ है। आप बोल रहे थे तभी मेरे मन में ये धारा चली ऊठी। लेकिन ये कथा कोई ऐसी जगह कहूंगा कि वहां कम लोग हो क्योंकि सब्जेक्ट जरा गहन है। यद्यपि मुझे गहन विषय पर बोलना आता ही नहीं; होगा तो भी मैं सरल कर दूंगा। तो कोई ऐसी जगह में; हो सके तो हिमालय में कहीं ज्यादा ठंडी न हो, ज्यादा गरमी न हो। देखेंगे, कभी गायेंगे 'मानस-विस्मय।'

तुलसी ने कोई सब्जेक्ट छोड़ा नहीं है, जहां तक मेरी दृष्टि गई है। तो बड़ी प्यारी बातें कल हुई। फिर बहन काजल ने सुंदर बातें कही कृष्ण के बारे में। कृष्ण के स्पेलिंग के एक-एक अक्षर लेकर बिलकुल सरल-तरल और चिंतनपूर्ण जन्माष्टमी के दिन जो सुंदर विचार प्रस्तुत हुए। साधुवाद। उसके बाद हमारे कविराज भरतदानजी के संकलन में संतवाणी का दौर चला। और मैं बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं कि भाई दीपक हरियाणी ने ऐसा गणेश स्थापित किया कि पूरा कार्यक्रम विघ्न की तो बात ही नहीं, अधिकाधिक प्रसन्नता से संपन्न हुआ। और सामत घराना ने उसको सुचारु रूप से आखिर में गा करके पूरा किया। हम सबको बहुत आनंद-आनंद आया।

दिल एक बच्चे की मानिंद अड़ा जैठा है।
या तो सबकुछ चाहिए या तो कुछ भी नहीं।

जैसे बच्चा बाप को कहे, मुझे पांच रुपये की नोट दो। और बाप कहे, नहीं। तो कुछ नहीं चाहिए! ले जाओ तुम्हारी नोट! हम तो कैसे कह सकते हैं, लेकिन कबीर ने कहा है, 'कह कबीर मैं पूरा पाया।' मेरे तुलसीदासजी कहते हैं, 'पायो परम विश्राम।' या तो पूरा समझे या तो न समझे। पूरा समझ में न आये वही तो विस्मय है। किसी को हम पूरा समझ सकते हैं यार! थोड़ा बौद्धिक स्तर से समझने की कोशिश करो तो तर्क पर तर्क खड़े हो जायेंगे। कहां समझ में आते हैं? मुझे मुरादाबादी साहब की एक गज़ल का शे'र याद आ रहा है कि-

जो बांटता फिरता है ज़माने को उजाला,
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।

आदमी को निर्णय करना मुश्किल है। जलन साहब ने ठीक प्रश्नार्थ किया कि 'मने शंका पडे छे के दीवाना शुं दीवाना छे?' कैसे एक आदमी पर निर्णय करें? जीव पर तर्क बुठ्ठे हो जाते हैं, तो शिव पर तर्क कहां तक चलेगा? मुश्किल है। या तो परमात्मा करे, सबकुछ जान लिया जाय, 'पूरा पाया' या तो कुछ नहीं चाहता। बिलकुल एम्प्टी, बिलकुल खालीपन, रिक्तता, नितांत एकांत। कैसे हम पूरा जान पाये? बीच-बीच में हमारी तकलीफ़ हो जाती है। और मेरी समझ ऐसी है कि पूरा समझने में बुद्धि बाधक है। बुद्धि अच्छी है; अंत:करण चतुष्टय का एक पडाव है बुद्धि। लेकिन सूखी बौद्धिकता बाधक है। विस्मय में तो बहुत बाधक है। ऐसा होता होगा; ऐसा है। 'महिम्न' लो न; 'महिम्न' का दृष्टांत मैं आपके सामने रखूं। कितने प्रश्न उठाये पुष्पदंत ने!

किमीह: किं काय: स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।

आप देखो, ये तार्किक कितने प्रश्न ऊठे! कर्ता ने ये पूरी सृष्टि बनाई। 'किमीह: किं'? किस इच्छा से बनाई? इह माने इच्छा। अनीह माने इच्छामुक्त तत्त्व। 'किमीह: किं काय: स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं।' ये पूरा त्रिभुवन सृष्टा ने-सर्जक ने कौन इच्छा से बनाया? क्यों बनाया? किस उपाय से बनाया? 'किमाधारो धाता', किस आधार लेकर, किसका सपोर्ट लेकर बनाया? एक मूढ़ आदमी भी जानता है कि एक घड़ा बनाना है तो उपादान चाहिए मिट्टी। 'सृजति किमुपादान इति च।' तो सर्जक ने कौन इच्छा से बनाया? क्यों बनाया? कब बनाया? किसके आश्रय में बनाया? किस बात की सोच करके बनाया? और फिर गंधर्वराज कहते हैं, सब अतर्क्य है। यहां अतर्क्य है तो रूखी-सूखी बुद्धिवालें क्यों ऐसे तर्क करते हैं? बोले, 'मुखरयति मोहाय जगत:।' क्या थप्पड़ मार दी है पुष्पदंत ने! क्यों वो विमोहित हो जाते हैं? और ऐसा नहीं हो सकता। ये ठीक नहीं है। ऐसी मुखरता उसमें आ जाती है। वो ही हमें व्यामोह प्रदान करता है।

'रामायण' में एक महिमा है विस्मय का राम के द्वारा सृजित विस्मय। एक परमतत्त्व है उसमें से सब निकला है। हर्ष भी वहां से निकला, विषाद भी वहां से निकला। 'बिधि प्रपंच गुन अवगुन साना।' सब सटा हुआ है। भवानी ने राम के बारे में जब पूछा तो भगवान शिव उसको रहस्य की महिमा का गायन करने लगे उसी प्रसंग में वो कह देते हैं, 'राम अतर्क्य बुद्धि मन मानी।' अतर्क्य है। फिर कहते हैं-

आदि अंत कोउ जासु न पावा।
मति अनुमानि निगम अस गावा।।

हे भवानी, जिस राम को सीता के वियोग में दंडकारण्य में रोते हुए देखकर तेरे मन में संदेह पैदा हुआ कि ये काहे का ब्रह्म है? अब दूसरे जनम में तू उसी ब्रह्म की कथा पूछ रही है कि ब्रह्मतत्त्व क्या है? तो सुन, ब्रह्म वो है, जो तर्कों से सिद्ध नहीं होगा। 'आदि अंत कोउ जासु न पावा।' न कोई उसका आदि पकड़ सकता है, न कोई अंत पकड़ सकता है। मध्य में जिसने भज लिया उसका बेड़ा पार हो गया। उसका आदि क्या, उसका अंत क्या? सब बेकार! जिसने वर्तमान में उसको भज लिया वो तैर गया। सब बिस्मय की चौपाई शुरू हो जाती है-

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना।
कर बिनु करम करइ बिधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिनु बानी बकता बड़ जोगी।।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा।
ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।।

शिव बोले, हे पार्वती, जिसका आदि-अंत कोई नहीं पा सकता; कैसा है ये विस्मयकारक तत्त्व! 'बिनु पद चलइ।' जो बिना पैर चलता है।

आभना थांभला रोज ऊभा रहे,
वायुनो वींझणो रोज हाले;
उदय ने अस्तनां दोरडां उपरे,
नट बनी रोज रविराज म्हाले;
भागती, भागती, पडी जती, पडी जती,
रात नव सूर्यने हाथ आवे;
कर्मवादी बधां कर्म करतां रहे,
एमने ऊंघवुं केम फावे?

बिना पैर चलता है ये परमतत्त्व! ये विस्मय है! बुद्धि कैसे कुबूल करे, बिना पैर चलना? लेकिन राम वो है जो बिना पैर चलता है। दो अर्थ संतों ने बताये 'मानस' में कि राम बिना पैर चलते हैं जिसका मतलब पद का अर्थ पैर भी होता है; पद याने स्थान, सत्ता; एक ईश्वर ही ऐसा है, बिना सत्ता पूरी दुनिया में काम कर रहा है। बिना पद की अपेक्षा वो काम करता है। तो बिना पैर चले ऐसा कोई तत्त्व वो राम है। 'सुनइ बिनु काना।' बिना कान सुने। भगवान बिना पैर चले वो सिद्ध किया तुलसी ने 'बालकांड' में।

भगवान राम बालरूप में थे। माँ कौशल्या ने नहला दिया। सुंदर पीत वस्त्र पहनाये, घुघरालु बाल थे उसको ठीक किया। नज़र न लगे इसलिए काली बिंदी की और दूध पिलाके सुला दिया पलने में। कौशल्या को हुआ कि मेरे इष्टदेव को भोग लगाने का समय है। माँ देखने गई, कोई सामग्री रह तो नहीं गई। माँ जब रसोडे में देखने गई उसी समय भगवान राम पलने में झूल रहे थे। भगवान को लगा कि मैं स्वयं ब्रह्म माँ के उदर से प्रगटा। और उसने मुझे अभी-अभी दूध पिलाके तृप्त किया और अभी भी दूसरे देवताओं को भोग लगा रही है! मैं नहीं हूं? उसकी अनन्यता टूट रही है। तो जैसे माँ रसोईघर में देखकर फिर मंदिर में जाये इतने में तो एक बहुत बड़ा रहस्य हुआ, भगवान राम बाललीला में चार पैर चलते हुए श्रीरंग प्रभु के मंदिर में जो सामग्री रखी हुई थी वो खा रहे थे! ये विस्मय हुआ कि मैं तो अभी सुला के आई और यहां कैसे खाता है? और भगवान लीला करे! माँ को लगा ये क्या हो गया? चलना सीख गया है। अब वहां जाके देखती हैं तो वहां बालक रूप में राम सोये हैं! फिर यहां आई तो भोजन कर रहा है! यहां आंखें बंद! यहां आंखे खुली! माँ को कुछ दिखा रहा है। 'मतिभ्रम मोर कि आन बिसेषा।' ये मेरा भ्रम है कि ओर तत्त्व है? और जब माँ अकुला ऊठी, 'बिसमयवंत देखि महतारी।' फिर 'बिस्मय' शब्द यहां आया।

माता को विस्मयवंत देखकर भगवान ने अपना ऐश्वर्य प्रगट किया और परमात्मा के श्रीरंग के मंदिर में बालराम ने अपना विश्वरूप का दर्शन करा दिया। परम ऐश्वर्य का दर्शन करते हैं। जैसे अर्जुन 'गीता' में विस्मयभूत हो जाता है। ये क्या है सब? गज़ब हो गया! तब तुलसी की पंक्ति ठीक लगती है कि पलने में सोया राम बिना पैर चल दिया। वहां तो सोया है। और ठाकुरजी के मंदिर में भोजन कर रहा है। वहां ये पंक्ति सिद्ध होती है। 'बिनु पद चलइ।' बिना पैर चलता है और 'सुनइ बिनु काना।' कान के बिना सुनता है। और प्रमाण है 'किष्किन्धाकांड' में बालि को प्रभु ने मारा तो बालि दलील करने लगा। आपने मुझे एक व्याध बनकर मारा है! मेरा क्या कुसूर? तब रामजी कहते हैं, 'मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना।' हे मूढ़, तुझे अतिसय अभिमान था। 'नारी सिखावन करसि न काना।' तेरी पत्नी तुझे घर में समझा रही थी कि राम ब्रह्म है। तू माना नहीं इसीलिए मैंने तुझे ठीक करने के लिए मारा। तब बालि सोचने लगा कि मेरी पत्नी तो घर में कह रही थी, रणमैदान में उसने कैसे सुन लिया? 'सुनइ बिनु काना।' ये बिना कान सुनता है।

तो थोड़ी सिद्धि हो वो भी ये कर सकता है। तो ये तो ब्रह्म है। 'कर बिनु करम करइ बिधि नाना।' हे पार्वती, परमतत्त्व है उनका रहस्य समझ में नहीं आता। वह बिना हाथ हर कर्म करता है। सब हो जाता है। ये कैसे? तो जब रामजी ने धनुषभंग किया तो किसीने देखा नहीं कि किस हाथों से पकड़ा गया? क्या किया? कैसे तोड़ा? केवल आवाज़ सुनी और टूटा हुआ धनुष देखा! 'आनन रहित सकल रस भोगी।' हे पार्वती, ब्रह्म की महिमा ये है कि ये मुख बिना सब रस का भोक्ता है। और 'बिनु बानी भक्ता बड़ जोगी।' बिना वाणी वो परम वक्ता है। 'तन बिनु परस।' बिना शरीर वो सबको छूता है। 'नयन बिनु देखा।'

बिना नयन सबको देख लेता है। 'ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।' घ्राणेन्द्रिय न हो तो भी सबकी सुवास ग्रहण करता है। देवी, ऐसी जिसकी अलौकिक महिमा है वो तर्क से नहीं समझ में आयेगी; केवल बुद्धि से नहीं समझ में आयेगी। ये रहस्य खोलने के लिए उसकी कृपा चाहिए। तो यहां भी परमात्मा की अलौकिक महिमा का ज़िक्र हुआ है। तो ये भी एक तत्त्व है, महिम्न का तत्त्व है।

तीन शब्द है हमारे ग्रंथों में। एक लौकिक महिमा होती है। एक पारलौकिक महिमा होती है। और तीसरा शब्द जो यहां पर्टिक्यूलर यूझ हुआ है वो अलौकिक महिमा। तो एक है लौकिक महिमा। दूसरा है पारलौकिक महिमा। उसकी परिभाषा ये है कि स्वर्ग जैसा ऐश्वर्य हो; स्वर्गीय महिमा को पारलौकिक महिमा कहते हैं। उसकी भी महिमा होनी चाहिए। जैसे जानकी को ब्याहने के लिए रामभद्र आते हैं। दशरथजी बारात लेकर आये और उसके स्वागत के लिए जानकीजी ने अपनी महिमा प्रगट की। ब्रह्म आ रहा है इसलिए रिद्धि-सिद्धि दौड़ी आयी। इतना ऐश्वर्य खड़ा कर दिया; 'यह महिमा रघुनायक जानी।' केवल राम के सिवा ये महिमा कोई नहीं जान पाया। तो वहां भी ऐश्वर्यमयी महिमा पारलौकिक। लेकिन श्रेष्ठ महिमा ये है कि न लौकिक, न पारलौकिक। राम की महिमा के लिए 'अलौकिक' शब्द लगाया-

असि सब भाँति अलौकिक करनी।
महिमा जासु जाइ नहिं बरनी।।

कथा का दौर थोड़ा लूं और रामजन्म तक का गायन कर लूं, जो अपने पास शेष समय है। भगवान महादेव ब्याह के लिए तैयार होते हैं। स्वार्थी देवताओं ने शिव के लिए कोई व्यवस्था नहीं की। अपने-अपने शृंगार में पड़ गये। भगवान शंकर ने हां कही लेकिन कुछ नहीं है घर में! संवारे कौन? शिव के निजी भूत-प्रेत गण थे वो बाबा महादेव का शृंगार करने लगे। तुलसी की पंक्तियां-

सिवहि संभु गन करहिं सिंगारा।
जटा मुकुट अहि मौरु सँवारा।।
कुंडल कंकन पहिरे ब्याला।
तन बिभूति पट केहरि छाला।।

गोस्वामीजी कहते हैं, उसके गण जो ये शिव के शृंगार करते हैं। अब दुल्हा ब्याहने जाये तो मुकुट चाहिए। और यहां तो कुछ नहीं है! तो शिव ने ही सुजाव दिया, मेरी जटा को ठीक से बांधकर मेरी जटा का मुकुट बना दो। जटा का मुकुट बनाया। फिर एक गण ने कहा, बाबा, मुकुट पर मोर होना चाहिए। दुल्हे के सिर पर मोर हो। बोले, मेरे शरीर पर भी सांप है। एक सांप को लेकर बिठा दो। दुल्हे के कान में कुंडल। तो छोटे-छोटे सांप थे उसको कुंडल की जगह पहना दिया। शरीर पर भस्म का लेपन किया। 'तन बिभूति पट केहरि छाला।' शरीर पर केहरी माने सिंह का छाल। मुझे कल भी किसी ने पूछा था कि कई महात्मा लोग व्याघ्राम्बर पर बैठते हैं।

मैंने वो मृगवाली जिज्ञासा पर निवेदन किया तब कहा कि भगवान ने जो प्रेममृग को जो निर्वाण दिया उसका चमड़ा था वो लक्ष्मण ने रखा और सुबेल पर्वत पर राम इस पर बैठे। शिवजी जरूर 'तन विभूति पट केहरि छाला।' केहरी का भाग है तो लेकिन शिव जब कथा कहने कैलास पर बैठते हैं तब 'नागरिपु छाला निज कर डासी।' शिव समष्टि का अहंकार है। इसीलिए ऐसे आसन पर बैठ सकते हैं। मेरे अंगत अभिप्राय में तुम कैसे आसन पर बैठते हो इससे तुम्हारी मानसिकता पकड़ी जाती है। इसके उपर से उसकी मानसिकता परख जाती है कि आदमी बड़ा हिंसक, आक्रमक और शाप देने में उसको देर नहीं लगती! जिसको भजन करना है उसको तो प्रेममृग का बिछाना चाहिए, व्याघ्राम्बर नहीं। अंबर के रूप में पहनो ठीक है। शिव तो समष्टि का अहंकार है। आपके कमरे में कैसे चित्र है वो आपके चरित्र की परख बताता है। कैसी किताबें आप पढ़ते हो इससे आपके मस्तक का पता लग जाता है साहब! ये स्वाभाविक है।

तो जब गण शृंगार करते हैं तब कंठ में विष है। गले में मुंडमाला है। हाथ में त्रिशूल और डमरू है। नंदी की सवारी है। बाबा दुल्हे महाराज तैयार हो गये। भूत-प्रेत अपने मालिक को इस रूप में देखकर प्रसन्न हुए। यहां देवता सब बाराती लोग तैयारी करके आ गये विमानों में। भगवान शंकर का ये भीषण रूप देखकर बुद्धि के देवता

ब्रह्मा ने चित्त के देवता विष्णु को कहा, ये दिगंबर, इसके साथ हम पीतांबरवाले कैसे चल पायेंगे? हमारी प्रतिष्ठा का सवाल है। विष्णु भगवान कहे, करे क्या? तो ब्रह्मा ने युक्ति बनाई। सभी देवताओं को कहा कि ऐसा करो, व्यवस्था के नाम पर सभी देवता बिलग-बिलग हो जाओ। अब इरादा क्या था, व्यवस्था के नाम से बिलग होकर शंकर को अकेला कर देना था। भगवान महादेव समझ गये कि देव, आप देव हो, मैं महादेव हूं। मेरे साथ चलने में आपको तकलीफ़ है?

महादेव ने अपने शृंगी-भृंगी और धृंगी तीन गण थे उनको बुलाया। तलगाजरडा ने ये तीन गण पैदा किये हैं! ये शंकर की अगल-बगल में ही रहे। तीनों को बुलाया, दुनिया में जितने स्मशान हो और स्मशान में जितने हमारे लोग रहते हो इन सबको बुलाओ; भूत-प्रेत रहते हो उनको सत्वर बुलाओ और कहो कि अपने बाबा का ब्याह हो रहा है; सपरिवार आइए। साहब! पूरी दुनिया से भूत-प्रेत आये! क्योंकि मरना तो सब जगह है। एक ही दुल्हा विश्व का है मेरा महादेव कि जिसकी बारात में पूरी दुनिया से बाराती ऐसे आये थे! भाषा भेद था। हिन्दुस्तान के स्मशान से जो भूत आये बिलग-बिलग प्रांत से वो 'हर-हर' बोलते थे! अमरिका से, ब्रिटन से जो आये वो 'हाय-हाय-हाय' ये अपनी भाषा बोलते थे! और महादेव 'सकल कला गुन धाम।' सभी कलाओं के गुणधाम है। इसलिए सब जान गये थे; पूरी भूतावल प्रगटी है। इतने भूत-प्रेत आये और तुलसी ने लिखा है कि कैसे थे भूत-प्रेत?

तन खीन कोउ अति पीन पावन कोउ अपावन गति धरें।
भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरें।।

तुलसी लिखते हैं, शिव की बारात में आये भूत-प्रेत; कोई बड़े हृष्ट-पुष्ट; कोउ अपावन, पावन; कोई पवित्र है। यही तो अपने विचारों की व्याख्या है। हमारे कुछ विचार एकदम क्षीण, एकदम निम्न; कई विचार पुष्ट; खुद को भी पुष्ट करे, दूसरों को भी पुष्ट करे। पावन, कई विचार हमारे पवित्र होते हैं। कई विचार अपवित्र होते हैं। कई भूत-प्रेत को खर का चेहरा, श्रीगाल का चेहरा, कई श्वान का कुत्ते का चेहरा। तुलसी कहते हैं, प्रेत-पिशाच पूरा मंडल इकठ्ठा हुआ। 'नाचहिं गावहिं'; देखो भाई, दुल्हे की सवारी निकले तब आज-कल जो लोग नाचते हैं आगे। यह शुरूआत शंकर से हुई है! ये कोई नया नहीं। नाच रहे हैं, गा रहे हैं। कौन? सब तरंगी भूत नाच-गान कर रहे हैं। अब देवगण मज़ाक करते हैं। कौतुक हो रहा है; विनोद हो रहा है। सब नाच रहे हैं। बारात चली। काफ़ी संख्या में भूत-प्रेत हिमाचल प्रदेश पहुंचते हैं। दुल्हे का सम्मान करने सब आते हैं; पूरा नगर उमड़ा है। हमारी पार्वती ने इतनी तपस्या की। दुल्हा कितना सुंदर रहा होगा! सब देखने के लिए आतुर है।

स्वार्थी देवताओं ने योजना बनाई। पहले हम सब आगे जाये। हमारा सबका सम्मान हो जाये फिर शंकर का जो होना हो! कौतुकवश हिमाचल प्रदेश के भोले बच्चे दुल्हे को देखने आये। भयवश, भयकंपित होकर अपने-अपने घर में चले गये! बारात और शिव पूछते-पूछते कन्या का भवन हिमालयभवन वहां पहुंचते हैं। महाराणी मैना पार्वती की माता परिछन हेतु सोने की आरती में सुंदर दीप जलाये हैं और सखियां गीत गा रही है। स्वागत के लिए मैना रानी आई। जब आरती उतारने गई ही, शिव का ये रूप देखा और भयभीत हो गई! आरती गिर गई! मैना बेहोश हो गई! सखियां मूर्छित महारानी को निजमंदिर में ले गई। जागी तो अपनी कन्या को गोद में बिठाकर रो पड़ी कि नारद का मैंने क्या बिगाड़ा कि ऐसे वर के लिए तपस्या की तुझे सूचना दी! कहा, बेटी, मैं तेरे साथ हिमालय से गिर करके प्राणघात करूंगी; समंदर में डूब जाऊंगी या तो ऐसी मजबूरी आई तो तेरा हाथ पकड़कर फेरे लगाते समय तुझे लेकर यज्ञकुंड में कूद जाऊंगी, लेकिन जब तक मैं जीवित हूं ऐसे पुरुष के साथ तेरा ब्याह नहीं होने दूंगी। अब भारतीय कन्या का विवेक देखो। हाथ-पग में मेहंदी लग चुकी है पार्वती के। यह तो जगदंबा है, पराम्बा है। उसका विवेक तुलसी ने लिखा है।

तुम्ह सन मिटहिं कि बिधि के अंका।

हे माँ, तू मेरी प्रसूता है। तुम कहोगी तो मैं जल जाउंगी। मैं तो जलती ही आई हूं। तुम कहो तो गिर जाउंगी। लेकिन एक सवाल का जवाब दे माँ, तुम्हारे में ऐसा सामर्थ्य है कि बिधि लेख को बदल सको? मेरी जो नियति है। जहां जाउंगी, मेरे भाग में जो होगा सो मिलेगा। ये कल्पांत का

अवसर नहीं है माँ। इतने में हिमालय, सप्तऋषि और देवर्षि नारद को पता लगा। गंभीर परिस्थिति है। तो सब एकदम निजमंदिर में आये। नारद आये और कहा, महारानी मैना, मैं जानता हूं कि आप मेरे पर नाराज़ हो, लेकिन अब मुझे परदा तोड़कर बात करनी पड़ेगी कि तू जिसको अपनी बेटी कहती हो ना वो पूरी दुनिया की माँ है। ये तेरा भाग्य कि तेरी बेटी बनी। लेकिन ये तेरी भी माँ है। गत जन्म में ये दक्ष की कन्या थी। शिव के साथ कुंभज के आश्रम में कथा सुनने गई। लौटते समय राम पर संदेह किया। सीता का वेश लिया। इसी अपराध के कारण शंकर ने उसका त्याग कर दिया था। और दक्ष के यज्ञ में जल गई थी। अब तुम्हारे घर जन्मी है। अपने मूल पति को प्राप्त करने के लिए कठिन तपस्या की। महारानी, संशय छोड़ो; ये तो निरंतर शिव की पत्नी है। और जिस दुल्हे का आपने अपमान किया, जो आपके द्वार से चले गये वो शिव है।

मेरी समझ में इस प्रसंग का, इस घटना का इतना ही सार है कि हमारे घर में ही शक्ति होती है। सबके पास अपनी-अपनी शक्ति होती है अपनी कक्षा में। और हमारे द्वार पर कभी न कभी शिव दस्तक देते हैं, लेकिन हम पहचान नहीं पाते। न शक्ति को, न शिव को। नारद जैसा कोई बुद्धपुरुष हमें परिचय कराये तो ही हमें पता लगता है। जब नारद ने ये सब बातें कही तब सबका भाव शिव के प्रति बदल गया और पार्वती के चरणों में सब वंदन करने लगे। सब दृष्टि बदल चुकी है एक बुद्धपुरुष के वचनों से। और उसके बाद दुल्हे की सवारी निकली। अद्भुत रूप है शिव का! अद्भुत है महादेव! विवाह मंडप के द्वार पर महादेव पधारे हैं। वेद का घोष हो रहा है। शांतिमंत्र का पाठ हो रहा है। भगवान शिवजी ने प्रवेश किया। स्वर्ण सिंहासन पर दुल्हे के रूप में महादेव विराजित हुए। अष्टसखियां पार्वती को ले आई मंडप में। गान गाये जा रहे हैं। एक ओर वेदध्वनि, एक ओर लोकध्वनि; दोनों एक साथ चल रहे हैं। आप सोचिए, क्या मंज़र रहा होगा! हां, जब पार्वती का हाथ मेरे महादेव ने ग्रहण किया। सब देवता जयघोष करने लगे। पुष्प की वृष्टि होने लगी।

महादेव और पार्वती मंगल भांवरी ले रहे हैं। विवाह संपन्न हुआ। लोकरीति संपन्न हुई। कुछ दिन मेरे महादेव रुके। उसके बाद बिदा बेला आई। कल पार्वती की बिदा है। रात को हिमालयवासी सो नहीं पाये। कल हमारी पुत्री बिदा होगी। सुबह होती है। कन्याविदाय के तुलसी ने दो प्रसंग लिखे। एक भवानी की बिदाय। दूसरी जानकी की विदाय। वैसे कुल मिलाकर 'रामायण' में चार विवाह की बात है। एक शिव-पार्वती का विवाह; उसके बाद राम-जानकी का विवाह। ओर दो विवाह होने को था लेकिन असफल रहा। एक नारद को विश्वमोहिनी से विवाह करना था; असफल रहा। और एक शूर्पणखा को राम को प्राप्त करना था; असफल रहा।

पार्वती के लिए डोली सजाई गई। तुलसी कितनी सावधानी रखते हैं साहब! क्योंकि शंकर को कोई माता-पिता नहीं है तो पार्वती को कोई सास-ससुर नहीं है। जानकी के विदाय के समय जनक और सुनयना कहते हैं कि सीते, सास-ससुर की सेवा करना। क्योंकि वहां सास-ससुर है। शंकर का तो कोई माँ-बाप नहीं। इसीलिए कितनी सावधानी कवि की!

करेहु सदा संकर पद पूजा।
नारिधरमु पतिदेउ न दूजा।।

बेटा, शंकर पद की पूजा करना। नारी का धरम तो अपना पति ही है। यही देव है। जाओ बेटा! हिमालय कितना बड़ा आदमी! अचल आदमी है हिमालय! अचल है। पहाड़ स्थिर है। लेकिन आज बेटी के बिदा के समय पिघल गया। कोई भी बाप; हमारी तो परंपरा में देखने को मिला है। हर जगह होगा। बाकी हमारी परंपरा में कितना ही बड़ा बाप क्यों न हो, लेकिन बेटी के बिदाय के समय कोई बाप रोया न हो ऐसा दृश्य मिलना मुश्किल है। बेटी को बिदा देता है तो चालीस साल का बाप साठ साल का लगने लगता है बेटी जाने के बाद। क्योंकि इतना बड़ा एक उससे छूट जाता है। इसको मेरा दादल कहता है-

काळजा केरो कटको मारो हाथथी छूटी गयो...

बाप के कलेजा का टुकड़ा आज बिदा हो रहा है! भवानी की बिदाय। गिरिमाला के टेढ़े रास्ते में जब तक दुल्हन की पालखी दिखाई देती रही तब तक लोग खड़े रहे और कोई मोड में अपनी उमा की पालखी छिप गई! हिमालये हिमालय जेवडो निसासो मूक्यो साहेब! और लौट गया। कन्याविदाय हुई। हम लोग तो संसारी है साहब! लेकिन पालक पिता कालिदास का महर्षि कण्व जब शकुंतला को पालकर बड़ी की थी और शकुंतला को बिदा देता है तब ऐसे तपस्वी की आंख भी! अरे छोड़ो तपस्वी; जनक तो स्वयं विदेह रहे, ये तो विदेह है, देह में होते हुए देह से पर है, विदेह रहे। तुलसी को लिखना पड़ा, 'भयउ विदेह विदेह बहोरि।' देह होते हुए विदेह और आज विदेह होते हुए विशेष विदेह हो गये बेटी को विदा देते समय!

भवानी पतिगृह पहुंचती है। जितने देवता आये थे सबने बड़े-बड़े लंबे स्तोत्रगान किया शिव-पार्वती का। उमा-महेश्वर के जितने पुराने स्तोत्र है, ये इसी मौके पर लिखे गये हैं संस्कृत वाङ्मय में। सब देवता बिदा हुए। तुलसी लिखते हैं-

जगत मातुपितु संभु भवानी।
तेहिं सिंगारु न कहउँ बखानी।।

नित-नूतन विहार शिव का। अब कालिदास तो 'कुमारसंभवम्' में सब खोलकर लिख देते हैं। वो कालिदास है। तुलसीदास ये नहीं लिख सकते क्योंकि ये तुलसीदास है। कालिदास ने खोलकर लिखा तो उसको कुष्ट रोग हुआ। कहते हैं, मेरे तुलसी ने विवेक से लिखा तो तुलसी को कुष्ट रोग नहीं हुआ, इष्ट रोग हुआ; हरिनाम का रोग लग गया। इसने लिखा; एक पंक्ति में डाल दिया, 'करहिं बिबिध बिधि भोग बिलासा।' शिव और पार्वती रोज़ नूतन भोग-विलास में डूबे। इतने में सब आ गया। थोड़ा काल बीता तब पार्वती ने कुमार को जन्म दिया। षड्मुख कार्तिकेय का जन्म हुआ। इस कार्तिकेय ने ताड़कासुर नामक राक्षस को निर्वाण दिया और देवताओं को सुख प्रदान किया। ऐसे शिवविवाह की कथा तुलसी ने लिखी।

मैंने कहा था, रामजनम कराऊंगा। रामजनम नहीं होगा! ये मेरे कहने पर थोड़ा होता है? वो तो ब्रह्म है, उसकी मर्ज़ी है। जब योग, लगन, ग्रह, बार, तिथि होगा तब होगा। खैर! शिव एक बार कैलास के बेदबिदित वटवृक्ष के नीचे अपने हाथ से आसन बिछाकर सहज बैठे हैं। पार्वती भल अवसर पा करके महादेव के चरणों में जाकर बैठी। शिव ने आदर दिया। वामांग पर पार्वती को बिठाया। और फिर पार्वती थोड़ी सन्मुख हुई और कहे, भगवन्, आज आप बहुत प्रसन्न है। आपकी प्रसन्नता में विघ्न न हो और आप मेरी बात सुनकर ज्यादा प्रसन्न हो तो मैं एक जिज्ञासा करना चाहती हूं। प्रभु, मुझे बताओ, रामतत्त्व क्या है? वो गत जन्म मैंने गंवा दिया राम पर संदेह करके लेकिन अब भी ये बात दिल में से गई नहीं कि यही ब्रह्म था तो रोया क्यों? सीता को कौन ले गया? सर्वज्ञ ब्रह्म को पता नहीं होता क्या? फिर वो ही प्रश्न? संशय का निर्मूलन कभी-कभी बहुत देर से होता है। तुलसी ने लिखा है, बहुत से सत्संग के बाद कभी संदेह का नाश होता है। सती पार्वती ने रामकथा पूछी। शिवजी प्रसन्न हुए। और जैसे याज्ञवल्क्य ने भरद्वाजजी के सामने रामकथा शुरू की; तुलसी ने अपने मन को श्रोता बनाकर शुरू किया; वैसे महादेव पार्वती को श्रोता बनाकर अब रामकथा का आरंभ करेंगे। लेकिन उसकी चर्चा मूल सूत्रात्मक चर्चा करते हुए कल करेंगे।

जो परमतत्त्व है उनका रहस्य समझ में नहीं आता। वह बिना हाथ कर्म करता है; सब हो जाता है। जब रामजी ने धनुषभंग किया तो किसी ने देखा नहीं कि किस हाथों से पकड़ा गया? क्या किया? कैसे तोड़ा? केवल आवाज़ सुनी और टूटा हुआ धनुष देखा! ब्रह्म की महिमा ये है कि वह मुख बिना सब रस का भोक्ता है; बिना वाणी वह परमवक्ता है; बिना शरीर वह सबको छूता है। बिना नयन सबको देख लेता है। घ्राणेन्द्रिय न हो तो भी सबकी सुवास ग्रहण करता है। ऐसी जिनकी अलौकिक महिमा है वह तर्क से नहीं समझ में आयेगी; केवल बुद्धि से नहीं समझ में आयेगी। ये रहस्य खोलने के लिए उनकी कृपा चाहिए।

कथा-दर्शन

- रामनाम कलियुग का कल्पतरु है।
- हनुमानजी श्वास और विश्वास का प्रतीक है।
- 'हनुमानचालीसा' सिद्ध भी है, शुद्ध भी है; उसका आश्रय करें।
- बुद्धपुरुष निदान करेगा, निंदा नहीं करेगा।
- साधु तो चलता भला और साधु तो जागता भला।
- जो खुद के लिए नहीं, जमाने के लिए जीए वो साधु है।
- सच्ची शरणागति आदमी को सच्चे काम में जोड़ती है।
- साध्य कितना भी पवित्र क्यों न हो, साधनशुद्धि नितांत आवश्यक है।
- जिसके शरीर में प्रेम हो वहां दुर्गुण, विषय, कल्मष नहीं आते।
- अनन्यता का भी अहंकार न हो जाए इसके लिए सावधान रहना चाहिए।
- द्वेष शायद परमात्मा ने बनाया ही नहीं है, लेकिन प्रेम का अभाव ही द्वेष है।
- अभाव की भी एक संपदा होती है, यदि कोई जीने की कला सीख लें तो।
- महिमा देखी नहीं जाती, महिमा महसूस की जाती है।
- विचारमुक्त होना चाहिए, विहारमुक्त नहीं होना चाहिए।
- अति रोशनी आंखों को अंधा कर सकती है। अति जानकारी अच्छी नहीं।
- सौंदर्य की खोज अच्छी है, लेकिन सौंदर्य की खोज में भटक जाना बहुत बुरा है।
- विचारक बहुत होते हैं, स्वीकारक बहुत कम होते हैं।
- फूल तुम्हारे बाग का हो सकता है, महक तुम्हारे बाग की बंदी नहीं हो सकती।
- कोई भी प्रवाहित जीवन को अपना लक्ष्य याद रहना चाहिए।
- जिसको अच्छा वक्ता होना है उसको अच्छा श्रोता होना ही चाहिए।
- गुणातीत प्रतिष्ठा का गुणगान करना दोष नहीं है।

महिमा देखी नहीं जाती, महिमा महसूस की जाती है

मानस-महिम्न : ६

आज व्यासपीठ के प्रति अपना आदर पेश करने के लिए कुछ ओर धर्म के आदरणीय महानुभाव आयें; मैं आदर के साथ उसका नमन कबूल कर रहा हूं, प्रसन्नता व्यक्त कर रहा हूं। इझरायल के बारे में हमारे अॅम्बेसेड़र साहब ने थोड़ी विस्तृत बातें सुनाई। हमारे आदरणीय प्रधानमंत्री महोदय वहां गए। और अच्छे रिश्ते का ज़िक्र किया। परमात्मा हमारी दोस्ती को मजबूत बनाएं। बेटी ने अपना अंग्रेजी में वक्तव्य दिया, फिर प्रतिदिन की भांति आदरणीय बापा गत दिन की कथा का सरल अंग्रेजी में सारांश पेश करते रहे। बापा, आपको प्रणाम।

'मानस-महिम्न', जो केन्द्रीय विचार है, जिसकी महिमा गाई जा रही है उसमें हम प्रवेश करें उसके पूर्व कल सायंकाल को सचदे परिवार के आंगन में जो कार्यक्रम हुआ, जिसमें सबसे पहले चिंतन पंड्या न्यूटन के बारे में अंग्रेजी और गुजराती भाषा में बहुत अच्छा बोला। न्यूटन के सिद्धांतों को मौलिक श्रद्धा के रूप में प्रस्तुति बहुत प्यारी थी। चिंतन के लिए मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। फिर हमारे आदरणीय प्रोफेसर नाथाभाई गोहिल, जो केशोद से आये हैं, जिसने हमारी संतपरंपरा पर स्वाध्याय करके साधार कुछ परंपराओं के बारे में बृहद ग्रंथ तैयार किया उसका कुछ समय पहले ही जूनागढ़ में लोकार्पण किया गया। उसमें मार्गी परंपरा के बारे में अपना अहोभाव, अपना आदर आपने प्रस्तुत किया।

कल जब मुशायरा चल रहा था तो दो-तीन मेरे शायरों ने कहा कि ये मेरा शेर मुझे बहुत प्रिय लगता है, ये मुझे अच्छा लगा। विनोबा ने कहा कि आदमी को अपना गुण-संकीर्तन भी करना चाहिए। दुनिया कोई भी अर्थ करे, यदि हमारा स्वभाव ऐसा है तो गुण-संकीर्तन भी करें। क्यों हम दोष ही गाते रहते हैं हमारे? भजन जिसको करना है उसको औरों के अभिप्राय पर डिपेन्ड नहीं रहना चाहिए। जगत का अभिप्राय पल-पल बदलता है। और एक बात याद रखें कि लोकचाहना कायम सशर्त होती है, बिनशर्ती होती ही नहीं। जिसको साधना करनी है; आपका जो भी मार्ग हो, सर्जन का मार्ग हो, शायरी का मार्ग हो, वाद्य का, गायन का, वक्तव्य का मार्ग हो, श्रवण का, ध्यान का, योग का, जप का कोई भी; दूसरों के अभिप्राय पर न रहो। अभिप्राय देना हो तो निर्भय होकर अपना दो।

तो गुणसंकीर्तन करो। माया है, प्रपंच है, ऐसी झूठी बातें न करो। ऐसे ही कुछ नहीं होता। कथा में कितना खर्च होता है! हम तो बीसवीं को सभी चीड़ियां उड़ जाएंगे। आप सबने भी आपके घर में जो पंखी थे, आपकी कक्षा के अनुसार उसको भी सुबह होते ही उड़ाए हैं। इसलिए गुजरात के राहत फंड में आपने इतनी बड़ी रकम इकठ्ठी की है। अच्छा हो रहा है सबने अपना योगदान दिया लेकिन गोरखपुर में भी यु.पी. में बच्चों की मृत्यु हो गई; बिहार में कुछ, आसाम में भी कुछ, कहां-कहां ज्यादा नुक्सान हुआ है पूर के कारण या किसी कारणवश। तो मेरे मन में आया कि मैं तो पूरी पृथ्वी का हूं, 'वसुधैव कुटुम्बकम्।' ये हमारा नारा है। इसलिए हम संकीर्ण नहीं बन सकते। तो जो राशि इकठ्ठी हो उनमें से एक करोड़ रुपया बिलग कर तीन-चार स्टेट में जहां ज्यादा विपत्ति हुई है वहां पचीस-पचीस लाख का ड्राफ्ट उसी स्टेट के मुख्यमंत्री के राहतफंड में डालेंगे।

तो चार करोड रुपये इकठ्ठे हुए हैं; आज शाम तक जो हो जाए। तो आपने भी पंखी उड़ाएं है। कल हमारे शायर वसीम बरेलवी साहब ने भी अपने पंद्रह हज़ार रुपिए दिए। यद्यपि मुझे लेने में संकोच हो रहा था। ओर शायरगण ने भी मुझे कहा, मैंने मना किया कि आप यहां आये ये सबसे बड़ा योगदान है। ये तो बुज़ुर्ग को में मना नहीं कर पाया। कल का पूरा मुशायरा आनंदवर्धक रहा। तो कल के प्रोग्राम की मुझे प्रसन्नता व्यक्त करनी थी; बहुत आनंद आया। आइए, अब 'मानस-महिम्न' में प्रवेश करें।

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः।।

हे महादेव, हे त्रिलोचन, हे धूर्जटि, तेरी महिमा का कोई पार नहीं है। उस पावन स्तोत्र को स्मरण में रखते हुए हम 'मानस-महिम्न' का गान कर रहे हैं। जहां-जहां जिस तत्त्व की महिमा तुलसी ने गाई, उसी का गायन यथामति, यथासमय हम कर रहे हैं।

कल आपके सामने मैंने एक दृश्य रख दिया कि भगवान शिव वेदविदित वटवृक्ष की छांव में बैठे हैं। अपने भगवान की प्रसन्नता देखकर पार्वती सन्मुख होकर रामतत्त्व के बारे में जिज्ञासा करती है। महाराज, मुझे रामतत्त्व समझाओ। ये राम कौन है? भगवान शिव राम की महिमा का गान करते हैं, 'बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना।' की चर्चा होती है। वहां कहती है-

देखि चरित महिमा सुनत भ्रमति बुद्धि अति मोरि।

भवानी शिव को कहती है कि जिसका चरित्र देखकर और जिसकी महिमा सुनकर मेरी बुद्धि भ्रमित हो गई, वो चरित्रवान परमतत्त्व की महिमा क्या है? वो मुझे सुनाओ। वहां से फिर एक महिम्न शुरू हो रहा है। तुलसी कहते हैं, 'देखि चरित महिमा सुनत।' बाप! चरित्र देखा जाता है और महिमा सुनी जाती है। महिमा देखी नहीं जाती, वो दिखती ही नहीं। वो महसूस होती है। किसी सद्गुरु के पास हम जाते हैं तो शांति दिखती नहीं, शांति महसूस होती है। महिमावंत की महिमा गाई नहीं जाती। महिमा महसूस होती है कि क्यों मुझे शांति मिल रही है? मेरे कहने का मतलब है, महिमा देखी नहीं जाती, महिमा महसूस की जाती है। कोई आनंद को पूछे कि तुम बुद्ध के पास बहुत बैठे हो, जरा उसकी महिमा का गायन करो तो आनंद नहीं गा पाएगा। वो कहेगा, तू भी कभी आकर बैठ, तू भी महसूस कर। महिमा नहीं गाई जाती।

तो तुलसी बहुत मनोवैज्ञानिक सूत्र प्रदान करते हैं कि 'देखी चरित महिमा सुनत' मैंने चरित्र देखा और देखने से मेरा संदेह हो गया, मेरी बुद्धि भ्रमित हो गई। आपके मुख से भी मैंने सुना फिर भी यकीन नहीं आया। मैं मानने को राज़ी नहीं हुई। आज एक जन्म के बाद मैं जिज्ञासा कर रही हूं, प्रभु, मेरी जिज्ञासा को संतुष्ट करो। तो याद रखे मेरे श्रोतागण कि चरित्र देखा जाए, महिमा सुनी जाए, लीला एन्जोय की जाए। कृष्णलीला, रामलीला उसको एन्जोय करो। कोई नाटक हो तो एन्जोय करो। उसके जैसा बनने की कोशिश न करो, उसका रस लो। कथा ऐसे सुनी जाए, ऐसे कही जाए कि उसमें कुछ लम्हा ऐसा आ जाए कि घटना मेरे सामने घट रही है। कथा के वक्तव्य में मेरे लम्हें ऐसे आते हैं कि मेरे सामने ये चरित्र नज़र आने लगते हैं। मेरी आंखें डबड़बा जाती है।

मेरे श्रावक भाई-बहन, चरित्र देखो लेकिन देखने के समय कोई बुद्धपुरुष की आंख से देखो और महिमा सुनो और सुनते समय विवेकबुद्धि से सुनो। सब कुछ श्रवणीय नहीं होता, ये भी याद रखना। श्रवणभक्ति का अर्थ ये नहीं कि तुम कुछ भी सुनो। कान को भी अपना विवेक होता है। भजन बढ़ता है तब तुम कितने भी शोर में हो तो भी तुम सुनते नहीं हो क्योंकि तुम्हारे कान ने एक विज्ञान साध लिया है, जिसको मैं लिसनिंग सायन्स कहता हूं, एक श्रवणीय विज्ञान। तो कथा को एन्जोय करो। लीला का रस लो। चरित्र को देखो, उपेक्षा नहीं करनी है लेकिन चरित्र देख-देखकर किसके पीछे जाना है, किसके पीछे नहीं जाना वो निर्णय करना। चरित्र देखा जाए और महिमा सुनी जाए। पार्वती कहती है, मैंने ऐसा चरित्र देखा। 'मानस' में पांच चरित्र है जो दर्शन करने योग्य है। पांचों के चरित्र देखे जाए और पांचों की महिमा सुनी जाए ये है 'मानस-महिम्न।'

'मानस' के पांच चरित्र, जिसको मेरी व्यासपीठ 'मानस' का पंचामृत मानती है। रामचरित्र तो है ही। 'रामचरितमानस एहि नामा।' विश्वामित्र कहते हैं-

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम्।।

दूसरा चरित्र है, 'प्रथम कहा में शिवचरित।' शिव का चरित्र। वाल्मीकि कहते हैं, सीता चरित्र महत् है। यहां तुलसी कहते हैं रामचरित्र। तो सीता-राम तो 'वागर्थाविव संपृक्तौ' है। ये तो अभिन्न है। तो रामचरित्र में सीताचरित्र आ गया। दूसरा, शिवचरित्र। ये तो अर्धनारेश्वर है।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।

तीसरा है भरतचरित्र। 'भरत चरित करि नेम।' चोथा चरित्र है हनुमंतचरित्र। पांचवां है बाबा भुशुंडि का चरित्र। ये है 'मानस' का पंचामृत। इन चरित्रों का हम दर्शन करते हैं, गाकर, आंखें खोलकर, आंखें बंद करके, सुनकर कैसे भी उसका दर्शन करें लेकिन इन पांचों की महिमा सुनें। रामचरित्र का दर्शन मंगलकर्ता है।

मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।

रामदर्शन का फल है मंगल करना। भरतचरित्र का फल है प्रेम प्रगट करना।

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद प्रेमु अवसि होइ भव रस बिरति।।

हनुमंतचरित्र ऊर्जा प्रगट करता है कि खोजो सीता को, खोजो अपनी शांति को, अपनी शक्ति को, अपनी भक्ति को। बनाओ सेतु, समाज को जोड़ो। क्यों लड़ते हो? अल्लाह हो, ईश्वर हो, बौद्ध हो। 'रामायण' के गायक के नाते, एक सामान्य गायक के नाते मेरे गुरु की कृपा से मैं आपको प्रणाम के साथ कह सकता हूं कि समस्त जगत में जितने धर्म है, उस धर्म की धुरा को धारण करनेवाले भरतजी है। तुलसी का वक्तव्य है-

सकल धरम धुर धरनी धरत को।

भरत का भ्रातृप्रेम देखिए! ये इस्लाम जगत का भाईचारा है। भरत की भ्रातृभक्ति गज़ब है! इस्लाम का भाईचारा; ये तो युगों पहले की बात है। ये भाईचारा की बात सबका समन्वय है। हनुमान से ऊर्जा मिलती है। यदि मालिक ने ऊर्जा दी तो सेतु बनाओ, जोड़ो सबको।

भरत की करुणा, उसमें बुद्ध धर्म का सूत्र पहले से समाहित है। प्रेममार्गियों ने ऐसी व्याख्या दी है कि अत्यंत प्रेम आदमी को कभी-कभी जड़ता प्रदान करता है। इसलिए भरत कुछ समय के लिए माँ के प्रति कठोर हो जाते हैं। भरत की करुणा ये बुद्ध धर्म की करुणा है। भरत का मन, वचन, कर्म से किसी को ठेस न पहुंचाना ये व्रत महावीर की अहिंसा है। पारसीओं की तरह दूध में शक्कर मिल जाए ऐसे मिल जाना ये भरतचरित्र का विशेष लक्षण है। जिसमें ब्रह्मचारी को ब्रह्मचारी लगे; वानप्रस्थी को लगे कि ये तपस्वी लगता है; गृहस्थ को गृहस्थ लगे और संन्यासी को लगे कि ये यतीन्द्र लगता है। समस्त धर्मों का मानो आधारस्थान है श्री भरतचरित्र।

ईसाईयों की सेवा और प्रेम। वहां तो शायद सेवा के पीछे हेतु भी है। लेकिन भरत का प्रेम निर्हेतु है। भरत की रामसेवा, प्रजासेवा, अवधसेवा अहेतु है। ईसाई धर्म की सेवा और ईसाई धर्म की कथित प्रेम की बातें भरत में पहले से है। सिख धर्म की अनन्यता भरत का प्राण है। ग्रंथसाहेब, गुरु नानक अथवा तो दस गुरुओं के बारे में उनको तुम हटा नहीं सकते, उनकी शरणागति अनन्य है। ये निष्ठा, ये अनन्यता भरत में पहले से है। समस्त धर्म की धुरा को धारण करनेवाले है भरतजी। पूरी पृथ्वी पर भरतजी ही धर्म की धुरा धारण करते हैं, ऐसा तुलसी कहते हैं तब मुझे लगता है कि प्रत्येक धर्म का मूल जो सिद्धांत है वो भरत में है। कहीं खो गया हो वहीं ही मिलता है।

तो बाप! रामचरित्र मंगलकारी; भरतचरित्र प्रेमवर्धन करनेवाला; हनुमंतचरित्र हमारी ऊर्जा बढ़ाता है। और ऊर्जा से खोजो अपनी शक्ति को, भक्ति को, शांति को। उसके लिए तोड़फ़ोड़ मत करो; सेतु बांधो; समाज को जोड़िए।

एक बहन का प्रश्न है, 'बापू, मेरा फेमिली माताजी में श्रद्धा रखता है। मेरे घर में जो माताजी है। मेरी साद (आवाज़) सुनना। हमारे तलगाजरडा में कोई घोषणा करनी होती है तो ढोली ढ़ोल बजाकर कहता कि 'आवाज सुनो'। मैं ढ़ोली का भी काम करता हूं। मैंने कहा था कि मैंने ये-ये काम किए है। तो किसी ने पूछा है कि आपने कुम्हार का काम किया है? हां, किया है। हर सावन मास में बालू का शिवलिंग बनाकर कुम्हार आकार न दे सके ऐसी मिट्टी का लेपन करके सुबह से शाम तक पूजा करता था। ये मिट्टी काम ही था। करेण के फूल चढ़ाऊं, रूपावा नदी के तट पर मेरा शिव बिराजित हो ऐसा मैं बचपन में करता था। तो मैं कुम्हार काम भी करता था।

तो पूछा है कि मेरी फेमिली माताजी में श्रद्धा रखती है और मेरी वाईफ एक बहुत प्रचार प्राप्त संप्रदाय में मानती है। अब मुझे आपको तीन प्रश्न पूछने हैं। प्रोब्लेम उसकी फेमिली में और आया मेरे उपर! कहा है कि मेरी वाईफ को कुछ कह दो। मैं कोर्ट का भी काम करता हूं कभी वकील, कभी जज बनकर। किस तरह मेरी वाईफ के साथ सत्संग बढ़ाना ये समझाओ मुझे। आपकी पत्नी किसी संप्रदाय में मानती हो तो मानने दो। लेकिन उसे उतना कहना कि उसमें स्त्री को नहीं मानते! फिर भी इस दशा में सत्संग बढ़ाना हो तो एक काम करो। अपनी पत्नी को प्रेम दो कि तेरी भक्ति और निष्ठा बहुत अच्छी है। उसका कदम अच्छा होगा तो तेरा भी उद्धार करेगी और उसका कदम अच्छा नहीं है तो वो तुम्हारे कदम पे चलेगी। तुम उसे ऐसा प्रेम दो कि वो तुम्हारे साथ आदर रखे। उनको इतना कहना कि तुझे जिसे मानना हो उसे मानो। लेकिन सुबह में मुझे चा

बना दे और दो-तीन भाखरी बना दे। गुस्सा मत करना; समझाओ, सेतु बांधो। हनुमंतचरित्र में से ऊर्जा लेकर सेतु बांधो। आगे लिखा है, हमारे बच्चें को किस तरह संस्कार दें हम? आप दोनों संस्कारी रहो, बच्चें देख-देखकर संस्कारी हो जाएंगे। आप रोज़ लड़ाई करेंगे तो हमारा सिखाया हुआ कुछ चलेगा नहीं! आज रमेशभाई की बेटी का बेटा देख-देखकर संस्कार सीखता है। कैसे नमन किया व्यासपीठ को! मुझे लगा, मैं उतरकर प्रणाम करूं उसे। मुझे कोई पूछे कि कथा का परिणाम क्या? ये है परिणाम कथा का।

गत रात्रि मेरे पास ऐसी माहिती आई कि हिल्टन होटेल में कुछ अतिथि आएं हैं। वहां किसी का फंक्शन रहा होगा। तो उसमें काच टूट गया तो उसके कारण पूरी होटेल में सायरन बजने लगी। फिर सबको सीढ़ियों से उतारकर बाहर जाना पड़ा। सब दौड़-दौड़कर नीचे उतरें। तो सब नीचे आ गए। हमारा भट्ट परिवार, आशिष भट्ट वो अभी ब्रिटन में रहता है। वो सह परिवार आये हैं कथा में वो नीचे उतरे। उसका बेटा मानस 'रामायण' लेकर नीचे उतरा कि कुछ भी हो तो मैं इसका पाठ करूंगा। ऐसा मैं जानूं तो मुझे लगे कि अभी हम जीनेवाले हैं। साधुवाद।

तो हमें देखकर संस्कार सीखेंगे बच्चें। उनमें पड़े होंगे संस्कार तो उगकर निकलेगें। आगे लिखा है, हम दोनों के पंथ बिलग-बिलग होने से कैसे पूजा करनी? या फिर पूजा बढ़ा सके? सेतुबंध करो; हनुमंतचरित्र से उर्जा लेकर जोड़ो। आपकी पत्नी जिस इष्ट को मानती है उनको एक कोने में जगह दे दो; वो वहां पूजा करे। आपको जिन में रुचि हो, आप उसकी पूजा करे। बिगाड़ना मत। ऐसा हुआ ही है तो होने देना। किसी की उपेक्षा न करनी; किसी का खंडन-मंडन न करना। आप दोनों लड़ाई करेंगे तो बच्चों पर गलत संस्कार पड़ेंगे इसलिए हमें सेतु बांध देना चाहिए। बहन भले किसी को भी माने, तू माताजी को मत छोड़ना। जिस दिन जगदंबा छोड़ी तब से बच्चें कहीं के नहीं रहेंगे! ऐसे समय में माँ ही काम आएगी। सब पिता चले जाएंगे! शंकराचार्य ने कहा है-

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।।

पुत्र कुपुत्र हो जाए तो हो जाए, माँ कुमाता नहीं होती। शंकराचार्य की देवी की उपासना। शंकराचार्य की जो भी उपासना हो लेकिन विशेष रूप में शक्ति उपासक ही है। पीठों का नाम भी शक्ति के अनुरूप है शारदामठ, ज्योतिर्मठ। तो जगदंबा को सदा याद रखो। तो माताजी की भक्ति चालू रखना। आपकी पत्नी जिसको माने उसे मानने दो; घर में विवाद नहीं होना चाहिए। धर्म किसे कहते हैं? धर्म आदमी के स्वभाव को कहते हैं। धर्म याने मेरी निजता। 'भगवद्गीता' ने कहा है कि स्वभाव ही अध्यात्म है।

तो हनुमानजी के चरित्र देखने से ऊर्जा पैदा होती है। ऊर्जा से खोजो शांति को, शक्ति को, भक्ति को और बांधो सेतुबंध। और अपने में कुछ ठीक वस्तु नहीं है उसके नाश के लिए नहीं लेकिन उससे मुक्त होकर हम निर्वाण प्राप्त कर सके इस हेतु से उसके साथ थोड़ा सात्त्विक संघर्ष करो।

तो रामचरित्र मंगलकारी; भरतचरित्र प्रेमवर्धक; हनुमंतचरित्र ऊर्जा प्रदान करनेवाला और शिवचरित्र कल्याणकारी। शिव हमें कल्याण की दीक्षा देते हैं। 'शिव' का अर्थ ही होता है कल्याण। भुशुंडिचरित्र है गुरुनिष्ठा में बढ़ोतरी हो। भुशुंडिचरित्र के अभ्यास और श्रवण-मनन से प्रत्येक व्यक्ति को अपने बुद्धपुरुष में निष्ठा बढ़ती है। कोई चूक हो भी गई हो तो एक चौपाई सदा तुम्हें दिल में याद दिलाएगी, जो तुलसी ने लिखी है-

एक सूल मोहि बिसर न काऊ।
गुरु कर कोमल सील सुभाऊ।।

भुशुंडिजी कहते हैं, हे गरुड, एक पीड़ा शूल की तरह मुझे सदा चूभती है और मेरी स्मृति बनाई रखती है। मेरे गुरु का स्वभाव अत्यंत कोमल था, शीलवान थे और मैंने उसके साथ इतना बड़ा अविवेक किया था। ये जो स्मृति है उनकी अनन्यता को मज़बूत करने लगी थी। इसलिए भुशुंडि चरित्र हमें निष्ठा में बढ़ोतरी करने का बोध देती है।

एक प्रश्न है। एक दिन बात हुई थी कि उद्धव और कृष्ण एक लगते हैं, जो भगवतकार ने कहा, उद्धव और कृष्ण देह-आकार में समान थे। लेकिन अंतर की गहराई में दोनों समान नहीं है ऐसा प्रतीत होता है, क्योंकि बाह्य पहचान की निकटता हुई हो तो भी अंतःपहचान बाकी हो ऐसा लगता है। आप कुछ कहो।

बाह्य समानता तो दिखती ही है। ब्रह्मलीन अतुल कृष्ण गोस्वामीजी का ये वक्तव्य मैंने कल पुण्यस्मरण के साथ कहा था। आंतरिक साम्य भी शायद है। जैसे कि ये सखा है, सखत्व भी है दोनों में और भ्रातृत्व भी है दोनों में कृष्ण चरित्र में। राम और भरत दो है लेकिन 'मानस' का दर्शन करते हुए पता लगता है कि एक है। जिस दिन राम का जन्म, उसी दिन भरत का जन्म। दोनों का वर्ण एक है। भरत का शरीर भी श्यामवर्ण है और राम का वर्ण भी श्याम है।

तुलसी के मतानुसार दोनों का शील-स्वभाव एक है। दोनों का नामकरण संस्कार एक दिन पर। दोनों का चूडाकरण संस्कार भी साथ-साथ हुआ। दोनों का उपवित संस्कार साथ-साथ। दोनों का गुरुकुल में प्रवेश साथ-साथ। दोनों का विद्याभ्यास साथ-साथ। दोनों सखाओं के संग मृगया करने साथ में जाते थे। दोनों की शादी एक साथ और अयोध्या आगमन भी साथ में। दोनों का वनवास एक साथ। राम वन गए तो भरत कहां भवन में रहे?

भरतु भवन बसि तप तनु कसहीं।

नंदीग्राम की पर्णकुटि में रहे। दोनों का उदासीन व्रत एक है। शायद भरत का व्रत राम से ऊंचा है क्योंकि राम के साथ तो सीता भी है, भरत के साथ मांडवी नहीं है। सीता निरंतर सेवा में है, यहां मांडवी सेवा में नहीं है। जरा ऊंचाई दिखती थी भरत की। दोनों का वियोग अरस-परस। दोनों के केन्द्र में पादुका। राम पादुका रखते थे। चित्रकूट में कृपा करके ये पादुका भरत को दी। दोनों के केन्द्र में पादुका है; दोनों वियोग में है; दोनों रोते रहते हैं। राम ने शिव का जड़ धनुष्य तोड़ा, भरत ने कैकेई की जड़ बुद्धि को तोड़ी। दोनों का अवतारकार्य भी एक लगता है। रामचरित्र कई प्रकार का फल देता है। 'विमल वैराग्य संपादनो नाम।' रामचरित्र गाएगा तो उसको मंगल कार्यों में भगवान निर्विघ्नता प्रदान करेंगे। भरतचरित्र गाएंगे उसका दुःख, दारिद्र्य और दंभ मिट जाएगा।

तो भरत और राम में बहुत एकता है। आपको वैसे ही उद्धव और कृष्ण में बहिर् साम्य दिखे और भीतर में वैसा लगे तो मैं एक ही मुद्दा कहूंगा कि दोनों की अंदर की धारा भी एक होनी चाहिए। क्योंकि जैसे राम ने पादुका भरत को दी, वैसे कृष्ण ने पादुका एकमात्र उद्धव को दी। जब उद्धव से बिदा हुई, भगवान कृष्ण निर्वाण पद के यात्री बन गए और पादुका का दान करके कहा कि आप बद्रिकाश्रम जाइए और ये पादुका ले जाओ। कोई आधार चाहिए हम जैसों को। जो केवल निराकार में डूबे हैं वे तो इतने ऊंचे हैं कि उपर देखकर हम उनको प्रणाम कर सकते हैं। बाकी हम जैसे लोगों को तो कोई आधार चाहिए। इसलिए उद्धव जैसे बुद्धिमान को भी आधार की ज़रूरत पड़ी तो गोविंद ने उनको पादुका दी। कुछ-कुछ बातों में भिन्नता लगे तो ये जीव है, ये शिव है; ये अंश है, ये अंशी है। कृष्ण तो निराकार भी है और साकार भी है। लेकिन कुछ मुद्दो में दोनों एक है।

बाप! रामजन्म की कथा गा लें। भगवान शिव ने कथा का प्रारंभ किया है। परमात्मा निराकार से साकार हुआ, निर्गुण से सगुण हुआ। जगत का बाप किसी का बेटा बना वो क्यों बना? कार्य-कारण सिद्धांत पूरे जगत को लगता है। ब्रह्म को लागू नहीं होता। फिर भी शिव ने कहा, देवी, पांच कारण है। पहला कारण है, जय-विजय, वैकुंठ के द्वारपाल उनको मिला सनतकुमारों का श्राप, जो रामजन्म का कारण बना। दूसरा कारण है, सती वृंदा, जलंधर की धर्मपत्नी, उसने विष्णु को श्राप दिया इसलिए राम अवतार लेना पड़ा। तीसरा कारण है, नारद ने श्राप दिया भगवान को कि तुम्हें नर अवतार लेना पड़ेगा। चौथा कारण है, मनु और शतरूपा की कथा, जिसमें दोनों ने मांगा कि अगले जन्म में आपके समान पुत्र की प्राप्ति हो। पांचवां और अंतिम कारण 'मानस' में लिखा है, राजा प्रतापभानु को ब्राह्मणों ने श्राप दिया उसी कारण भगवान को अवतार लेना पड़ा। अथवा तो अकारण वो आते हैं, जब उसको इच्छा होती है कि लीला करूं। मैं एक हूं उसमें अनेक हो जाऊं।

रावण, कुंभकर्ण, विभीषण तीनों ने बड़ी तपस्या की। शिव समेत ब्रह्मा ने उसको वरदान दिए। दुर्गम वरदान प्राप्त किए, लेकिन रावण वरदान का दुरुपयोग करने लगा। संसार में भ्रष्टाचार, अत्याचार बढ़ गया। पातक से पृथ्वी भर गई। पृथ्वी बहुत दुःखी हुई। पृथ्वी ने गाय का रूप धारण किया। रावण के जुल्म से थकी हुई पृथ्वी ऋषि-मुनियों का द्वार खटखटाने लगी। ऋषि-मुनियों ने कहा कि रावण के जुल्म से हमारा चिंतन-मनन भी रुक गया है, इतना त्रास है दशानन का। सब मिलकर देवताओं के पास गए। देवताओं ने कहा, हमारे पुण्य खत्म होनेवाले हैं ऐसा लगता है। रावण आता है तो हम मेरु कंदरा में छीप जाते हैं इतना भय और आतंकित वातावरण है। सब मिलकर ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा ने कहा, मैंने वरदान तो दिए लेकिन दुरुपयोग करेगा ये पता नहीं। अब हम सब मिलकर परमतत्त्व को पुकारे। ब्रह्मा की अगवानी में पूरा मुनिकुल, सुरकुल सबने मिलकर पुकार किया कि हे प्रभु, अब हमारे कष्ट का निवारण करो।

परम को पुकारा गया। आकाशवाणी हुई कि डरो ना, कोई कारण नहीं है मेरे प्रगटने का, फिर भी कुछ कारण है। मैं अयोध्या में प्रगट होऊंगा। धर्म की पुनःप्रतिष्ठा होगी। ब्रह्माजी और देवगण प्रसन्न हुए। ब्रह्माजी ने देवताओं को सूचना दी कि भगवान अयोध्या में प्रगट हो उससे पूर्व हम बंदर-भालू का रूप लेकर भगवान से पहले धरती पर उसकी प्रतीक्षा करेंगे। पृथ्वी पर देव के अंश सब आ गए और तुलसीजी हमे लिए चलते हैं श्रीधाम अयोध्या, जहां प्रभु का प्रागट्य होनेवाला है।

रघुवंश का ये परम पावन शासन। वर्तमान राजा महाराज दशरथ; कौशल्यादि प्रिय रानियां। सब प्रकार से संपन्न है। लेकिन एक ग्लानि है कि पुत्र नहीं है। किसके सामने ये दिल की बात कहूं? महाराज दशरथजी एक दिन अपने दिल की बात कहने के लिए गुरुद्वार पहुंचे। मेरी व्यासपीठ कहती है कि मन की कुछ समस्याएं ऐसी है कि जब हम जमाने को न कह पाएं तब हम किसी बुद्धपुरुष के पास जाकर निवेदन करें। आज राजद्वार गुरुद्वार जा रहा है। अवधपति ने महाराज वशिष्ठजी के चरणों में प्रणाम किया। वशिष्ठजी को राजा ने कहा कि चौथी अवस्था हुई है, हमारे भाग्य में पुत्रसुख नहीं है क्या? रघुवंश का, अयोध्या का कोई वारिश नहीं? धैर्य धारण करो महाराज, आप आकर कहते कि मुझे पुत्र नहीं है तो ब्रह्म को आपके आंगन में खेलता कर देता। अब धैर्य धारण करे। आपके घर चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। पुत्रप्राप्ति के लिए आपको एक यज्ञ करना होगा। शृंगी ऋषि को बुलाया। यज्ञ किया। यज्ञ की खीर निकली। यज्ञदेव ने वशिष्ठजी को दी, वशिष्ठजी ने हस्तांतरित करके राजा के हाथ में दी और कहा कि रानियों को बांट दो। प्रसाद की खीर का आधा प्रसाद कौशल्या को दिया। आधे का दो भाग करके पा भाग कैकई को दिया और पा के पुनः दो भाग करके कैकई और कौशल्या के हाथों से प्रसन्नता से सुमित्रा को दिलवाया। तीनों रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी।

अयोध्या में मंगल शगुन होने लगे। कुछ काल बीता और हरि को प्रगट होने की बेला आई। जोग, लगन, ग्रह, बार तिथि अनुकूल हुए। त्रेतायुग, चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न का भास्कर। मंद, सुगंध, शीतल वायु बहने लगा। वातावरण मंगलमय हुआ है। अवधवासी एक-दूसरे से बातें करते थे तो आंखें भर जाती थी कि आज कुछ होनेवाला है। बिलकुल मध्याह्न के समय माँ कौशल्या के भवन में एक उजाला फैलने लगा। माँ सोचने लगी कि क्या हो रहा है? देखते-देखते उजास में एक आकार निर्मित होने लगा और माता अपनी आंख को मचलकर ठीक से देखने की चेष्टा करती है तो एक चतुर्भुज विग्रह माँ के सामने प्रगट हुआ था। अनंत ब्रह्मांड नायक परात्पर ब्रह्म राम, विश्व का भगवान, विश्व का परमात्मा, विश्व का ब्रह्म कौशल्या के सामने प्रगट हुआ। तुरंत गोस्वामीजी की लेखनी नाचने लगी है।

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

प्रभु प्रगट हुए। माँ करबद्ध खड़ी हो गई कि क्या है ये? किस प्रकार से मैं स्तुति करूं? हे अनंत, तुम्हारे रोम-रोम में ब्रह्मांडों का दर्शन हो रहा है ऐसा ब्रह्म मेरे उदर में निवास कर रहा था और प्रगट हुआ? कौन मानेगा ये बात? माँ को जैसे-जैसे ब्रह्मत्व की महसूसी होने लगी, भगवान मुस्कुराने लगे। 'सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना।' माँ के सुजान बचन सुनकर हरि रोने लगे। और प्रभु के रुदन की आवाज़ सुनकर ओर रानियां संभ्रम दौड़ आई कि माँ ने तो प्रसवपीडा का कोई संदेश नहीं भेजा और सीधा बालक रो रहा है?

सब रानियां, दास-दासियां दौड़कर आ गई। माँ भावसिंधु में डूबी है। बालक के रूप में राघवेन्द्र रुदन कर रहे हैं। और आया ब्रह्म, हुआ सबको भ्रम! अब उसका निराकरण कौन करे? इसलिए तो कोई गुरु चाहिए जो निराकरण कर दे। कुछ लोगों ने जाकर महाराज दशरथजी को कहा कि महाराज, बधाई हो, हमारी कौशल्या देवी के यहां लाला भयो है। पहली अनुभूति राजा को हुई, ब्रह्मानंद। 'ब्रह्मानंद' ज्ञानीओं का शब्द है। 'परमानंद' भक्तों का शब्द है। ये ब्रह्म है कि भ्रम, जल्दी उसका निराकरण करे। वशिष्ठजी आये और कहा कि महाराज, जो होना था वो हुआ है। आप धन्य है, ब्रह्म बालक बनकर कौशल्या की गोद में आया है। इन शब्दों को सुनकर राजा परमानंद में डूब गए और कहा कि बाजेवालों को बुलाओ, शहनाईयां बजाओ। अवध में बधाईयां शुरू हुई। आज लंडन की इस व्यासपीठ से आप सभी को रामजन्म की बधाई हो।

भवानी शिव को कहती है कि जिसका चरित्र देखकर और जिसकी महिमा सुनकर मेरी बुद्धि भ्रमित हो गई, वो चरित्रवान परमतत्त्व की महिमा क्या है? वो मुझे सुनाओ। वहां से फिर एक महिम्न शुरू हो रहा है। चरित्र देखा जाता है और महिमा सुनी जाती है। महिमा देखी नहीं जाती, वो दिखती ही नहीं। वो महसूस होती है। किसी सद्गुरु के पास हम जाते हैं तो शांति दिखती नहीं, शांति महसूस होती है। मेरे कहने का मतलब है, महिमा देखी नहीं जाती, महिमा महसूस की जाती है।

गंगा है प्रेमधारा, भक्तिधारा

अभी जैसे हरीशभाई ने सूचना दी कि कैलास में हिमालय में सातसौवीं कथा के बाद तलगाजरडा की ओर से एक उपक्रम चला कि प्रत्येक कथा का सार एक छोटे से पुस्तक में संपादित किया जाए 'रामकथा' के नाम से। और हमारे परम स्नेही नीतिनभाई वडगामा और उसकी पूरी टीम जो अहेतु सेवा में लगे हैं; ये पूरी टीम प्रतिबद्धता से काम कर रही है। इस कथा की शृंखला में कमीजला- गुजरात में भाणतीर्थ में जो कथा गाई गई थी 'मानस-रघुवंश', उसका सार जो संपादन किया वो आज लोकार्पित हुआ प्रसाद के रूप में। मैं मेरी बहुत ही प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। और यहां नीतिनभाई भी हर वक्त कहते हैं, हरीशभाई ने भी कहा, मैं भी कहता हूं कि ये प्रसाद है; उसकी आपको कोई कीमत चुकानी नहीं है। केवल, केवल और केवल प्रसाद के रूप में सबको दिया जाता है। जो व्यवस्था की गई है कि आप अपना एड्रेस भेजे अथवा तो जो व्यवस्था है उसके मुताबिक आपको ये पहुंचाई जाती है। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

रोज की तरह आदरणीय बापा गतदिन की कथा का अंग्रेजी में सारांश पेश करते हैं। बापा को प्रणाम। कल सायंकाल को जो शास्त्रीय संगीत का एक कार्यक्रम पेश किया गया। कौशिकी चक्रवर्ती बहुत सुंदर गाती है। निरंतर विकसित होती जाती है। बड़ा सात्त्विक कार्यक्रम था। बड़ी निर्मलता से गाया जा रहा था। न कोई रजोगुण का स्पर्श था। केवल संगीत ही था। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। और कल सायंकाल के कार्यक्रम के प्रारंभ में बहन मीरां ने 'रामचरितमानस' में रामराज्य के पश्चात् जो शिव ने स्तुति गाई, 'जय राम रमारमनं समनं। भव ताप भयाकुल पाहि जनं।' उस स्तुति पर सुंदर सात्त्विक नृत्य पेश किया। मेरी प्रसन्नता। खुश रहो बाप!

एक बड़ा प्यारा प्रश्न है कि 'बापू, कथा के बीच में एक दिन आप ऐसा बोल गए कि कृष्ण काठियावाडी है। बहुत विवेक से अपना अनन्य भाव प्रगट किया है। मैं नमन करता हूं। शुद्ध हिन्दी में पूछा है कि 'बापू, हम व्रजवासी है, हमारे कृष्ण को क्यों छिन लेते हो? और आपने कथा में उसी दिन या किसी दिन कहा था कि मथुरा के भोजनगृह में भोजन के समय कृष्ण रो पड़े, उसको व्रज का गोरस याद आया। तो कृष्ण इतना व्रज में डूबा हुआ रहता है उसको आप काठियावाडी क्यों बनाते हैं?' और उनकी श्रद्धा रही होगी तो लिखा है कि 'व्यासपीठ से बोले हुए शब्द कहीं सच तो नहीं हो जाएंगे?' लेकिन नहीं; ये तो जैसे मैं कहता हूं कि मेरा तलगाजरडा का राम, तो इसका मतलब वो अयोध्या का मिट नहीं गया। राम सबका है। लेकिन ये मेरी निजता है। और कृष्ण ने शेष जीवन, बड़ा लंबा जीवन द्वारिका में बिताया है। हां, सूर ने ज़रूर कहा है कि कृष्ण कहीं भी रहा और कहता है, 'उधो, ब्रज बिसरत नाहीं।' मुझे वृंदावन भूला नहीं जाता। ब्रजवासी, अनन्य उपासकों की एक निष्ठा भी है कि वो मथुरा गया, द्वारिका गया, कुरुक्षेत्र गया, हस्तिनापुर गया, जहां गया; लेकिन ब्रज के संतों का तो ये भरोसा है कि वृंदावन को छोड़कर कृष्ण एक कदम भी कहीं गया ही नहीं। और आप कहे कि वृंदावन छोड़कर कृष्ण कहीं गया ही नहीं। तो मेरे द्वारिका का क्या होगा? मैं भी तो पूछ सकता हूं।

राम के अनन्य उपासक कहते हैं कि चित्रकूट पहुंचने के बाद भगवान चित्रकूट छोड़कर कहीं गए ही नहीं। तो पूरे अवतारकार्य का क्या होगा? ये अपना निजभाव है। तो आप जरा भी चिंता न करे लेकिन एक बात ज़रूर कहूं कि सौराष्ट्र ने कृष्ण को रखा बहुत अच्छे ढंग से। और आज भी सौराष्ट्र में एक-दो कोम ऐसी है कि कृष्ण के निर्वाण के बाद जो काले कपड़ें पहने वो अभी उतारे नहीं है। और पूछो कि क्यों? तो बोले कि अभी हमने शोक कहां दूर किया है? एक विशेष ज्ञाति की बहन-बेटियां कुंआरी हो तो भी काले कपड़ें पहनती है क्योंकि कृष्ण की बिदाई ने उनको सदा के लिए उदास कर दिया है। तो कृष्ण सबका है। गोलोकवासी कह सकते हैं कि कृष्ण हमारा है। वैकुंठवासी कह सकते हैं कि कृष्ण हमारा है। स्वयं कुरुक्षेत्र बोले, भूमि यदि मुखर हो जाए तो कहे कि कृष्ण हमारा है; योगेश्वर मेरा है। तो ये अपना निजीभाव है; गभराइएगा मत।

जन्म कहां लेना, हमारे हाथ में नहीं है लेकिन निर्वाण कहां लेना ये हमारे हाथ में है। कृष्ण एक मानवोत्तर परमपुरुष की दृष्टि से देखो तो जन्म उसने कहीं भी लिया, लेकिन निर्वाण तो वो काठियावाड की भूमि पर ही लेता है। तो आप जरा भी चिंता न करे, कृष्ण सबका है। ये सबमें समानरूप में है। परमतत्त्व को और बुद्धपुरुष को आप अपनी फ्रेम में नहीं लगा सकते। ये सबका अपना दर्शन होता है। सबको कहने दो कि हरि मेरा है। उत्तरप्रदेश, बिहार में लोग गाते हैं, 'गोबिंद मेरो है, गोपाल मेरो है।' तो फिर हमारा क्या होगा? क्या वो हमारा नहीं? वो सबका है। मैं तो ऐसे ही बोला कि कृष्ण काठियावाडी है, तो वो ब्रजवासी मिट नहीं जाता और इस पद को मैं पूरा आदर देता हूं, 'उधो, ब्रज बिसरत नाहीं।' ये जड़मति का निवेदन नहीं है, ये कृष्णार्पित चित्त का निवेदन है।

परमात्मा के साथ अपना निजीभाव जोड़ो। फूल तुम्हारे बाग का हो सकता है, महक तुम्हारे बाग की बंदी नहीं हो सकती। फूल आपका है, लेकिन कोई पवनपुत्र अपने वायु के द्वारा उसकी खुश्बू को पूरी दुनिया में फैला दे तो खुश्बू पर किसी एक का नहीं, सबका अधिकार है। ब्रज का भाव अखंड रखिएगा। लेकिन कृष्ण सबका है। उस पर कोई दावा नहीं कर सकता। कृष्ण हवाई जहाज का ओक्सिजन नहीं है कि जिसको प्राणवायु कम पड़े वो खींचकर अपने मुंह में लगा दे। कृष्ण तो विश्व का व्यापक प्राणवायु है। हमारे और आपके नासिका में, फ़ेफ़डे में जितनी ताकत हो उतना तुम उसको ले सकते हो।

कृष्णप्रेम पूर्ण है, हम तो हिस्से में बटे हुए है! कोई हिन्दु, कोई ईसाई, कोई सिख, कोई ये संप्रदाय, कोई वो संप्रदाय। यहां कई लोग तथाकथित छोटे-छोटे पंथ-विचार के हैं जो परमपावनी प्रवाह को तोड़ने का निंदनीय काम कर रहे हैं! कथा हर साल होनी चाहिए ताकि जितने को बचा सकते हैं, बचा लें। कोई ये कहे और सामान्य जनता में ये डालना चाहे कि कृष्ण भी छोटा है, हमारे पंथ का जो परमात्मा या जो कहते हैं उसको वो कृष्ण से भी उपर है, तो ऐसा मानना मत। पिट-पिटकर कह रहा हूं, सुनिएगा। आपका जो भी हो, हमारा प्रणाम है लेकिन तुम क्या समझ बैठे हैं कृष्ण को? क्या समझ बैठे हो राम को? अभी पलने में झूला खा रहे हो आप! आप सोचिएगा।

अपना-अपना रास्ता कोई भी निकाले, कोई चिंता नहीं। लेकिन दूसरे को काटो मत। मैं इस्लाम को आदर देता हूं, लेकिन मेरी जो निजता है उसको मैं थोड़ा छोड़ सकता हूं? सब मुझे अपने लगते हैं। तुम्हारी निजता को तोड़े, तुम्हारी जो प्रवाही निरंतर धारा है उसको कोई तोड़े तो सविनय प्रश्न तो पूछो कि किस शास्त्र में लिखा है? किस प्रमाण से आप कहते हो कि राम-कृष्ण सामान्य अवतार है? और जिसके जो इष्ट हो वो उनको मुबारक! लेकिन वो ही श्रेष्ठ ऐसा मानो तो ये पाखंड है। ऐसा जब हो रहा है तब लगता है कि हम कितने छोटे-छोटे होते जा रहे हैं! एक रहो। किसी का ये मंदिर है, प्रणाम करो। लेकिन एक-दूसरे टकराते क्यों हो? अथवा तो सामनेवाला टकराता नहीं तो उसको तोड़ने की कोशिश क्यों करते हो? उदारता को कमज़ोरी मत समझिए। उदारता की अपनी एक बहादुरी होती है। ये बहादुरी आक्रमक नहीं होती है, विनयपूर्वक होती है।

रुमी ने एक वाक्य कहा कि कभी ये मत कहो कि मैं महासागर का बिंदु हूं, लेकिन तुम बिंदु हो तो भी बिंदु में स्वयं महासागर हो। 'चिदानंदरूप: शिवोऽहम् शिवोऽहम्।' लेकिन हमारी छोटी सोच है। आपके इष्टदेव, आपके पंथ जो हो, आपको मुबारक; मुझे क्या इससे लेना-देना? लेकिन एकत्व बना रहे। जिस देश में रहे उसका आदर, उत्कर्ष पूरे दिल से करते हुए भीतर से हिन्दुस्तानी रहे ये ज़रूरी है। लेकिन अपने को अकारण अच्छा दिखाने के लिए आप कृष्ण को ऐसा कहो? कई पंथों में मैंने देखा कि उसके मूलपुरुष ने तो कहा कि कृष्ण ही हमारा इष्टदेव है। उसी धारा में आनेवाले कहते हैं कि कृष्ण तो ठीक है, कृष्ण कुछ नहीं है! किसको बना रहे हो? मुझे कंठी बांधनी हो तो सबको ओवरटेक कर लेता इतनी सालों में। मैं परिवर्तित किए बिना प्रेम करता हूं। मुझे क्या लेनादेना?

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
मेले में अकेला, अकेले में मेला।

तो परमतत्त्व सबका है। आसमान सबका है। सूरज, चांद, पृथ्वी सबकी है। तो कृष्ण सबका है। तो आपके भाव को मैं प्रणाम करता हूं कि आपने अच्छा सवाल पूछा।

अब 'मानस-महिम्न।' बिलग-बिलग तत्त्वों की महिमा 'मानस' ने गाई, उसमें कुछ ओर आगे बढ़ूं।

सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई।
बिबुध नदी महिमा अधिकाई।।

भगवान राम बोल रहे हैं। वनवास की यात्रा गंगातट पर पहुंची है। राम के साथ तीन लोग है। सुमंत रथ लेकर वन में छोड़ने आया है। सुमंतजी को, लक्ष्मणजी को और सीताजी को गंगा के तट पर राम स्वयं अपने मुख से गंगा की महिमा सुनाने लगे। देखिए, ये गंगा। एक बंदर रावण की सभा में अंगदरूप में कहता है कि हे रावण, गंगा केवल नदी नहीं है; कल्पतरु केवल वृक्ष नहीं है; कामदुर्गा पशु नहीं है। जो तेरी नगरी को जलाकर गया वो हनुमान केवल बंदर नहीं है; अमृत केवल पेय नहीं है, ज्यूस नहीं है।

गंगा तो देखने में सरितारूप है, लेकिन गंगा की महिमा अद्‌भुत है! भारतवर्ष की, इस धरती की पूरे विश्व में गंगा पहचान है। गंगा बहुत प्रदूषित होती जा रही है! महिमावंत है गंगा, जिसका वर्णन भगवान राम ने अपने मुख से किया है। और 'विनयपत्रिका' में तो तुलसी कहते हैं गंगा के बारे में। एक बस्तु याद रखना, गंगा सबको प्रिय है, रामानुज ने भी गंगा के उपर स्तोत्र लिखे; वाल्मीकि ने भी स्तोत्र लिखे; शंकराचार्य तो पागल हो जाते थे गंगा को देखकर! तो गंगा हमारी बहुत बड़ी प्रवाही परंपरा है। पवित्रता तो उसकी कोई मार नहीं सकता। गंगा की महिमा का एक पद गोस्वामीजी लिखते हैं, 'जय जय भगीरथनन्दिनि।'

आप कहेंगे कि भगवान राम को गंगा की महिमा का पता कैसे लगा? वनवास के दौरान पहली बार गंगा के तट पर गए हैं लेकिन इससे पहले भी गए हैं। अहल्या का उद्धार करके राम जनकपुर की यात्रा करते हैं, तो विश्वामित्र के संग पदयात्रा करते हुए स्पष्ट रूप में दो जिज्ञासा करते हैं। एक तो अहल्या को चट्टान के रूप में देखकर जिज्ञासा करते हैं कि हे विश्वामित्रजी, ये किसका आश्रम है? ये चट्टान की तरह यहां कौन पड़ा है? और दूसरी जिज्ञासा, गंगा के तट पर जाकर कहा कि ये कौन नदी है, मुझे समझाइए। विश्वामित्र मुस्कुराने लगे कि आपके चरण से निकली नदी का परिचय मुझे कराना है? 'नखनिर्गता मुनिबन्दिता त्रैलोकपावन सुरसरी।' तो भगवान राम विश्वामित्र को कहते हैं कि मुझे गंगा की महिमा सुनाओ, ये कैसे प्रकट हुई? कब प्रकट हुई? कौन आया? जिस प्रकार से सुरसरी नीचे आई धरती पर उसकी गाधीपुत्र विश्वामित्र ने राम को कथा सुनाई।

पूरे कुल का उद्धार करना था; सागर के इतने अतृप्त को तृप्त करना था। हे राघव, पीढ़ियां बीत गई, लेकिन उसका उद्धार कौन करे? आखिर में भगीरथ ने तपस्या की और गंगा धरती पर आने के लिए तैयार हुई। गंगा को प्रश्न उठा कि मैं जाऊं तो सही धरती पर लेकिन मुझे पकड़ेगा कौन? मैं तो भयंकर प्रपात हूं। जो बीच में आया उसको पाताल में डाल दूंगी। यदि मुझे पकड़नेवाला कोई मिल जाए तो मैं तैयार हूं। कोई तो चाहिए ही। भगीरथ ने यात्रा की हिमाचल की; कैलास की तलेटी में खड़ा रहा; सुना कि इस पर बैठा महादेव ही मेरा काम कर सकता है। और महादेव को पुकारा। समय जाने लगा।

आशुतोष भगवान शिव प्रसन्न हुए। खीण में दृष्टि की तो भगीरथ प्रार्थना कर रहा है। शिवजी ने कहा, बच्चा, बोल। तो उसने कहा, महाराज, मेरे पितृओं के उद्धार के लिए गंगा-अवतरण के लिए तो तैयार है लेकिन कहती है कि मेरा सीधा प्रपात पृथ्वी नहीं सह पाएगी; कोई उसको समा ले। महादेव तो समष्टि का अहंकार है। जैसे उपर से तूफ़ानी प्रवाह आया; एक नहीं, एक लाख सुनामी जैसा प्रवाह आया और निकट आई कि महादेव ने अपनी जटा खोलकर चारो ओर फैला दी। जैसे गंगा जटा में उतरी और महादेव ने जटा बांध दी। बाबा बैठ गये। बहुत समय बीता फिर आंख खोली और कहा, भगीरथ, गंगा आ गई ना? भगीरथ ने कहा, आई कहां है? आपने जटा में छिपा दी है! उसको मुक्त करो भगवान! गंगा भी अंदर अकुला रही थी। तब कहते हैं, महादेव ने एक लट छोडी। गंगधार बहने लगी है और गंगाजी शिव से कहती है, मुझे क्षमा करे। अब तुम्हारे सिर पर आने के बाद क्यों मुझे धक्का देते हो? अब मैं कहां जाऊं? मेरा गंतव्य क्या है? शिवजी ने कहा, इस लड़के के पीछे-पीछे जा। ये जहां ले जाए वहीं तुझे जाना है।

भगीरथ आगे है, पीछे श्री गंगाजी है और हरिद्वार और हृषिकेश धीरे-धीरे जा रही है। एक महात्मा वहां बैठा था। अब चराग तो जहां रखो वहां उजाला देता है। भगीरथ ने उस बापू को प्रणाम किए और कहा, आप कहां से बीच में आए? आप हट जाइए। महात्मा ने कहा, मैं क्यों हट जाऊं? कौन आ रहा है? बोला कि गंगाजी आ रही है। महात्मा ने बोला, उसको कहो कि मुझे ओवरटेक करके चली जाए। गंगाजी को लगा कि बीच में ये कौन महात्मा बैठा है? तो वो मानी नहीं और जिद्द की तो महात्मा ने गंगा को अपनी जांघ में समा ली। भगीरथ ने पीछे देखा तो गंगा नहीं थी! फिर नौबत आई कि ये क्या हो रहा है? भगीरथ ने महात्मा के पैर पकड़े और कृपालु संत को दया आई और फिर अपनी जांघ से गंगा को मुक्त की तब जाते-जाते भगीरथ का काम किया। भगीरथ वो है, जो पुरुषार्थ करे। और जगत में जो-जो पुरुषार्थ करेंगे इनके कुल का गंगा उद्धार करेगी। इसीलिए गंगा फिर आगे बढ़ती है। ये महिमा गंगा की है, जो तुलसी ने गाई है-

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि- चय चकोर-चन्दिनि,
नर-नाग-बिबुध- बन्दिनि जय जहनु बालिका।

अब उसका आध्यात्मिक रूप। गंगा है भक्ति; प्रेमधारा, भक्तिधारा; तुलसी ने उसको गंगा कहा। कथा को गंगा कहा, भक्ति को गंगा कहा, प्रीत को गंगा कहा। लेकिन भक्तिरूपी गंगा कोई शिव के मस्तिष्क में ही रहती है। कोई-कोई अधिकारी के सामने शिव लट बिखेरते हैं; सबको नहीं मिलती। जो अधिकारी आयेगा, योग्यता प्राप्त जो आयेगा उसके सामने भक्ति का दान शिव करते हैं।

शिव भक्ति के भी दाता है और मुक्ति के भी दाता है। लेकिन जिसे शिवकृपा से भक्ति मिले इस भक्ति को, इस वरदान को भगीरथ की तरह सार्वजनिक कर दो; तुम्हारे घर में लेकर बैठ मत जाओ। विनोबाजी कहते थे, समूह प्रार्थना होनी चाहिए, समूह खेती होनी चाहिए, समूह श्रम होना चाहिए, समूह शिक्षा होनी चाहिए। भगीरथ ने इस गंगा को व्यापक रूप में कर दिया। इतनी व्यापक बनाई कि खुद व्यापक हो गई; समंदर में विलीन हुई। तो भक्ति याने कोई भी विद्या जो शिव की कृपा से प्राप्त होती है; कोई भी कला आपको ग्रंथ से मिली हो, गुरु से मिली हो, गुफा से मिली हो, लेकिन कोई भी कला और विद्या का मूल दाता शिव है। उसको वितरित किया जाए। सद्‌विद्या बांटी जाए; कई ज़रूरतमंद है उसको ये विद्या परोसी जाए। दो-दो बूंद सबको दिए जाए।

शंकर की कृपा से जिसको भक्ति का वरदान मिला है वो भक्ति एक संजीवनी है। और जो राममंत्र ले ले, दो चौपाई ले ले, 'भागवत' का श्लोक सुन ले, अच्छी कविता सुन ले, अच्छा लेख पढ़ ले वो बार-बार हमें सचेत करनेवाली औषधियां है। ये सबको संजीवनी प्रदान करती है, हमको जीवित रखती है। अतिशयोक्ति लगती है, लेकिन मैं जो कहता हूं वो मेरी जिम्मेवारी से कहता हूं।

रामकथा होनी चाहिए। भगवद्कथा होनी चाहिए। सद्वार्ताएं होनी चाहिए। किसी भी विद्या में सद्वाचन होना चाहिए; सद्लेखन, सद्गायन होना चाहिए। सब सद्प्रवृत्ति होनी ही चाहिए।

तो तुलसी रामभक्ति को गंगा कहते हैं; रामकथा को गंगा कहते हैं, 'सकल लोक जग पावनी गंगा।' तो ऐसी 'बिबुध नदी' गंगाजी की महिमा राम ने सुनाई। तो गंगामहिम्न भी 'मानस' में हुआ। उसके बाद चित्रकूट में भगवान आते हैं तब चित्रकूट की महिमा गाई। अद्भुत है चित्रकूट! चित्रकूट की महिमा अमित है। भगवान वाल्मीकि के आश्रम में पहुंचे। वाल्मीकि को भगवान ने वनवास की यात्रा में पूछा कि जहां कोई मुनि, खग, मृग कोई हमसे उद्विग्न न हो ऐसी जगह हमें रहने के लिए बताइए। वाल्मीकिजी ने कहा, मैं ज़रूर आपको जगह दिखा सकता हूं लेकिन पहले आप ऐसी जगह बताओ कि जहां आप न हो। आप तो व्यापक है, ब्रह्म है; कौन जगह आपसे खाली है? फिर वाल्मीकि चौदह आध्यात्मिक स्थान दिखाते हैं कि पहले तो ऐसा जिसका हृदय हो, ऐसा जिसका मन हो, उसमें आखिरी स्थान जो दिखाया है वो है, जिसको अपने जीवन में कुछ नहीं चाहिए, कभी भी कुछ नहीं चाहिए और आपसे जिसका सहज स्नेह हो, इस सहज स्नेह के कारण आपसे उसको कुछ नहीं चाहिए, उसके मन में आप निवास करो; आपका वो घर है। बड़ा प्यारा आखिरी स्थान।

भगवान राम के सामने चित्रकूट की महिमा का गायन वाल्मीकि कर रहे हैं, हे भानुकुल नायक, मैं आपको रहने की जगह दिखाऊं। वो स्थान का नाम है चित्रकूट गिरि। वहां आप निवास करो। सुंदर पहाड़ है महाराज। अगल-बगल में जो वन है वो बड़ा सुंदर है। वहां हाथी रहते हैं, शेर रहते हैं, हिरन रहते हैं और विहंग उड़उड़ करते हैं। पवित्र नदी वहां बह रही है। 'अत्रिप्रिया निज तप बल आनी।' मैं इसीलिए यहां रुक गया कि गंगाअवतरण केवल पुरुष ही नहीं करा सकता, मेरे देश की एक नारी भी करा सकती है। और उसका प्रतीक है भगवती अनसूया। भारत की एक माता भी गंगा अवतरण करने के लिए सक्षम है। और थोड़े समय में उतारती है। वहां तो पीढ़ियां बीत गई थी। गंगा की एक धारा वहां निकलती है, जिसका नाम मंदाकिनी है, 'जो सब पातक पोतक डाकिनी।' गंगा की इतनी महिमा गाई जा रही है और यहां मंदाकिनी को डाकिनी कहा। लेकिन वो इन्सान के जो छोटे-बड़े पाप है इन पाप को मंदाकिनी की धारा खा जाती है; पाप मिटाती है; पाप का वो भक्षण करती है।

शास्त्रों में ऐसा आया है; मैंने बहुत बार कहा है कि बुद्धपुरुष जिसके घर का भोजन करे वो भोजन नहीं कर रहा है, उसकी पीढ़ियों के पाप खा रहा है; ये नियम है। अब तो देश-काल बदल गया। बाकी लोग साधु-ब्राह्मण को क्यों खाना खिलाते थे? मैं केवल वर्ण की बात नहीं कर रहा हूं लेकिन जिसमें साधुता है, जिसमें ब्राह्मणत्व है ऐसा कोई भी, दलित क्यों न हो; ब्राह्मणत्व और साधुत्व से भरा हुआ कोई भी व्यक्ति हमारे घर में भोजन करता है, तो हमारे पाप खा जाता है। कोई पहुंचा हुआ फ़कीर हमारे घर भिक्षा ले तो पूरे परिवार को क्यों प्रसन्नता होती है? प्रसन्नता तभी होती है, जब पाप कटने लगते हैं। आज भी गांवों में साधु-ब्राह्मण को भोजन कराते हैं; उनके मूल विचार ये है। और उनकी श्रद्धा सही होती है। और जो भोजन पीरोसा जाता है वो 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' ये भी ब्रह्म है। मैं कहता हूं, हमारे सौराष्ट्र में जितने भी अन्नक्षेत्र हमारे साधु-संत संस्थाएं चलाता है वो अन्नक्षेत्र नहीं है, जीता-जागता ब्रह्मक्षेत्र है। क्योंकि अन्न ब्रह्म है, उपनिषद कहता है। रोटी खिलाने की बड़ी महिमा है रमेशभाई। और आप ये कर रहे हो। ये बहुत बड़ा काम है।

अमे तो समंदर उलेच्यो छे प्यारा,
तमे फक्त छबछबियां कीधां किनारे,
अमोने मळी छे जगा मोतीओमां,
तमोने फक्त बुदबुदा ओळखे छे.
परिचय छे मंदिरमां देवोने मारो
अने मस्जिदोमां खुदा ओळखे छे.
नथी मारुं व्यक्तित्व छानुं कोईथी,
तमारा प्रतापे बधां ओळखे छे.

●

इससे बढ़कर और क्या मिलती हमें दादे वफ़ा,
हम तुम्हारे नाम से दुनिया में पहचाने गए।

इमानदारी से की गई दाद की बात है, झूठी दाद की बात नहीं है।

●

कैसा प्यार, कैसी चाहत, मैं बस एक ज़रूरत हूं।
पूजो, तोड़ो कुछ भी करो अब मैं पत्थर की मूरत हूं।
- दीप्ति मिश्र

समाज का जो दर्शन है, दीप्तिजी ने शे'र में किया। ये शे'र आपके सामने पढ़ा तो मुझे अहल्या याद आई। तुलसी ने जिस रूप में अहल्या को चित्रित किया है 'मानस' में। मैं न्योच्छावर हो जाऊं! प्लीज़, मुझे समझने की कोशिश करियेगा। सौंदर्य की खोज अच्छी है, लेकिन सौंदर्य की खोज में भटक जाना बहुत बुरा है। आदमी भटकते हैं, गलत तरीके से खोजे गए सौंदर्य में। कौन मन सुंदरता का प्यासा नहीं है? दंभ न करो, किसके मन में रस की प्यास नहीं है? ईमानदारी क्या है?

तो इन्द्र धरती पर आता है सौन्दर्य की खोज में और ये जगत का परमसर्जन अहल्याजी की सुन्दरता देखकर वो लोभित होता है। फिर कथा तो आप जानते हैं कि इन्द्र साधु का वेश लेकर गया; गौतम ऋषि का वेश लिया। और 'अरण्यकांड' में छाया सीता को भ्रमित करने के लिए रावण भी साधु का वेश लेकर गया। कभी-कभी लगता है कि दूसरों को छलने में साधुवेश ज्यादा सफल हो जाता है। सही साधु की बात ही नहीं यहां। लेकिन केवल वेश सफल हो जाता है। इसीलिए हमारे पहुंचे हुए साधु कहते हैं कि वेश से ज्यादा वृत्ति की महिमा है। मैं फिर एक बार दोहराऊं, विचारमुक्त होना चाहिए, विहारमुक्त नहीं होना चाहिए। विचारों तो सब पेश करते हैं पर विहारमुक्त होता है वो जरा-सा चूके तो पतन। विचारमुक्ति की महिमा होनी चाहिए लेकिन विहारमुक्ति नहीं। और गुरुकृपा से जिनके विशाल विचार होंगे उसका विहार भी शीलपूर्वक होगा।

जो समय शेष है, उसमें कथा में थोड़ा आगे बढ़ें। कल हम सबने मिलकर भगवान राम के प्रागट्य उत्सव का संक्षिप्त गायन किया, श्रवण किया। राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न चार पुत्रों की प्राप्ति हुई राजपरिवार को। अयोध्या आनंद में डूबी है। 'मानस'कार का मंतव्य है कि एक महीने तक उत्सव अखंड रहा। परमानंद में लोग इतने डूबे थे कि एक मास कैसे बीत गया, खबर ही न रही! मानो एक मास तक सूर्य अस्ताचल न गया! बुद्धि तर्क करेगी कि एक महीने का दिन कैसे हो सकता है? मेरी बात तो केवल इतनी है कि परमानंद के दिन कैसे कट जाते हैं, आज भी पता नहीं चलता। मेरा तो सदा का अनुभव है कि नव दिन की कथा में कैसे नव दिन बीत जाते हैं, ये पता ही नहीं रहता। चार घंटे की कथा में चार घंटे कैसे बीत जाते हैं वो भी अक्सर पता नहीं रहता। तो स्वयं भगवान राम प्रगट हुए हो उस समय शायद सबको ये अनुभूति हुई हो तो आश्चर्य प्रगट करने की कोई ज़रूरत नहीं।

नामकरण संस्कार का समय आया। महाराज ने अपने ज्ञानी गुरुदेव को प्रार्थना की, आप पधारे और हमारे चारों राजकुमारों का नामकरण संस्कार करे। नामकरण संस्कार का सुंदर उत्सव मनाया गया। भगवान वशिष्ठ अवधपति के राजकुमारों का नामकरण करते हैं। कौशल्या के पुत्र के रूप में अद्भुतदर्शन करते हुए वशिष्ठजी ने कहा, जो आनंद का सिंधु है, सुख की राशि है, विश्वव्यापक ब्रह्म है इस बालक जगत को आनंद देगा, विराम देगा, विश्राम देगा इसीलिए इस बालक का नाम मैं राम रखता हूं। राम जैसा वर्ण, शील, स्वभाव, सब कुछ जिनमें है वो कैकेई के पुत्र को देखकर वशिष्ठजी ने कहा, ये बालक विश्व का भरण-पोषण करेगा; ये पोषक होगा, शोषक नहीं होगा इसीलिए मैं उनका नाम भरत रखता हूं। सुमित्रा के दो पुत्र; जिनके नाम से शत्रुता का नाश होगा इस बालक का नाम मैं शत्रुघ्न रखता हूं। दुश्मन का नाश नहीं, दुश्मनी का नाश; वैरी का नाश नहीं, वैरवृत्ति का नाश; शत्रु का नहीं, शत्रुता का नाश। और जो सभी सद्लक्षण के धाम, राम के प्रिय, जगत के आधार है, वशिष्ठजी ने उनका नाम लक्ष्मण रखा।

मेरी व्यासपीठ हर एक बार ये बात करती है कि तलगाजरडा को लगता है कि राम महामंत्र का जो जप करे, हरिनाम का जो जप करे उसके नाम के लिए मानो ये तीन स्वाभाविक नियम बताए। हम और आप रामनाम का यदि जप करते हैं तो हमें ये तीन बात ध्यान में रखनी चाहिए। एक, रामनाम जपनेवाला किसी का शोषण न करे; जहां तक अपने से हो, पोषण करे। सबको भर दे। भरत नाम शायद इसीलिए आया कि रामनाम जपनेवाला सबको हराभरा कर दे। दूसरा, रामनाम जपनेवाले से कोई भी वैर रखे फिर भी रामनाम जपनेवाले का दायित्व है कि वो वैरी के सामने वैर न रखे, वो शत्रुभाव न रखे। कोई कितना ही द्वेष करे, भजन करनेवालों को उनके प्रति भी दुर्भाव न हो। तीसरा,

लछिमन के नाम का संकेत है, वो धरती को धारण करते हैं। हम जितने को धारण कर पाए वो करें। हम पूरी स्कूल-कोलेज न बनवा सके लेकिन कोई गरीब विद्यार्थी आगे की पढ़ाई चुक जाए तो किसी को भी कहे बिना उसके फीस के, पुस्तकों के, होस्टेल के रुपये भर दे तो ये रामनाम जपने की सबसे बड़ी सार्थकता होगी। हम बड़ा अन्नक्षेत्र न खोल पाए लेकिन वहां परोसने की सेवा करे; हमारी औकात के मुताबिक हम करे; करना चाहिए; लोग करते भी है।

दिन बीतते चले। छोटी-बड़ी राम की लीलाएं बताई गई। चूड़ाकरण संस्कार हुआ। यज्ञोपवित संस्कार हुआ। फिर चारों भाई विद्या प्राप्त करने के लिए गुरु के पास जाते हैं। अल्प काल में चारों भाईयों ने सब विद्या प्राप्त की। जिसके श्वास में चार वेद हो उसको क्या पढ़ना? लेकिन जगत को बताया कि शिक्षा-दीक्षा आवश्यक है। उपनिषद के जो मंत्र प्रभु ने पढ़े थे, स्वाध्याय किया था वो जीवन में उतारने लगे।

सिद्धाश्रम में, बक्सर में विश्वामित्रजी जप-तप, साधना करते हैं। मारीच और सुबाहु परेशान करते हैं। विश्वामित्र महाराज तैयार होते हैं और अयोध्या की यात्रा करते हैं। सरयू जल में स्नान करके विश्वामित्र दरबार में पधारे हैं। दशरथजी ने प्रार्थना की, महाराज, हम आपकी क्या सेवा करें? तब कहा, मुझे असुरों का समूह बहुत त्रास दे रहा है। मेरे यज्ञ-अनुष्ठान सफल नहीं होने देते। मैं आपके पास याचना करने आया हूं। आप अनुज के साथ राम मुझे दे दो। वशिष्ठ महाराज राजन् को समझाने लगे और राजा के संदेह को नष्ट किया। और फिर दशरथजी कुछ नहीं बोल पाए। मुनि के संग राम-लक्ष्मण चले। ताडका नामक राक्षसी आवाज़ सुनकर दौड़ती है, हमला करती है और एक ही बाण से उसका प्राण हरि में लीन हो गया, निर्वाण प्राप्त करा दिया। सुबह हुई। यज्ञ का आरंभ होता है। दोनों भाई यज्ञरक्षा के लिए खड़े हैं। मारीच-सुबाहु दौड़ आते हैं। भगवान ने बिना फणे का बाण मारकर मारीच को समंदर के तट पर फेंक दिया। सुबाहु को अग्नि के बाण से निर्वाण दे दिया। भगवान कुछ दिन वहां रुके और एक दिन विश्वामित्रजी ने कहा, आप यज्ञपूर्ति के लिए ही यात्रा में है तो अभी दो यज्ञ शेष है। एक तो अहल्या की प्रतीक्षा का यज्ञ अधूरा है और दूसरा जनक का धनुष्ययज्ञ है। धनुषजज्ञ की बात सुनते ही भगवान हर्षित होकर मुनि के साथ चल देते हैं।

पदयात्रा आगे बढ़ी। रास्ते में एक आश्रम देखा। पशु-पक्षी, जीव-जंतु, दुर्वा, अंकुर कुछ नहीं। इतना सन्नाटा देखकर भगवान राम जिज्ञासा करते हैं। विश्वामित्रजी ने अहल्या की कथा का गायन किया, महाराज, ये गौतमऋषि का आश्रम है। ये गौतमनारी जिसका नाम अहल्या है। शाप के कारण पत्थरदेह हुआ। प्रभु ने उसका उद्धार किया। विचारक बहुत होते हैं, स्वीकारक बहुत कम होते हैं। भगवान विचारक है, उद्धारक भी है और स्वीकारक भी है। अहल्या का उद्धार करके प्रभु आगे बढ़े। गंगा अवतरण की कथा सुनी। गंगास्नान किया। घाट के देवताओं को दान दिया। प्रभु जनकपुर पहुंचे। आम्रकुंज में निवास किया। जनक को खबर मिली। सबको 'सुंदरसदन' में ठहराया। विश्वामित्र के संग सबने भोजन किया और विश्राम किया। मैं भी आपको भोजन के लिए छोडूं। और आपके नसीब में हो तो विश्राम करना।

गंगा तो देखने में सरितारूप है, लेकिन गंगा की महिमा अद्भुत है! भारतवर्ष की, इस धरती की पूरे विश्व में गंगा पहचान है। गंगा बहुत प्रदूषित होती जा रही है! महिमावंत है गंगा, जिसका वर्णन भगवान राम ने अपने मुख से किया है। गंगा हैं भक्ति; प्रेमधारा, भक्तिधारा; तुलसी ने उसको गंगा कहा। कथा को गंगा कहा, भक्ति को गंगा कहा, प्रीत को गंगा कहा। लेकिन भक्तिरूपी गंगा कोई शिव के मस्तिष्क में ही रहती है। कोई-कोई अधिकारी के सामने शिव लट बिखेरते हैं; सबको नहीं मिलती। जो अधिकारी आयेगा, योग्यता प्राप्त जो आयेगा उसके सामने भक्ति का दान शिव करते हैं।

'मानस' में भरतजी की महिमा नहीं है, महामहिमा है

प्रतिदिन की भांति आदरणीय बापा ने गतदिन की कथा का अंग्रेजी में सारांश बताया। बापा, प्रणाम। मेरी थोड़ी इच्छा थी कि ड्राफ्ट और चेक सब तैयार है। मैंने इसीलिए डोलरभाई को पहले बुलवा लिया कि उस पर मेरी भावमयी प्रतिक्रिया पेश कर सकूं। आखिर में तो मैं मौन हो जाता हूं तो उस पर मैं कुछ नहीं कह पाऊंगा। तो ड्राफ्ट तैयार हो गया। बड़ा बनाकर सब जगह देते हैं वो आपको दिखा देंगे। चार करोड का है। और शेष पचीस-पचीस लाख कहां-कहां दिए जाएंगे ये डोलरभाई ने बता दिया। कुछ नगर में दस-दस या ग्यारह-ग्यारह हजार रुपये जो बच्चों की मृत्यु हुई है गोरखपुर में वहां प्रत्यक्ष जाकर उसके परिवार को दिया जाएगा। कुल मिलाकर पूरी राशि को इस प्रसाद के रूप में बांटा गया है।

डोलरभाई ने आप सबके प्रतिनिधि के रूप में ये चेक व्यासपीठ को समर्पित किया; मैंने आपको दिखा दिया। मेरा भी कार्य पूरा और आपका भी पूरा। तो ये सब कार्य पूर्ण हो चुका है। ब्रिटिश एसियन ट्रस्ट ने बहुत सहयोग दिया। उन्होंने सब अपने ट्रस्ट में जमा लिया और तुरंत कल सायंकाल तक सब ड्राफ्ट, चेक सब बिलकुल नियम के अनुसार स्वस्थतापूर्वक और स्वच्छतापूर्वक दे दिया। और मैं कद्र करूंगा; आप सबकी ओर से इस संस्था को थेन्क्यू पेश करूंगा। इस राशि को चेक के रूप में परिवर्तित करना उसमें संस्थाओं के कुछ प्रतिशत लगते हैं; इन लोगों ने कहा कि हम इनमें से कुछ नहीं लेंगे; ये केवल हमारी सेवा होगी। इसके लिए भी इस संस्था को बहुत-बहुत धन्यवाद।

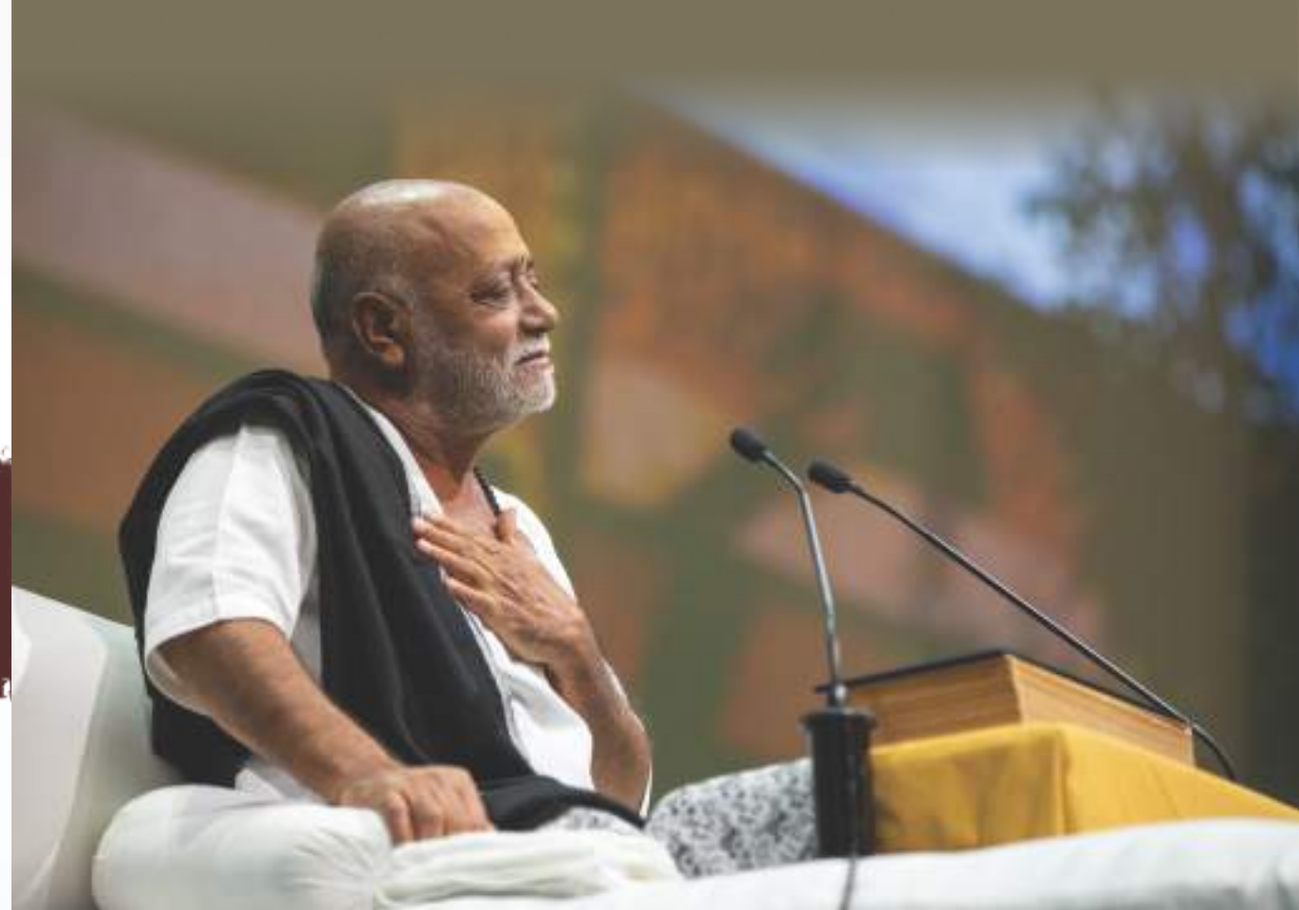

तो मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। गुजरात के आदरणीय सी. एम. साहब ने भी बाईस तारीख को बारह बजे का समय दे दिया है और डोलरभाई और रमेशभाई वहां जाकर ये चार करोड का ड्राफ्ट दे देंगे, और पचीस लाख का चेक यू.पी. सरकार को देने का है। वो चेक तैयार है; भेजा जाएगा। आप सबके और व्यासपीठ के प्रतिनिधि के रूप में बनारस से कुछ भाई अथवा तो लखनौ से गिरिजाशंकर या जो है वो सब मिलकर सी. एम. साहब का समय लेकर योगीजी को दे देंगे बिहार में। और आसाम में हमारा भरौलीवाला बिपिन जो आसाम से भी परिचित है और बिहार का वो है ही। तो दोनों जगह पचीस-पचीस लाख का चेक लेकर वहां के चीफ़ मिनिस्टर का समय लेकर वो स्वयं जाकर दे देंगे। बंगाल का अरुण श्रोफ दे देंगे। इनसे भी बात हो चुकी है कि इन सबके प्रतिनिधि के रूप में आदरणीया दीदी ममताजी का समय लेकर ये चेक दे दे। और पचीस लाख का अपने जवानों के लिए या केन्द्र सरकार को जहां भी राहतकोश है, उसमें हमारे देश के आदरणीय प्रधानमंत्री नरेन्द्रभाई मोदी को दिया जाएगा। यदि उनकी व्यस्तता नहीं होगी तो दो दिन में समय दे तो वहां जाकर भी उनको दे देंगे वरना भेज देंगे; दिल्ही में से कोई भी जाकर दे देंगे। यहां छोटी-बड़ी राशि की कोई महिमा नहीं है लेकिन अपनी श्रद्धा से जिन्होंने जो पैसा दिया है वो व्यासपीठ पर आपका जो भरोसा है; परमात्मा करे, ये भरोसा सदा बरकरार रहे। इसीलिए देश-विदेश में रहे मेरे सभी फ्लावर्स इन सबके प्रति मैं मेरी बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं और बाप! खुश रहो, खुश रहो, खुश रहो।

अब आइए, हम 'मानस-महिम्न' में प्रवेश करें इससे पूर्व कल सायंकाल को हम सब मिले; हमारे आदरणीय बुज़ुर्ग कविराज जितुदानजी ने सुचारु रूप से संकलन किया और चार वक्ताओं में हमारे आदरणीय रतिबापा बोरीसागर, हास्य की बिलग प्रकार की उनकी पद्धति; आपने बहुत प्रसन्नता दी सबको। उसके बाद शाहबुद्दीनभाई, आपने भी बहुत आनंद दिया। फिर वसंतभाई गढवी ने ओगस्ट महीने की वो तारीख को याद करके मेघाणी की बात सुंदर तरह से पेश की। आदरणीय आरिफ़ साहब ने सुंदर भावपूर्ण मार्गदर्शक प्रवचन दिया। सभी ने सबको बहुत प्रसन्नता दी। मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। उसके बाद गणेश स्थापना हमारे अनुदानभाई ने ऐसी की कि पूरा कार्यक्रम निर्विघ्न पूरा हुआ। खबर नहीं, इक्कीसवीं सदी का माँ सरस्वती का ये वरदान है कि सभी कलाकार एक-दूसरे को इतने ही आदर के साथ सुनते हैं और अपनी प्रसन्नता के फंवारे लुटाते हैं। ये सबसे ज्यादा मेरी प्रसन्नता की बात है।

मैंने शायद यहां कहा ही होगा कि द्वेष शायद परमात्मा ने बनाया ही नहीं है, लेकिन प्रेम का अभाव ही द्वेष है। तो श्रीगणेश स्थापना से लेकर ललिता बहन ने 'राणाजी ने कहेजो, पाछा झेर मोकले।' और फिर 'मिले सूर मेरा तुम्हारा।' एक सात्त्विक भैरवी में, सात्त्विक भाव से जो पूरा किया। सब बहुत खुश रहो। और ऐसा वातावरण बन गया कि पूरा अथ से इति तक बहुत आनंद दिया आप सभी ने। कथा नव दिन होती; सब चले जाते लेकिन आप सब नहीं आते तो सायंकाल को इतना कौन संवारता? आपने सायंकाल को बहुत संवारा। और सब खुश हुए हैं। मेरी प्रसन्नता की तो कोई सीमा ही नहीं! तो बहुत-बहुत धन्यवाद। आइए, विषयप्रवेश करें, 'मानस-महिम्न।'

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः।।

तो 'मानस-महिमा', उसकी कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा गुरुकृपा से आगे बढ़ाएं। इतने तत्त्वों की 'मानस' में महिमा गाई गई है। उसमें ज्यादा तो राम की महिमा है। रामनाम की महिमा राम की महिमा से भी ज्यादा है। और एक बहुत बड़ी जगह 'मानस' में महिमा की रख रहे हैं, वो है श्री भरतजी। भरतजी की महिमा 'मानस' में तुलसी बयां किए बिना रह नहीं पाए। जो स्मृति में आये वहीं से शुरू करूं।

भरत महा महिमा जलरासी।
मुनि मति ठाढ़ि तीर अबला सी।।

'मानस' में सबकी महिमा का गायन है; सत्ताईस तत्त्वों की महिमा का गायन है। लेकिन जब गोस्वामीजी भरतजी की महिमा की चर्चा करने लगे तो कहते हैं, वो महिमा नहीं है, महामहिमा है। तुलसी ने कोई तत्त्व नहीं छोड़ा; मोह की महिमा का भी वर्णन कर दिया। तो भरत मोह नहीं है, प्रेम है। मोह की महिमा भी हमारे शास्त्र में तटस्थ साक्षीभाव से गाई गई, देखी गई। तो जहां विशुद्ध प्रेम होगा तो उसकी महिमा केवल महिमा नहीं मानी जाएगी, महामहिमा है।

'मानस' में तलगाजरडी दृष्टि से गुरुकृपा से देखूं तो मुझे कुछ नज़र आता है कि भरत की महिमा के कुछ पहलू है। एक तो भरत की भक्ति की महिमा; भरत की रति की महिमा; भरत की नीति की महिमा; भरत के बचन की महिमा; भरत के त्याग करते समय प्रसन्न ऊर्मियों की महिमा; ये सब परोक्ष-अपरोक्ष रूप में अंकित है। तुलसी ने क्या सुंदर दृष्टांत दिया कि चित्रकूट की सभा में जब भरतजी बोलते थे; बोलते कहां थे? रोते थे! हर एक आंसू शब्द बनकर ढल रहे थे। जलालुद्दीन रुमी तो कहते हैं, परमात्मा को कोई आवाज़ यदि सुनाई देती है तो वो आंसू की आवाज़ ही सुनाई देती है। उहापोह, शोर, घोंघाट ये तो उसकी चोखट पे खड़े रह जाते हैं; द्वार में तो केवल अश्रु ही प्रवेश कर सकते हैं।

भरतजी महामहिम इतनी बड़ी जलराशि है कि वशिष्ठ मुनि की मति एक अबला की तरह किनारे पर खड़ी रह गई। 'मुनि मति ठाढ़ि तीर अबला सी।' मुनि की मति अबला की तरह रुक गई कि ये पानी कम हो फिर आगे जा सके। वशिष्ठ याने ब्रह्मा के पुत्र, जिस महापुरुष ने रघुवंश का उपरोहित्य पद मिलनेवाला था तब इन्कार कर दिया था कि उपरोहित्य कर्म ये बहुत मंदकर्म है। वशिष्ठजी की इतनी शक्ति थी कि वो चाहे तो इन्सान के प्रारब्ध के लेख मिटा सकते थे। कई सिद्ध महापुरुष ऐसे होते हैं, इसमें मुझे जरा भी शंका नहीं है। हमारे प्रारब्ध के लेख मिटानेवाले कई महापुरुष हुए हैं; शायद होते भी हैं; हम पहचान न पाए। और होते रहेंगे। लेकिन मैं एक बात में बिलकुल पक्का हूं कि प्रारब्ध की लकीर बदली जा सकती है लेकिन नियति नहीं बदली जा सकती। नियति कुछ ओर है। नियति के नियम को परमात्मा भी कुबूल करता है। नियति बदलना चाहे तो बुद्धपुरुष या तो परमात्मा बदल भी सकते हैं लेकिन वो नियति को बहुत आदर देते हैं। जिसको भजन में प्रीति है उसको तो कहना चाहिए, प्रभु, नियति को तो तू भी नहीं बदलना चाहता तो आ, हम तुम्हें सपोर्ट करते हैं; तेरी इच्छा को हम कुबूल करते हैं।

तो प्रारब्ध और नियति में अंतर है। सिद्धपुरुष, पहुंचे हुए लोग कुछ कर भी सकते हैं। छोड़ो ना, कोई सिद्धपुरुष है, बुद्धपुरुष है कहां उसको नाप सकेंगे? लेकिन 'मानस' में तो लिखा है, 'मेटत कठिन कुअंक भाल के।' तुलसी तो कहते हैं, 'रामचरितमानस' मंत्र नहीं, महामंत्र है। 'रामचरितमानस' का आश्रय आदमी के प्रारब्ध के कुअंक को मिटा सकता है। मैं उसका साक्षी हूं। ये मेरा महामंत्र है। मैं सबको मेरा अनुभव बांट रहा हूं कि ये मेरा महामंत्र है साहब! इससे बिधि अंक मिट सकते हैं। हमारे नीतिनभाई अपने भाव में लिखते हैं लेकिन अनुभव हम सबका लिखा है कि 'पोथीने परतापे क्यां-क्यां पूगिया?' एक पोथी के प्रताप से हम कहां-कहां पहुंचे हैं? बहुत समझकर सोचता हूं कि ये पोथी, ये रामकथा मोरारि बापू के पास न हो तो मोरारि बापू को लंडन कौन बुलाता?

तो मेरे भाई-बहन, 'मानस' का गायन, 'मानस' का श्रवण ये महामंत्र का गायन है; ये महामंत्र का श्रवण है। मैं चौपाईयां गाऊं, आप गाये, ये हम महामंत्र का जाप कर रहे हैं। और इस जाप के प्रमाण में मैं बैठा हूं आपके सामने कि प्रारब्ध के कुअंक मिटने लगते हैं। और ये कुअंक मिटे तब ही पोथी के प्रताप से कहां-कहां पहुंचे हैं साहब! मैं इसके लिए सच में बहुत सोचता हूं, चुप हो जाता हूं कि ये न होता तो क्या होता? ऐसी बातें कहने की इच्छा नहीं होती लेकिन कभी-कभी कहता हूं ताकि आपका भरोसा 'मानस' पर दृढ़ हो। वैशाख महीने की गर्मी में महुवा से पढ़कर घर वापिस आए तब जमीन इतनी गर्म होती थी और पैर में स्लीपर न हो तब हम कूद-कूदकर चलते ताकि पैर के तलवे जले ना! आज पोथी के प्रताप से कहां-कहां पहुंच गए!

तो मेरे भाई-बहन, मैं आपसे चर्चा कर रहा था कि वशिष्ठजी एक ऐसा व्यक्तित्व है जो बिधिलेख को बदल सकते थे। ऐसे वशिष्ठ की परमबुद्धि आज भरत की महामहिम जलराशि के तट पे एक अबला की तरह खड़ी हो गई है। ऐसी है भरत की महामहिमा। तो भरत महिम्न ये महामहिम्न है। और तुलसीदासजी ने लिखा है, भरत की महिमा ऐसी है कि 'मिटिहहि पाप प्रपंच सब।' जो बात लिखी है, श्रद्धा से जिसने अनुभव किए होंगे वही जानते हैं। बाकी हम उसको पढ़ते होंगे लेकिन यदि विश्वास नहीं है तो नहीं होगा।

क्या महिमावंत ये संत शिरोमणि है! ये सकल धर्म को धारण करनेवाला आदमी है। वो प्रेम के कारण चेतन को जड़ और जड़ को चेतन करनेवाला आदमी है। उसके नाम का कोई जप करे तो तुलसी लिखते हैं, सब पाप-प्रपंच मिटते हैं। अपने जीवन में जो भी अमंगल तत्त्व है, उसका भार उतर आएगा। भगवान बोले कि भरत का नाम लेने से पाप मिटेंगे, प्रपंच मिटेगा, अमंगल लेख बदल जाएंगे, लोक में प्रतिष्ठा मिलेगी, परलोक में सुख मिलेगा। किसी ने रामजी से पूछा कि इतना फ़ायदा होता है भरत का महामहिमावंत नाम जपने से तो आप किसका नाम जपते हैं? तो बोले, मैं भी भरत का नाम ही जपता हूं। पूरा जगत रामनाम जपता है और राम भरत का नाम जपते हैं। क्योंकि भरत का नाम अमंगल का नाश करता है; किस्मत के भार को खत्म कर देता है; पाप-प्रपंच को मिटा देता है।

तो इस महामहिमावंत पुरुष के नाम का जप करने से और कोई भी जाप करने के तुलसीदासजी ने चार संकेत किए हैं 'मानस' में कि जप कैसे करो। एक बस्तु याद रखें मेरे भाई-बहन कि कलियुग में सरल साधन है जप। ठीक है, शास्त्रों की चर्चा में आनंद आता है; श्रवण-गायन से जीवन धन्य होता है लेकिन मूल में तो हरिनाम का जप ये कलि की श्रेष्ठ साधना है। मैंने नाममहिमा बीच में ली तब भी कहा कि आपका कोई भी नाम का जाप हो; 'अल्लाह-अल्लाह' करो, मुझे कोई आपत्ति नहीं; 'माँ-माँ' पुकारो; लेकिन जप बहुत महिमावंत है। तुलसीदासजी 'मानस' में परोक्ष-अपरोक्ष संकेत करते हैं कि एक जप कर्म के सिद्धांत पर होता है; उसमें विधि होती है; आसन लगाओ, संख्या गिनो; सवा लाख जप करने हैं तो उसका अनुष्ठान करो; ये सब उसमें विधि है। ये भी एक पद्धति है; विधि से करो। लेकिन विधि से जो नाम का जप करते हैं उसमें सब ध्यान रखना पड़ता है। तो कई लोग अनुष्ठानपूर्वक जप करते हैं। लेकिन करने दो, ये भी विधि है। जप का असर होता है। जप से ऊर्जा मिलती है। हाथ के तलवे घिसते हैं तो गर्म होने लगते हैं; माला फिराए तो अंतरात्मा गर्म होने लगता है; भीतरी शक्ति तप्त होने लगती है। जितनी मात्रा में हाथ के तलवे घिसे उतनी मात्रा में ज्यादा गर्मी आती है।

मैं बहुत जिम्मेवारी के साथ कह रहा हूं मेरे फ्लावर्स, विधि से भी जप करो; कर्मप्रधान जप करो, कोई

आपत्ति नहीं। क्योंकि हमारे यहां कहा है, 'जपात् सिद्धि।' विधि से करो तो तुम्हें सब करना पड़ेगा; व्यवस्थित बैठना पड़ेगा। नहाकर करना पड़ेगा; पवित्र आसन हो, ये सब विधि है। कोई ऐसे ही 'ॐ नमः शिवाय' गाता रहे तो छूट है, लेकिन विधिवत् अनुष्ठान करके इतना जप करना है सावन में तो इसको सब क्रिया से गुज़रना होगा, तभी उसकी असर दिखने लगती है।

दूसरी पद्धति, ज्ञानमार्ग से जप करो। समझपूर्वक का जप ये ज्ञानमार्गीय जप है। तुम्हारे पास रत्न है लेकिन आप उसको पहचानते नहीं तो बच्चें उसको काच का टुकडा मानकर आंगन में खेलेंगे। न बच्चा पहचानता है, न माता-पिता पहचानते हैं। है रत्न लेकिन उसको ज्ञान नहीं है। जब आपको रत्न का पता लग जाएगा कि ये तो सवा करोड का हीरा है, लेकिन इस सवा करोड रुपये को आप घर में ही रख दे तो भूखे मर जाओगे। उसका मूल्य समझना होता है। कई लोग कहते हैं कि 'राम-राम' करने से क्या फ़ायदा? अरे! तुझे क्या पता कि 'राम-राम' का फ़ायदा क्या है? क्योंकि तूने उसको काच का टुकड़ा मान लिया है! तुम उससे खेलते हो! खो जाए तो भी चिंता नहीं, क्योंकि आपने उसकी महिमा ही नहीं जानी! कभी-कभी जपते-जपते रामनाम की महिमा समझ में आ जाए कि ये तो मणि है, लेकिन रामनाम को ऐसे ही रख दो तो भी भूखे रह जाओगे; उसका मूल्य समझना पड़ता है। ज्ञानी लोग जप करते हैं निरूपण पद्धति से। विधिवाले लोग कर्मकांड के रूप में करते हैं; उसका भी मूल्य है।

भक्तिमार्ग से जो जप करेगा वो निष्काम भाव से करेगा। सब विधाओं से परमात्मा के नाम-जप करने की विधि तुलसी ने बताई। तो महिमावंत भरत की जो महामहिमा है, उसके जप की भी महिमा है। जिसकी महिमा महा हो उसके नाम में भी ताकत होती है; फिर उसको कर्म के रूप में, ज्ञान के रूप में, भक्ति के रूप में कैसे भी लो, घटना घटने लगती है साहब! करे सो जाने। तो बिधि याने कर्ममार्ग से हरि का जप; ज्ञानमार्ग से, भक्तिमार्ग से जप लेकिन चौथी विधा तुलसी ने बताई, न कोई बिधि, न कोई निरूपण; निष्कामभाव है कि सकाम हमें पता नहीं लेकिन चौथा मुकाम है-

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ।
नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।।

तुलसी ने हमें छूट दी है। अकाल के समय में प्रजा जिसको संतान की तरह प्यारी होती है, वैसे राजा भोज दुष्काल के समय में किसानों के कर माफ़ कर देते थे, वैसे कलिकाल है ये अकाल का काल है; उसमें तुलसी ने भी छूट दी है कि मानसिक रूप से तुम किसी का भला चाहोगे तो इसका पुण्य मिलेगा। लेकिन मानसिक रूप में किसी का बुरा चाहोगे और ये पाप मानसिक हो जाए तो उसका कटु फल नहीं मिलेगा, इतनी राहत दी है। इसका मतलब हम शुरू न करें! मानसिक सद्विचार में पुण्य मिलेगा कलियुग में, लेकिन शायद हमारी मानसिकता ठीक नहीं और किसी के बारे में बुरी सोच आ गई, तो भी चिंता नहीं है, उसका कटुफल नहीं मिलेगा।

हमारे नीतिनभाई ने तो बेरखा पर कितने पद लिख डाले कि जब बहुत अकेलापन हमें घेर ले तब बेरखा हमारी चारो ओर घूमता है। हमें ऐसा लगे कि हरिनाम हमारे साथ है। बाकी सब छोड़ो, प्रभु का नाम लो। तो नाम की महिमा है साहब। कलियुग में नाम की महिमा है। आपकी जेब में दो हजार रुपये की नोट हो; आप खर्च न करो; आपका स्वभाव जरा संकोची हो तो पैदल चले जाओ आप; रीक्षा भी न करो लेकिन दो हजार की नोट जेब में रहती है तो हिंमत कितनी होती है कि जब कोई कठिनाई आएगी तो खर्च कर सकूंगा। वैसे जिसकी जेब में बेरखा रखा हो उसको भी बल मिलता है कि कोई ऐसा पल आए तो मुझे कोई चिंता नहीं। कई लोग कहते हैं कि ये घुमाता नहीं है बेरखा! कोई बात नहीं; है तो सही उसके पास; उसकी महिमा है।

तो 'मानस-महिम्न' चल रहा है; बिलग-बिलग तत्त्वों की महिमा गाई है। हमारे गुणवंत बापू सावरकुंडला से आये हैं; उन्होंने 'भगवद्गोमंडल' से निकालकर महिमा के कितने पर्याय है वो लिखकर भेजा है। मैं आपके सामने रख दूं। पहला, महिमा याने इच्छानुसार विराटरूप धारण करने की शक्ति जिसमें हो वो; आदमी अपनी इच्छा से वामन से विराट बन जाए। वो आठ प्रकार की सिद्धियां है- अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, इशित्व और वशित्व। इसमें महिमा एक सिद्धि का नाम है। हनुमानजी के चरणों में किंकरी की तरह ये सिद्धियां रह सकती थी। 'बिप्र रूप धरी कपि तहं गयऊ।' कभी ब्राह्मण का रूप।

सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा।
विकट रूप धरि लंक जरावा।।
भीम रूप धरि असुर सँहारे।
रामचंद्र के काज सँवारे।।
मसक समान रूप कपि धरी।
लंका चलेहु सुमिरि नरहरी।।

तो हनुमानजी में आठों प्रकार की सिद्धि है इनमें एक सिद्धि का नाम महिमा है, जिसका 'भगवद्गोमंडल' ने भी स्वीकार किया है। दूसरा, महिमा याने उपमा। किसी घटना को, किसी विषय को, किसी व्यक्ति को आप सटीक उपमाओं से अलंकृत करो तो ये महिमा हो गई। तीसरा, महिमा याने श्रेष्ठ पद। चौथा, पुराण में भग नाम के आदित्य को सिद्धि नाम की स्त्री से जो एक बालक का जन्म हुआ, उसका नाम महिमा रखा, ऐसा 'भगवद्गोमंडल' कहता है। इसका मतलब महिमा स्त्री की भी होती है, पुरुष की भी होती है। जैसे तुलसी नाम बेटा का भी हो, बेटी का भी हो। पांचवां, वर्णन करने जैसी व्यक्ति याने महिमा। वर्णन करना पड़े वो महिमा। 'चरितं रघुनाथस्य सतकोटि प्रविस्तरं।' छठ्ठा, बड़प्पन याने महिमा। सातवां, यश याने महिमा। आठवां, प्रतिष्ठा, कीर्ति को भी महिमा माना है। प्रभाव याने महिमा। सबका अपना-अपना प्रभाव होता है। अपनी ऊर्जा, तेजस्विता, सद्जीवन का प्रभाव होता है; उसको भी महिमा कहा जाता है। बड़प्पन को भी महिमा कहा जाता है। बड़प्पन किसी ओर के कारण भी होता है। 'पीरनो महिमा एनो पूजारी वधारे।' देव की महिमा उसका पूजारी बढ़ाता है, ऐसा 'भगवद्गोमंडल' ने कहा; ये भी महिमा का अर्थ है। विस्तार याने महिमा। जो आदमी जितना फैलेगा, विस्तरित होगा, समझना महिमावंत है। और जितना सिकुड़ जाता है, सोच सिकुड़ती है, दृष्टि संकीर्ण है। हमारे यहां तो महिमावंत के बारे में कहा है, गगनसिद्धांत। विष्णु भगवान की स्तुति करते हुए हमारे दर्शनों ने कहा, 'गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्म्।' ऐश्वर्य, वैभव याने महिमा। किसी के वैभव की आलोचना क्यों करे? ये उनकी महिमा है। हां, इस वैभव का सदुपयोग करेगा तो महिमा ओर बढ़ेगी। श्रेष्ठता, सर्वोपरिता याने महिमा। तो महिमा के कई अर्थ है, जिसका हम गायन कर रहे हैं।

तो बाप! अब जो शेष समय बचा है उसमें थोड़ा क्रम ले लूं। कुछ प्रसंग को कह दूं ताकि कल ज्यादा सरल हो जाए। मैं तो दो मिनट में भी पूरा कर सकता हूं, ये आप जानते हैं। और बिस्तार करना कठिन है, संक्षिप्त करना तो दो मिनट का कार्य है। जिसे वैराग्य जगा हो वो दो मिनट में सिमट ले। हमारे हरीशभाई गाते हैं-

पहोळा पथारा बहु पाथर्या,
हवे तेने समजीने लेजो संकेली।
कोट रे कायाना बेली खळभळ्या।

●

अंगं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डम्।
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशापिण्डम्।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढ़मते।।

शंकराचार्य जो बात श्लोक में कहते हैं, वो चारणी साहित्य अपनी बोली में कहते हैं। समय होता है तब वृद्ध के हाथ में दंड आ जाता है। लेकिन कोई-कोई अपवाद है। त्रिभुवन दादा के हाथ में कभी दंड नहीं था। ये भजन की युवानी थी। हां, छाता रखते थे, वो भी गर्मी हो और तरेड से चलकर तलगाजरडा आना हो तब छाता रखते थे; बारिश में भी रखते थे। अभी त्रिभुवनदास दादा की जो मूल तसवीर हमारे पास है, उसमें कितने साधुओं के साथ दादा बैठे हैं, उसमें छाता लेकर बैठे हैं। लकड़ी कभी उनके हाथ में नहीं थी। शायद युवानी में से जिसकी आशा चली गई होगी उनको लकड़ी की ज़रूरत न भी हो, या फिर तंदुरस्ती की महिमा हो; जो हो, अल्लाह जाने!

थोड़ा कथा का क्रम ले लूं संक्षेप में। जनकपुर में भगवान पहुंचे। 'सुंदरसदन' में ठहरे। सायंकाल को भगवान नगरदर्शन करने जाते हैं। ये विदेहनगर है। नामरूप को मिथ्या माननेवाले अद्वैती लोग रहते हैं लेकिन राम के रूप और नाम जानने में पूरे जनकपुर की रुचि बढ़ गई कि ये है कौन? प्रभु के रूप में पूरी जनकपुरी डूब गई है। सायंकाल को प्रभु समय पे लौटे। संध्यावंदन किया। रात्रि का प्रसाद ग्रहण हुआ। कुछ वेदांत की चर्चा गुरु के साथ हुई। सबने विश्राम किया। दूसरे दिन सुबह गुरुपूजा के लिए पुष्प चुनने राम-लक्ष्मण जनक की पुष्पवाटिका में गए हैं। उसी समय जानकीजी अष्टसखियों के साथ गौरीपूजा के लिए पुष्पवाटिका में प्रवेश करती है। सरोवर में स्नान किया। गौरी के मंदिर में जाकर पूजा की। अपनी औकात के अनुसार वरदान मांगा। इतने में जानकी की सखियों में से एक सखी बिलग हो गई थी वो बाग देखने में पीछे रह गई। इनमें वो राम और लखन को देख लेती है। सखी दौड़कर आई, किशोरीजी, वो दो राजकुमार जिसकी चर्चा पूरी नगरी में हो रही थी, तू भी तो पूछती थी वो आज बाग में आये हैं। सखी आगे, पीछे जानकीजी और सखीवृंद। जानकीजी चल रही है और तुलसी पूरे शृंगाररस में जा रहे हैं-

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि।
कहत लखन सन राम हृदय गुनि।।

जानकीजी के तीन प्रकार के आभूषण की आवाज़ सुनी। हाथ के कंगन की आवाज़ सुनाई दी; कटिभाग के करधनि के घुंघरू की आवाज़ सुनाई दी और पैर के नूपुर की आवाज़ हुई। इस आवाज़ ने परमात्मा को उसकी ओर मुड़ने के लिए मज़बूर कर दिया कि ये किसकी आवाज़ है? तलगाजरडी अर्थ ये है कि कंगन याने समर्पण का प्रतीक। किंकिनी है ये संयम का प्रतीक है। नूपुर का अर्थ है सद्आचरण। साहब! आदमी का समर्पण, संयम, सदाचरण उसकी एक आवाज़ होती है; प्रचार करने की ज़रूरत नहीं। ये आवाज़ स्वयं हरि को बेताब करती है हमारी ओर देखने के लिए। जानकी को दूर से ठाकुरजी देख गए और लखन का हाथ पकड़ा, ये जनककन्या जानकी है, जिसके लिए इतना बड़ा धनुष्ययज्ञ हो रहा है। जिसका अलौकिक रूप देखकर मेरा सहज पवित्र मन उसी की ओर खींचा जा रहा है। तत्त्वप्रेम के कारण मन खींचा जा रहा है। एक-दूसरे के दर्शन करते हैं। मर्यादा भी इतनी; विवेक भी इतना। जानकीजी ज्यादा प्रभु में लीन होने को है, तब वो गुरुरूपी सखी ने उनको रोक लिया कि जानकी, अब चलें? देर हो रही है।

गुरु का काम ये है कि साधक की प्रत्येक इन्द्रिय को कन्ट्रोल करना। यहां का दर्शन मुझे बहुत प्यारा लगता है। जानकीजी को राम को देखना है; सखी जल्दी कर रही है। राम निगाहों से दूर हो जाए ये अच्छा नहीं लगता। तो जानकी ने बहानें बनाए; छोटे-छोटे हिरन घूम रहे थे तो सीयाजु हिरन को देखने के बहाने पीछे देख लेती है। एक छोटा-सा झरना बहता है तो उसको नांघने के लिए देखती है। वृक्ष की शाखा को हटाकर राम को देखती है सीयाजु। केवल मंदिर में राम को मत देखो, झरने के बहाने देख लो; शाखाओं के बहाने से देख लो। कोई हिरन नाचे और राम

न दिखे उसको तो मंदिर में केवल मूर्ति ही दिखेगी, परमात्मा नहीं दिखेगा। प्रकृति के प्रत्येक तत्त्व पूजारी है; परमात्मा के दर्शन के पर्दे खोल रहे हैं, लेकिन हम किसी में दब चुके हैं। जानकी ने हमें ये सब बताया क्योंकि जानकी भक्तिस्वरूप है और भक्ति हमें बोध देती है कि प्रकृति तत्त्व के बहाने मुझे देखो। जानकीजी मंदिर में आई और अब भवानी के मंदिर में गिरिजा की स्तुति कर रही है। प्रत्येक बहन-बेटियों को करने जैसी स्तुति है-

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

हे जगदम्बा, हे पराम्बा, तेरी जय हो। हिमाचलकन्या, तेरी जय हो; महेश के मुखचंद्र की चकोरी, तुम्हारी जय हो; गणेश और कार्तिकेय की माता, तुम्हारी जय हो। भवानी विनय-प्रेमवश हुई और मूर्ति हिलने लगी। क्या भाव है! मूर्ति के सामने हम तो नृत्य करते हैं लेकिन जिस साधक के सामने मूर्ति नर्तन करने लगेगी उसकी ऊंचाई कैसे कहूं? भवानी की गले की माला हटी और मूर्ति मुस्कुराई। कुछ वस्तु बुद्धि में नहीं पकड़ी जाती, लेकिन होती है। माला गिरी; सीयाजु ने सिर पर रखी और यहां तक लिखा कि मूर्ति बोली। हां उसकी भाषा बिलग होगी; उसके लिए बिलग प्रकार की श्रवणेन्द्रिय चाहिए। मूर्ति बोलती है, लेकिन हमारे साथ तो पडोसी भी न बोले, घर के लोग भी न बोले तो मूर्ति कहां बोले? मेरी माँ जानकी स्तुति करे और भवानी बोले तो इसमें आश्चर्य क्या है? माँ भवानी ने आशीर्वाद दिया कि जानकी, तेरे मनोरथ पूरे हो जाएंगे। तुम्हारे मन में जो सांवरा बसा है वो तुम्हे मिलेगा। सुमंगल बचन सुनकर जानकी के मन में हर्ष समा नहीं रहा है। सखियां सीयाजु को माँ सुनयना के पास ले गई। यहां राम-लखन पुष्प लेकर गुरु के पास पहुंचे। गुरु को फूल समर्पित किए। आशीर्वाद मिला।

दूसरे दिन सुबह धनुषयज्ञ का दिन है। विश्वामित्र के संग राम-लक्ष्मण गए। धनुषयज्ञ की शर्त उद्घोषित कर दी। एक के बाद एक राजा धनुष तोड़ने की नाकाम चेष्टा कर गए। किसी से धनुष टूटा नहीं। आखिर में भगवान राम खड़े होते हैं और गजपंकजनाल की तरह क्षणार्ध में धनुषभंग कर देते हैं। जानकी ने जयमाला पहना दी। जयजयकार हुआ। सब निर्विघ्न पूरा होनेवाला था इतने में परशुराम बाबा आये कि किसने धनुष तोड़ा? परशुराम को भगवान के प्रभाव का ज्ञान हुआ और उनकी बुद्धि के किवाड़ खुल गए। महाराज अवतारकार्य पूरा करके अवकाश प्राप्त कर गए।

सब विघ्न दूर हुए और जनक को बुलाकर विश्वामित्र ने कहा कि धनुषभंग हुआ। सीय-राम एक हो गए। दूत अयोध्या गए। महाराज दशरथजी बारात लेकर आये। मागशर शुक्ल पंचमी का दिन आया; गोरजबेला आई। राम-जानकी का ब्याह होता है। उसी तरह और तीनों भाईयों का ब्याह हुआ। ब्याह के बाद भी जनक ने बारात को बहुत रोकी है। बहुत दिन हो गए, फिर बिदा हुई। बारात अयोध्या पहुंचती है। कुछ दिन के बाद सबने बिदा ली। आखिर में विश्वामित्र महाराज ने बिदा ली। पूरा राजपरिवार सरजू तट पर महाराज को बिदा देने गए और तुलसी की पंक्ति है-

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

अवधपति कह रहे हैं, महाराज, ये सब संपदा आपकी है। मेरी रानियां, मेरे पुत्र, पुत्रवधूएं इन सबके सहित मैं आपका सेवक हूं। और हम आप पर दबाव न डाले, जब इच्छा हो तब आकर दर्शन देते रहियो। तुलसी 'बालकांड' का समापन करते हुए लिखते हैं, मेरी बाणी को पवित्र करने के लिए रामयश गाया है। बाकी राम की कीर्ति कौन गा सके? राम का जन्म, नामकरण, बिबाह जो गाएंगे, सुनेंगे उसके मंगल प्रसंगों में परमात्मा प्रसन्नता की वृद्धि करेंगे।

गोस्वामीजी भरतजी की महिमा की चर्चा करने लगे तो कहते हैं, वो महिमा नहीं है, महामहिमा है। 'मानस' में तलगाजरडी दृष्टि से गुरुकृपा से देखूं तो मुझे कुछ नज़र आता है कि भरत की महिमा के कुछ पहलू है। एक तो भरत की भक्ति की महिमा; भरत की रति की महिमा; भरत की नीति की महिमा; भरत के बचन की महिमा; भरत के त्याग करते समय प्रसन्न ऊर्मियों की महिमा; ये सब परोक्ष-अपरोक्ष रूप में अंकित है।

'मानस' में मानव-महिमा है

प्रतिदिन की भांति आदरणीय बापा ने कल की कथा का अंग्रेजी में रूपांतरण सुनाया। बापा, प्रणाम। कल सायंकाल को जब हम वहां मिले। मुशायरा का दूसरा भाग था और इससे पूर्व भारत से दूर विदेश में बसकर हमारे गुजराती साहित्य के विद्वान, लेखक या तो यहां रहकर जिसने साहित्य का सेवन किया है और ये पूरा कार्य हमारे आदरणीय बलवंतभाई जानी संभाल रहे हैं। जिसको कल साहित्य का अवोर्ड दिया गया उस आदरणीय वडील को मेरी ओर से बहुत-बहुत बधाई और नमन। फिर कुछ वक्ताओं ने अपने विचार प्रस्तुत किए। दो संस्कृत विद्वान ने अपनी बातें रखी। वसंत बापू ने अपनी रचनाएं प्रस्तुत की। आदरणीय बापा ने भी अपने विचार प्रस्तुत किए। और उसके बाद मुशायरा शुरू हुआ। सुन्दर संकलन में पूरा मुशायरा प्रसन्नता दे गया।

तीरथराज प्रयाग में गंगा बहती है तो दिखती है। जहां संगम होता है इलाहाबाद में-प्रयाग में वहां जमुना भी मिलती है और दिखती है। दो वर्ण में प्रवाह हम देख सकते हैं। तुलसी कहते हैं, 'देखत स्यामल धवल हिलोरे।' लेकिन सरस्वती लुप्त और गुप्त रहती है। लेकिन मेरी व्यासपीठ को अतीव प्रसन्नता है कि कुछ सालों से एकता, समता और समन्वय के रूप में, जो बुज़ुर्गों से लेकर युवा चेतनाएं अपनी सरस्वती को प्रगट कर रहे हैं ये बहुत बड़ा संगम है। मेरे लिए ये तीरजराज है, क्योंकि ये सरस्वती मुखर हो रही है। मैं मेरी बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं और सभी बुज़ुर्गों को आदाब करता हूं, सलाम करता हूं।

मैं रमेशभाई और उसके परिवार को कहूं कि कई साहित्यकार, विद्वान लोगों ने आज कितनी चिठ्ठियां लिखी है आपके सद्भाव के बारे में, व्यवस्था के बारे में, आपके आतिथ्य के बारे में। सब बहुत प्यार से पूरे आयोजन को सराह रहे हैं। यहां के साढ़े तीन सौ-चार सौ स्वयंसेवक है। कई बुज़ुर्ग भी स्वयं सेवा कर रहे हैं। प्रत्येक व्यक्ति की मेरे इन फ्लावर्स ने इतनी देखभाल की है कि मैं केवल इतना ही कहता हूं बाप! खुश रहो। ये सब युवान भाई-बहन चाहते हैं कि कथा सुने, बापू के पास रहे लेकिन सब सेवा में लगे हैं। ये पूरे श्रोता समाज ने भी शिकायत की चिठ्ठी नहीं लिखी है। ये बहुत बड़ी बात है। तो परमात्मा की कृपा, इनमें जो निमित्त बने उनका सद्भाग्य और सुचारु रूप से नवदिवसीय रामकथा का प्रेमयज्ञ विराम की ओर जा रहा है तब आगे बढ़ें।

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवन्नास्त्वयिगिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादःपरिकरः।।

'मानस-महिम्न' अंतर्गत 'मानस' में वर्णित विशेष तत्त्वों की महिमा हमने गाई है। जो दो पंक्ति पहले से हमने ली है भूमिका के रूप में, उसमें पहली पंक्ति में पार्वती कहती हैं, हे विश्वनाथ, हे महादेव, आप विश्व के नाथ तो है ही लेकिन आप मेरे नाथ है और आपकी महिमा त्रिभुवन में विदित है, प्रसिद्ध है। वो शिव रामनाम की इतनी महिमा कर रहे हैं तो मूल में शिव की महिमा और शिव के द्वारा गाई गई रामनाम की महिमा। समापन की ओर हम जा रहे हैं तो आखिर में शिव की महिमा और रामनाम की महिमा का ही गायन करें। संक्षेप में आप को मैं ले चलूं उस दृश्य के सामने इससे पहले हमें प्रसंगों का विहंगावलोकन कर लेना होगा।

कल अति संक्षेप में 'बालकांड' को विराम दिया। 'अयोध्याकांड' में प्रारंभ में अतिशय सुखों का वर्णन है। जब से जानकी ब्याह कर आई है तब से अयोध्या में बहुत समृद्धि बढ़ गई है। सुख की वर्षा हो रही है। सुख अच्छा है। आवश्यक रूप में वर्षा भी अच्छी है लेकिन अतिशय वर्षा हानिकारक है। बहुत जल बरसता रहे; कई मकान गिर जाए; कोई बह जाए तो अतिवृष्टि ठीक नहीं। 'मानस' के 'अयोध्याकांड' का पहला प्रकरण यही संदेश देता है कि जीवन में सुख की आवश्यकता है। हमारी पूरी सभ्यता यही उद्घोषित करती है, 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।'

अल्लाह तेरो नाम, ईश्वर तेरो नाम।
सबको सन्मति दे भगवान।

क्यों मांगा रचनाकार ने कि सब को सन्मति दे। इस कर्ता को खबर हो, न हो परमात्मा जाने, लेकिन ज्ञात-अज्ञात चित्त में 'मानस' की चौपाई नींव में पड़ी है। क्योंकि 'मानस' में लिखा है, संपदा उसे ही मिलती है, जहां सुमति होती है।

जहाँ सुमति तहँ संपति नाना।
जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना।।

इस धरती का रूप न उजड़े। हे परमात्मा, इस धरती की सुन्दरता कहीं उजड़ न जाए और प्रेम की एक उष्मा परस्पर कभी कम न हो। सबको सुख मिले लेकिन सुख का अतिरेक राम वनवास को निमंत्रित करता है। जानकी ने पुष्पवाटिका में भवानी से वरदान मांगा तो 'निज अनुरूप' अपनी पात्रता के अनुरूप वर मांगा, मुझे ज्यादा सुख नहीं चाहिए। मरीज़ साहब ने गुजराती में गज़ल लिखी है-

बस एटली समज मने परवरदिगार दे,
सुख ज्यारे ज्यां मळे त्यां बधाना विचार दे।

ज्यादा सुख मिल भी गया प्रारब्ध या पुरुषार्थ से तो भी आदमी को ध्यान रखना चाहिए कि ये बढ़ जाएगा तो हानि करेगा। इसीलिए जिसके पास बढ़ जाए, वो बांट दे। उपनिषद कहते हैं, 'तेन त्यक्तेन भुंजिथाः।' मरीज़ साहब कहते हैं, हे अल्लाह, मुझे सुख जब भी मिले, जहां से भी मिले तब मुझे अकेले का नहीं, पूरा पृथ्वी का ख्याल आये कि मैं उसको बांट दूं। अल्लाह, मुझे संपत्ति दे तो समझ भी दे कि मुझे जहां से मिले, जब भी मिले, मुझको सबका विचार आये। परमात्मा करे, सबको सुख मिले लेकिन उसको बांटा जाए।

तो 'अयोध्याकांड' का प्रारंभ बिंदु अति सुख है। और अतिसुख से ही चौदह साल का वनवास प्रगट होता है। मुझे अति सुख न मिले ऐसा परमात्मा के सामने निवेदन करना ये भक्त का साहस है; ये वीर भक्त कर सकता है। अधिक मांग हो यदि तो सबका विचार भी मिले। शक्तिवालों को समझ भी देना परमात्मा कि वो टुकड़ों-टुकड़ों में दुनिया को बांट न डाले। इसके लिए चिंतन चाहिए। परवाज़ साहब ने अच्छा कहा कि मैंने पद्मश्री मिलने की फाईल जला दी; कवि निरंकुश होता है। खिताब अच्छा है, सबको मिले लेकिन मिलता है तो देनेवाला बड़ा हो जाता है और लेनेवाला छोटा हो जाता है। क्यों अपना कद कम करें? मिले तो अच्छी बात है लेकिन ये हिंमत है कि जला दी फाईल! परवाज़ साहब का एक शे'र है-

हिलने लगे हैं तख्त, उछलने लगे हैं ताज।
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।

किसी फ़कीर का किस्सा सुनने से शाहों के तख्त हिलने लगते हैं। तो इसके पीछे तपस्या चाहिए। मैं कथा गाता हूं इसका मुझे आनंद है। इससे बड़ा आनंद विश्व में क्या है? लेकिन मैं सुनता हूं ज्यादा; मैं निरीक्षण करता हूं मेरे आंतरिक विकास के लिए कि ये शायर ने ऐसा किस रूप में कहा है? तो कभी-कभी वक्तव्य में, वाणी में तुकबंदी होती है; कई कविताओं में तर्कबंदी आती है। लेकिन ज्यादा तार्किक बातों में हार्दिकता दब न जाए वो भी ध्यान रखना पड़ता है। ओशो के वक्तव्य तार्किक होते हैं। कईयों में तपबंदी होती है; उनकी तपस्या झलकती है।

ना कबीरा, ना ही मीरां, ना मैं तुलसीदास हूं।
फिर भी तुझको खोज ही लूंगी, मैं अटल विश्वास हूं।

-दीप्ति मिश्र

तुलसीदास, कबीरदास, सूरदास होने की ज़रूरत नहीं है; विश्वासदास होने की ज़रूरत है। परमात्मा की कृति में प्रतिकृति नहीं हो सकती; सब भिन्न है। तो कई तुकबंदी, तर्कबंदी, कई तत्त्वबंदी भी होती है। नरसिंह महेता ने कहा-

जयां लगी आत्मा तत्त्व चीन्यो नहीं,
त्यां लगी साधना सर्व जूठी।

जब तक आत्मा ने तत्त्व को पहचाना नहीं तब तक साधना झूठी है। तो ये सब (साहित्यकार) दान दे रहे हैं। कविगण, विद्यावानों से दातार कोई है ही नहीं। वो जो देता है उसके सामने कुछ नहीं है। क्योंकि उसमें तप है, तत्त्व है।

कहीं हमारे सुख के अतिरेक से वनवास पैदा न हो जाए, इसलिए 'अयोध्याकांड' का पहला बिंदु विश्व को बड़ा मार्गदर्शन देता है। राजा दशरथ ने सभा में शीशा लेकर अपना मुकुट ठीक किया तब कान के पास सफ़ेद बाल देखकर राजा ने सोचा, मेरा बूढ़ापा आ गया। अब ये सत्ता-संपदा राम को देकर युवराजपद के लिए नियुक्त कर दूं। वशिष्ठजी को पूछा कि मैं किस दिन राम को युवराजपद पर नियुक्त करूं? तो वशिष्ठजी ने कहा, राजा, विचार आया है तो जिस समय राम को बिठा दो वही मंगल मूरत है।

मेरी ये अनुभूति है कि किसी भी व्यक्ति को पहला विचार आता है, वो परमात्मा का भेजा हुआ होता है। किसी का पूरा ग्रंथ परमात्मा का दिया हुआ होता है। आपको पहला खयाल आये वो आपकी दृष्टि में सही है तो पकड़ लो, क्योंकि ये तुम्हारा विचार नहीं है, परमात्मा का दिया हुआ विचार है। परमात्मा हम सबको मत्ला देता है, हम गज़ल बनाना चुक जाते हैं। आपके मन में ये विचार आये कि मुझे किसी को कुछ देना है तो तुरंत दे दो; विचार बदल जाएगा। मन बहुत चंचल है। वशिष्ठजी ने कहा कि देने का विचार आया है तो दे ही दो। राजा ने व्यवस्था के लिए एक दिन की मुद्दत मांगी और इसी मुद्दत के कारण राम का चौदह साल का वनवास हो गया। बीच में आई ममता की रात ने पूरी बाज़ी बिगाड़ दी। राम को वनवास हुआ।

राम, लखन, जानकी वनयात्रा के लिए निकल गए। पूरी अयोध्या रो रही है। तमसा के तट पर रात्रि मुकाम हुआ। भगवान को लगा, ये लोग मुझे जाने नहीं देंगे। तो रात्रि को अवधवासी दुःखी और श्रमित होकर सो गए थे तब रथ को ऐसे चलाने को सुमंतजी को कहा कि कोई खोज न पाए। शृंगबेर गंगा के तट पर सुबह पहुंचते हैं और यहां रामविहीन तमसा तट देखकर अयोध्यावासीओं का आक्रंद शुरू होता है। सब लौट जाते हैं। भगवान का रात्रि मुकाम शृंगबेरपुर हुआ। सुबह में बटक्षीर से भगवान राम ने जटा बांध ली। एक रात में कितना परिवर्तन हो गया! हम और आप क्यों चिल्लाते हैं थोड़ा दुःख आता है, बाज़ी पलटती है तो? इसलिए रामकथा प्रासंगिक है।

कल मुझे यहां के उद्योगपति मिलने आये; वो मुझे कहे, बापू, 'रामायण' में ये सब है वो दुनिया में कभी बना है? मैंने कहा, सही में बना है ये सब। रामकथा आज भी प्रासंगिक है। मैं गा रहा हूं इसलिए इसका प्रचार नहीं कर रहा हूं। ये स्वतः सूर्य है, स्वतः प्रकाशित है। कई बुद्धिजीवी कहते हैं कि हजारों साल हो गए, त्रेतायुग में राम आये और वाल्मीकि ने उसी समय लिखी कथा और तुलसी ने भी चार सौ- पांच सौ साल पहले लिखा तो अब ये 'रामायण' क्यों गाई जा रही है? ये कथा भूतकाल की है, भविष्यकाल के लिए हमें मार्गदर्शन देती है और वर्तमान में जीने की कला सिखाती है। मैं क्यों कथा गाऊं? एक पैसा मुझे नहीं लेना है। आप टिकट देते हो और पोथी लेकर आता हूं और जाता हूं। ये कथा मुझे अतीत का गौरव समझाती है, भविष्य का नया सूरज निकलेगा उसका आगाह करती है, प्रेरित करती है।

सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं।
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

मैं कथा के बिना जी नहीं सकता। ये मेरा श्वास है। 'उपनिषद' मेरी तलाश है, 'भागवत' मेरी प्यास है लेकिन सबमें वर्णित परमतत्त्व मेरा विश्वास है। ये सालों पहले मैंने कहा है। आप क्यों सुनते हैं कथा? ये प्रासंगिक है। राम सदा है। और रामकथा आपको तू भी है उसकी याद दिलाती है।

'मानस' में मानव-महिमा है। 'लीन्ह मनुज अवतार।' केवल भगवान की महिमा होती तो शायद दुनिया उब भी जाती। ये हमारी महिमा का शास्त्र है। केवल शिवमहिमा नहीं, जीव की भी महिमा है इसमें। जीव और शिव के बीच में सेतु बनाने का ये ग्रंथ है। ये प्रासंगिक है हर काल में। ये सब सत्य, प्रेम, करुणा की हम पर असर हो रही है। बिना बोल सब कुछ सीखा रही है रामकथा, भगवद्कथा, परम की कथा। एक अच्छे इन्सान की चर्चा हो; कोई लेख में अच्छी बात हो वो भी मेरे लिए रामकथा है। कोई अच्छी गज़ल लिखे तो वो मेरे लिए तुलसी की चौपाई है। ये विज्ञानव्रत साहब कहते हैं कि-

तुमने अपना ही गम देखा है?
तुमने कितना कम देखा है!

मैं इतने रुपयों का खर्च किसी से बर्बाद नहीं करवा सकता। ये केवल धर्मसभा नहीं है; ये प्रेमसभा है, ये करुणा की सभा है, ये सत्य की सभा है। यहां संगत और भोजन की पंगत दोनों है। तो कथा वर्तमान में जीने का बोध देती है। जीवन के छोटे-बड़े दुःख में ये कथा हमें ढाढ़श देती है कि राम को मुकुट मिलनेवाला था और दूसरे दिन जटा का मुकुट बन गया! परिस्थिति कब बदले, क्या पता?

दूसरे दिन शृंगबेरपुर से प्रभु ने बिदा दी तब सुमंत रोते हुए लौट जाते हैं। केवट से प्रभु नौका मांगते हैं तब केवट जिद्द करके बैठ गया कि बिना पैर धोए मैं आपको आगे नहीं ले जाऊंगा। चरण प्रक्षालन करता है केवट। कल नगीनबापा ने कहा ना कि सबसे पहले भगवान रामानुज ने ये द्वार खोला था कि कोई भी मंदिर में आ सकते हैं। हजार साल पहले भगवान रामानुज की ये क्रांति थी क्योंकि उनको पता था कि मेरे राम ने यह किया है। जिसके पास कुछ नहीं है उनके पास दुनिया का ईश्वर मांग रहा है। गरीब लोग क्या दे सके, ये भ्रांति राम ने तोड़ी। वर्णाश्रम में माननेवालों को मेरी बात अच्छी नहीं भी लगती होगी लेकिन मैं करूं क्या? जो राम ने किया वो रामानुज ने किया। वही परम वैष्णव नरसिंह मेहता ने किया। वो ही महात्मा गांधी ने किया; मेरे तुलसी ने किया और वो मैं कर रहा हूं। मेरा दायित्व हो गया है।

कई लोग कहते हैं कि आप ऐसे लोगों के घर जाकर रोटी खाते हैं? आपका तो गंगाजल का व्रत है। मैं कहता हूं कि गंगाजल देकर में रोटी बनवाता हूं। दुनिया में सबका स्वीकार करो। और श्रोताओं से मुझे कोई दक्षिणा नहीं लेनी है। मैं इतना ही कहूं कि अपने सत्य को सुरक्षित रखकर एक-दूसरे से प्रेम करो और पूरे जगत पे करुणा करो। जो मंदिर तिरस्कृत को अंदर न आने दे वो मंदिर में भगवान नहीं होता है, पाषाण होता है। जिसका नाम लेने से भवसिंधु तैर जाए वो गंगापार करने के लिए केवट से भीख मांग रहा है। ये है दीवारें तोड़ने की क्रांति। अहल्या जैसी पतिता के पास राम गए; केवटों के पास, बंदर-भालूओं के पास, आदिवासीओं के पास, राक्षसों के पास राम गए। अधम से अधम पक्षी संपाति और गीध के पास राम गए।

मैं २०१८ में अयोध्या में 'मानस-गणिका' पर कथा करने जा रहा हूं। तुलसीदास यदि वासंती नामक गणिका को मिलने जाते हैं तो मैं क्यों न जाऊं? उस समय के धर्मजगत ने पता नहीं, क्या-क्या उंगलिया उठाई होगी! मेरी व्यासपीठ जाएगी 'मानस-गणिका' का गायन करने के लिए। बुद्ध भी गए थे। बड़ों-बड़ों ने बुद्ध को कहा था कि ये बाज़ारू महिला के द्वार पर मत जाओ। तब बुद्ध ने कहा, वो बाज़ारू है तो आप कौन है? ये प्रसिद्ध पातकी है, तुम अप्रसिद्ध पातकी हो! ये हम सबको करना होगा। मैं आपको निमंत्रण दूं, इस कथा में सब आना। मेरी व्यासपीठ किन्नरों के पास गई। सुरत में ऐसे लोगों को आरती करने के लिए मैंने बुलाया था लेकिन शालीनता उनकी भी होती है। वो नहीं आये आरती करने। फिर मेरे उतारे पे मिलने आये थे। तालाब में थोड़ा दूध डालो तो तालाब दूध का नहीं होता लेकिन थोड़ा रंग तो बदलता है। समाधि लेने से पहले मुझे तो तसल्ली हो कि दूध का लोटा मैंने डाला तो था।

तो जिसका कोई नहीं है उसका राम है। और रामकथा उसकी है जिसका कोई नहीं है। केवट ने प्रभु को गंगापार कराया। गंगा के तट पर रात्रि मुकाम किया और दूसरे दिन शिव की पूजा की। अब प्रभु की पदयात्रा शुरू हुई। प्रभु भरद्वाज के आश्रम प्रयाग में आए। फिर भरद्वाजजी को कहा, मुझे मार्ग बताइए, मैं किस मार्ग पर जाऊं? मार्गदर्शन मिला और यात्रा आगे बढ़ी। गुहराज को प्रभु ने बिदा दी। प्रभु वाल्मीकि के आश्रम में गए और प्रभु के पूछने पर वाल्मीकि ने चौदह आध्यात्मिक स्थान बताए। राम-लखन-जानकी चित्रकूट में रहने लगे।

सुमंत अयोध्या लौटा और दशरथजी ने राम-लक्ष्मण-जानकी के वापस आने के बारे में पूछा। जब पक्का हो गया कि अब चौदह साल पहले कोई नहीं आयेंगे तब महाराज का धैर्य टूटा। और महाराज दशरथ छः बार 'राम-राम' बोलते अपना प्राण त्याग कर देते हैं। वशिष्ठजी आये। महाराज के देह को तैल-नौका में रख दिया है। धावन लोग भरत को ले आये। परिस्थिति देखकर भरत कैकेई की कड़ी आलोचना करते हैं। भरतजी कौशल्या की गोद में सिर रखकर रोने लगे। माता ने आश्वासन दिया। भरत ने आत्मनिवेदन किया है।

अयोध्या की राजसभा में सब इकठ्ठे हुए तब भरत ने कह दिया कि सत्ता मेरे लिए कुपथ्य है। मैं सत्ता का आदमी नहीं, सत् का आदमी हूं; मैं पद का आदमी नहीं, पादुका का आदमी हूं। पूरी अयोध्या को लेकर भरतजी चित्रकूट जाते हैं। भरत-राम की भेंट होती है। जनकजी पूरी

जनकपुरी लेकर आते हैं। चित्रकूट में एक प्रेमनगर बस गया। रोज सभाएं होती है। आखिर में निर्णय हुआ, भरत लौट जाए। चौदह साल के बाद जो निर्णय करना हो वो करे। भरतजी को प्रभु ने पादुका का दान दिया। भरतजी लौटे हैं और शुभ दिन निकाल कर प्रभु की पादुका को सिंहासन पर स्थापित किया। वहीं से गांधी बापू ने ट्रस्टीशिप का विचार उठाया था। भरतजी नंदिग्राम में कुटिया बनाकर, भूमि में गड्ढा करके, तपस्वी बनकर और राज्यशासन संभालते हुए जी रहे हैं। यहां तुलसी 'अयोध्याकांड' समाप्त करते हैं।

'अरण्यकांड' में राम-लक्ष्मण-जानकी पंचवटी गए। वहां रावण माया-जानकी का अपहरण करता है। अशोकवाटिका में रावण सीताजी को रखता है। जानकी के विरह में रोते हुए राम का वर्णन है। गीधराज जटायु को दिव्य गति दी। फिर राम ने कबंध का उद्धार किया और शबरी के आश्रम में आये प्रभु। 'अधम ते अधम अधम अति नारी।' ऐसी भीलनी के पास बैठकर प्रभु ने भक्ति की चर्चा की। शबरी अपने आपको योगअग्नि में विलीन करके वहां गई जहां से कभी लौटना न पड़े। आगे बढ़कर प्रभु पंपासरोवर आये। नारद से भेंट हुई और नारद प्रभु के मुख से साधु की चर्चा सुनकर लौट गए। यहां 'अरण्यकांड' पूरा हुआ।

'किष्किन्धाकांड' में भगवान राम रिष्यमूक पर्वत की ओर गति करते हैं। हनुमान की उपस्थिति में विषयी सुग्रीव और भगवान राम की मैत्री होती है। वाली को निर्वाण दिया। अंगद को युवराजपद दिया। प्रभु ने प्रवर्षण पर्वत के उपर उदासीन व्रत के कारण चातुर्मास किया। सुग्रीव भोग प्राप्त करने के बाद राम का कार्य भूल जाता है तब लक्ष्मण को भेजते हैं। सुग्रीव को जागृत किया। सुग्रीव शरण में आया। बंदर की टुकडीओं को सब दिशाओं में भेजा। दक्षिण में खास टुकड़ी को भेजा। सीता याने भक्ति को खोजने दक्षिण में भेजा गया। हनुमानजी को राम ने मणिमुद्रिका दी। पूरी टुकड़ी गहन वन में जाती है। स्वयंप्रभा के आश्रम में पहुंचे। स्वयंप्रभा ने आश्वासन दिया कि सीता अशोकवाटिका में है। आप आंखें बंद करके बैठो तो आप वहां पहुंच जाओगे। लेकिन चंचलता के कारण बंदरों ने आंख खोली तो सब समंदर के तट पर आ गए! रामदूतों को संपाति मिला और अभय दिया। संपाति ने मार्गदर्शन दिया। जामवंतजी का मार्गदर्शन लिया हनुमानजी ने। युवानों को प्रगति करनी चाहिए लेकिन बुज़ुर्गों की सलाह लेनी चाहिए। हनुमानजी तैयार हुए। समुद्र के तट पर एक पर्वत था वहां

चढ़ गए। यहां 'किष्किन्धाकांड' का विराम होता है और 'सुन्दरकांड' का प्रारंभ होता है।

श्री हनुमानजी परमात्मा के अमोघ बाण की भांति उड़ान भरते हैं। लंका में प्रवेश करते हैं। हनुमानजी रात्रि में सीता शोध करते हैं। हर मंदिर में देखा लेकिन कहीं भक्ति नहीं मिली। एक भवन देखा जिस में तुलसी का पौधा था; रामायुध अंकित थे। विभीषण के पास गए। सीता के पास जाने की युक्ति विभीषण ने हनुमानजी को बताई। हनुमानजी अशोकवाटिका में गए; उसी समय रावण का प्रवेश होता है। लेकिन रावण आया उससे पहले हनुमानजी आकर बैठे थे। इसका मतलब है कि हमारे जीवन में समस्या आती है, इससे पहले समाधान हमारी उपर आकर बैठा होता है। लेकिन हम इतने मूढ़ हो जाते हैं कि समाधान की ओर हमारी दृष्टि ही नहीं जाती! रावण धमकी देकर चला गया और जानकी विरह व्याकुल थी। हनुमानजी द्वारा फेंकी मुद्रिका देखकर सीता चकित हो गई तब हनुमानजी राम के सुंदर गुणों की कथा कहने लगे। फिर राम का संदेश दिया हनुमानजी ने और सीताजी ने उनको वरदान दिए। हनुमानजी को भूख लगी तब सीताजी ने कहा, यहां विषाक्त फल भी हो सकते हैं तो राम को हृदय में धारण करके मधुर-मधुर फल खाना।

पुष्पवाटिका में अक्षयकुमार को रावण ने भेजा। हनुमानजी ने उसका क्षय कर दिया। रावण कुपित हुआ और इन्द्रजित को भेजा। इन्द्रजित हनुमानजी पर ब्रह्मास्त्र फेंकता है। हनुमानजी ब्रह्मास्त्र में बंध गए। सभा में लाये गए। हनुमानजी की पूंछ जलाने का निर्णय हुआ है। हनुमानजी ने पूरी लंका को जलाई लेकिन एक भी व्यक्ति को नहीं जलाया। मुझे लगता है, लंका की विचारधारा को जलाई, व्यक्तिओं को नहीं। हनुमानजी समुद्र में स्नान करके माँ के पास आये। सीता ने खबर देकर बिदा दी।

हनुमानजी लौटकर राम के पास गये और चूडामणि दी और जानकी का संदेश दिया। सबको लेकर प्रभु समुद्र के तट पर जाते हैं। यहां विभीषण शरणागत बनकर आ जाता है। विभीषण की राय लेकर प्रभु तीन दिन बैठ गए समुद्र से रास्ता पाने के लिए। जड़ समुद्र तीन दिन में उत्तर नहीं देता तब प्रभु ने धनुष-बाण उठाया। विप्र रूप धारण करके समुद्र मणियों का थाल लेकर प्रभु की शरण में आया और कहा कि आपकी सेना में नल-नील नामक बंदरों को ऋषियों का आशीर्वाद है कि उनके छूए हुए पत्थर पानी में डाले जाए तो तैरते हैं। भगवान को सेतुबंध का विचार अच्छा लगा। यहां 'सुन्दरकांड' का विराम होता है।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध का सर्जन हुआ। भगवान ने कहा, ये परम रमणीय और उत्तम धरणी है; इसकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता; इसलिए यहां शंभु की स्थापना हो। रामेश्वर की स्थापना हुई। हमारे हृदय में शुभ करनेवाले शिव की स्थापना हो और विश्वास की स्थापना हो, यही रामेश्वर की स्थापना है। राम की श्रेष्ठ विचारधारा सेतुबंध है। सबका संकलन हो यही राम का इष्ट है। इस विचार की स्थापना की। ये विश्वास का मंदिर है। मंदिर तो तोड़े जाते हैं लेकिन विश्वास नहीं तोड़ सकते।

सब लंका में पहुंचे। सुबेल पर डेरा डाला। त्रिकूट पर्वत पर रावण मंदोदरी के साथ मनोरंजन प्राप्त करता है। भगवान ने उसके महारस का भंग किया। दूसरे दिन अंगद को राजदूत के रूप में संधि का प्रस्ताव लेकर भेजा गया। संधि हुई नहीं और युद्ध अनिवार्य हुआ। लक्ष्मण मूर्छित हुए। संजीवनी के द्वारा पुनः जागृत किया। कुंभकर्ण और इन्द्रजित का निर्वाण हुआ। आखिर में प्रभु रावण का भी निर्वाण करते हैं। रावण का तेज प्रभु में समा जाता है। रावण की सब क्रिया हुई। मंदोदरी ने स्तुति की। विभीषण को राज्य दिया और जानकी और राघव का पुनर्मिलन हुआ। पुष्पक विमान तैयार हुआ और भगवान अयोध्या आने के लिए उड़ान भरते हैं। हनुमानजी को अयोध्या भेजा खबर देने के लिए और विमान शृंगबेरपुर उतरा। प्रभु ने केवट से उतराई देने को कहा तब केवट ने कहा, ये तो बहाना था दूसरी बार दर्शन करने का। भगवान केवट को विमान में ले लेते हैं। यहां 'लंकाकांड' को विराम दिया जाता है।

'उत्तरकांड' के प्रारंभ में थोड़ा करुण दृश्य है। इतने में हनुमानजी आ गए। हनुमानजी ने अपना परिचय देकर कहा, भगवान सकुशल पधार रहे हैं। भरतजी के आनंद की कोई सीमा न रही। भगवान विमान में अयोध्या की ओर आये। भगवान राम विमान से उतरकर जन्मभूमि को प्रणाम करते हैं। बंदर और असुररूप विभीषण विमान से नीचे उतरे तो सबने सुंदर मनुष्य शरीर धारण किया। इसका मतलब है, रामकथा बंदरों को, राक्षसों को मानव बनाने की कला है। भरत और राम मिले तब कौन वनवासी था ये निर्णय नहीं कर पाए। भगवान ने अपना ऐश्वर्य प्रगट किया और परमात्मा सबको मिले। सबसे पहले प्रभु माँ कैकई के भवन गए। माँ का संकोच प्रभु ने छुड़वा दिया। फिर प्रभु सुमित्रा और कौशल्या के पास आए। राम ने अपने भाईओं को स्नान करवाया; खुद ने स्नान किया। जानकी को सास गणों ने स्नान करवाया।

दिव्य सिंहासन वशिष्ठजी ने मंगाकर प्रभु को बिराजित होने को कहा। पृथ्वी को प्रणाम किया। सूर्य को प्रणाम किया। दिशाओं को, प्रजाजनों को, माताओं को, गुरुजनों को, साधु-संतों को, ऋषिमुनिओं को प्रणाम करके राम और जानकीजी बिराजित हुए। और विश्व को रामराज्य का दान करते हुए वशिष्ठजी ने राम के भाल में तिलक किया। चार वेदों ने आकर प्रभु की स्तुति की। उसके बाद भगवान कैलासपति महादेव अपने मूल स्वरूप में राम दरबार में आकर प्रभु की स्तुति करते हैं। भक्ति का वरदान लेकर शिव कैलास गये। छः मास बीत गए और प्रभु ने सखागण को बिदा किया। हनुमानजी को छोड़कर सब बिदा हुए।

समय बीता। प्रभु की ललित नरलीला के कारण जानकी ने दो पुत्र लव-कुश को जन्म दिया; वैसे तीनों भाईयों को दो-दो पुत्रों की प्राप्ति हुई। यहां तुलसी ने रामकथा को विराम दे दिया। सीता का त्यागवाला प्रसंग तुलसीदासजी को अच्छा नहीं लगा। तुलसी कहे, मुझे तो संवाद करना है, मैं विवाद में क्यों जाऊं? फिर बाबा कागभुशुंडि का चरित्र है। आखिर में गरुड के द्वारा पूछे गए सात प्रश्नों का उत्तर भुशुंडि देते हैं। याज्ञवल्क्य महाराज ने कथा को विराम दिया कि नहीं ये लिखा नहीं। पार्वती कथा सुनकर कृतकृत्य हो गई और सब संदेह खत्म हो गए। तुलसीदासजी दीनता की पीठ से अपने मन को समझाते हुए कथा को विराम देते समय कहते हैं, तीन वस्तु को याद रखो।

तुलसी कहे, इस कलिकाल में हम योग, जप, तप कुछ नहीं कर सकते। तो राम का स्मरण करो याने सत्य। राम का गायन करो याने प्रेम। जो प्रेम करेगा वो गायेगा। मीरां, तुलसी, कबीर, नानक ने प्रेम किया तो गा रहे हैं वो सब। इसीलिए मैं कथा को 'प्रेमयज्ञ' कहता हूं। राम के गुणगान की कथा जब-जब मौका मिले तब सुने याने करुणा। जब-जब अवसर मिले तब कथा सुने ये हमारे कर्म का फल नहीं है, किसी की करुणा का फल है। तुलसी ने कहा, जिसकी लवलेश कृपा से मेरे जैसा मतिमंद आज परम विश्राम का अनुभव कर रहा हूं। गोस्वामीजी ने शरणागति की पीठ से रामकथा को विराम दिया और इन चारों आचार्यों की कृपाछाया में कथा को विराम दिया जा रहा है तब सब कुछ कह दिया है।

मैं आयोजन के प्रति प्रसन्नता व्यक्त करूं। सचदेव परिवार निमित्त बना और नव दिन मंगलमय वातावरण में पूरे हुए। बहुत सुन्दर आयोजन हो तब मैं कहता हूं, 'भली रचना।' आज मैं कहूंगा, 'भली रचना।' बिदा होते हुए मैं क्या ले जाऊं? तो विश्वामित्र के शब्दों में कहूं, 'रामरूप', आप सबमें हुआ रामदर्शन; 'भूपति भगति'; हमारे रमेशभाई, डोलरभाई, आप सबकी श्रद्धा; 'ब्याह उछाह अनंद'; यहां सब विद्या-कला का मिलन था। बौद्धिकता से ज्यादा हार्दिकता का दर्शन हुआ। व्यासपीठ के प्रति आपकी मासूमियत परमात्मा करे दीर्घायु रहे। मासूमियत याने आपकी नम्रता। समझदारी चतुराई से ज्यादा ज़रूरी है। मुझे क्या याद रहेगा? रामरूप, भाव सबका, परमानंद; सब संध्या के समय मिले वो याद करूंगा। आप सबने व्यासपीठ की एक विनम्र अपील से इतनी बड़ी राशि असरग्रस्तों के लिए सीमित मुद्दत में प्रदान की उसको भी मैं याद कर रहा हूं। तो हम सब मिलकर इस नव दिन का सुकृत जो कुछ हुआ; इस महीने में बाढ़ और ये सब इनमें जितनी आत्मा बिदा हो चुकी है, इन सबके लिए ये नवदिवसीय रामकथा श्रद्धांजलि के रूप में, संवेदना के रूप में, तर्पण के रूप में समर्पित कर दें।

'मानस' में मानव-महिमा है। केवल भगवान की महिमा होती तो शायद दुनिया उब भी जाती। ये हमारी महिमा का शास्त्र है। केवल शिवमहिमा नहीं, जीव की भी महिमा है इसमें। जीव और शिव के बीच में सेतु बनाने का ये ग्रंथ है। ये प्रासंगिक है हर काल में। ये सब सत्य, प्रेम, करुणा की हम पर असर हो रही है। तो कथा वर्तमान में जीने का बोध देती है। जीवन के छोटे-बड़े दुःख में ये कथा हमें ढाढ़श देती है कि राम को मुकुट मिलनेवाला था और दूसरे दिन जटा का मुकुट बन गया! परिस्थिति कब बदले, क्या पता?

मानस-मुशायरा

आंधियां गम की चलेगी तो संवर जाऊंगा।
मैं तेरी झुल्फ नहीं हूं कि बिखर जाऊंगा।

मुझे शूली पर चढ़ाने की ज़रूरत क्या है?
मेरे हाथों से कलम छीन लो, मर जाऊंगा।

– बादशाह ज़फ़र

दरिया का सारा नशा ऊतरता चला गया।
मुझको डुबोया और मैं ऊभरता चला गया।
वो पैरवी तो झूठ की करता चला गया।
लेकिन उसका चेहरा ऊतरता चला गया।

– वसीम बरेलवी

जो बांटता फिरता है ज़माने को उजाला,
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।

– जिगर मुरादाबादी

तुमने अपना ही गम देखा है?
तुमने कितना कम देखा है!

– विज्ञान व्रत

हिलने लगे हैं तख्त, उछलने लगे हैं ताज।
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।

– विजेन्द्रसिंह परवाज़

कैसा प्यार, कैसी चाहत, मैं बस एक ज़रूरत हूं।
पूजो, तोड़ो कुछ भी करो अब मैं पत्थर की मूरत हूं।

– दीप्ति मिश्र

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी–सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें ओर होती है।

– राज कौशिक

कवचिदन्यतोऽपि

गरीबी दुःख नहीं है, दरिद्रता दुःख है

‘मानस-बाग’ अर्पण समारोह में मोरारिबापू का प्रसंगोचित उद्‌बोधन

यह शुद्ध और सिद्ध भूमि ऐसी गिरनारी वसुधा को प्रणाम करके, शिवरात्रि महापर्व की पूर्व मध्याह्न पर ‘मानस-बाग’ साधु-समाज को समर्पित हो रहा है तब हमारी सभी साधु-समाज की समाधि को प्रणाम करके, यह ‘मानस-बाग’ निर्मित करने में जिनका बहुत बड़ा शिवसंकल्प रहा ऐसे महामंडलेश्वर पूज्य जगु बापू, दिवंगत समाधिस्थ प्रभुदासजी बापू, वर्तमान अजय बापू, जूनागढ का समग्र साधु-समाज और इस मंगल अवसर पर उपस्थित महामंडलेश्वर वसंतदासजी बापू, हमारे अन्य देहाती स्थान, हमारे सेवा-स्मरण के स्थान, उन सभी के मेरे पूज्य संत-महंत, सभी के चरणों में मेरा प्रणाम। जूनागढ नगर के प्रथम नागरिक मेयरश्री और हमारे साधु-समाज के गौरवरूप जो सौराष्ट्र युनिवर्सिटी, राजकोट का सुकान संभाल रहे हैं ऐसे हमारे विजयभाई, आप सभी मेरे साधु-समाज के पूजनीय बुज़ुर्ग, माताएं, बहनें, सभी को मेरा प्रणाम। जय सियाराम। हमारी साधु-समाज की बेटीओं ने रास प्रस्तुत किया उसके लिए वे बेटीओं को बहुत-बहुत आशीर्वाद।

‘मानस-बाग’ जब साधु-समाज को अर्पण हो रहा है तब उसमें सही में तपस्या तो जगु बापू और पूरे

समाज की है। साधु-समाज ने, हमारे देहाती स्थानों ने बहुत दिया। और इतर समाज ने दिया है तो वह कोई साधु के संकेत से दिया है। ऐसे ही कोई देने नहीं आता। मतलब यह साधु-समाज के आशीर्वाद से ही निर्मित हुआ है। और मैं सदा अच्छा ही सोचूं के अच्छा ही होगा। और बहुत अच्छा एक स्थान हमारा वैष्णव साधु का यहां निर्मित हुआ, इसका आपके बालक के रूप में बहुत खुशी व्यक्त करता हूं।

मैं किसी का नाम नहीं लूंगा, वरना किसी को ऐसा होगा कि हम रह गये। लेकिन हमारे समाज के उत्थान के लिए नहीं बल्कि हमारे समाज में कुछ चीज़ें दब गई थी उसे प्रकट करने में कई वर्तमान और समाधिस्थ साधुओं ने भी समाज के लिए बहुत कार्य किया है वे सभी को मैं प्रणाम करता हूं। दरिद्रता यह दुःख नहीं। भगवान करे, दुनिया में कोई दरिद्र न हो ऐसी हम चाहना करें। इसीलिए भारतीय ऋषिओं का एक सूत्र आया-

सर्वे भवन्तु सुखिनः।

दरिद्रता यह दुःख है। लेकिन बाप! मेरे सभी पूजनीय यहां बैठे हैं। मैं तो पूरी दुनिया का हूं। पूरी दुनिया मेरी है। फिर भी यह मेरा घोंसला है। मैं इस घोंसले का एक पंछी हूं वो भूल न सकूं। इस घोंसले से निकलकर मैं दुनिया का बना हूं और दुनिया को मेरी बनाई है। इसलिए साधुसमाज इस तरह अच्छा कार्य करे तब ज्यादा कुछ न कहूं लेकिन मेरी प्रसन्नता व्यक्त करने हेतु दस मिनट आपसे कुछ कहूं। भूल जाऊं इससे पहले बीच में कह दूं, मेयरश्री ने बहुत अच्छी बात कही कि कोई भी बेटी को अभ्यास करना हो और कुछ ज़रूरत हो तो बताना, हम मदद करेंगे। और साधु की सेवा करना ये मेयर का फ़र्ज़ भी है। उन्हों ने ऐसा भी कहा कि मैं राजनीति का आदमी नहीं हूं; मुझे तो ये दायित्व ऐसे ही आ गया है! जब आ ही गया है तो कुछ करके जाना; साधु-समाज को कुछ आवश्यकता हो तो उनके कागज़ मंज़ूर कर देना। मेयरश्री के सद्भाव के लिए मैं खुशी व्यक्त करता हूं।

गरीबी दुःख नहीं है, दरिद्रता दुःख है। गरीबी सुख है। जो लोग ऐसा कहते हो कि गरीबी दुःख है उसको यह मालूम ही नहीं कि शास्त्र क्या कहता है? दरिद्रता तो दुःख है ही। भगवान करे, कहीं भी दरिद्रता नहीं होनी चाहिए। विश्ववंद्य गांधी बापू की सार्ध शताब्दी पूरी दुनिया ने मनाई। कस्तूरबा की मनाई। गांधीजी ने हमें एक शब्द दिया, 'दरिद्रनारायण।' तो दरिद्रता ये दुःख है लेकिन गरीबी ये दुःख नहीं है। और मेरा साधु-समाज ये गरीब समाज है। गरीब यानी रंक नहीं, भिखारी नहीं, किसी की भी दाढ़ी में हाथ डाले ऐसा नहीं। गरीब यानी जिनका स्वभाव गरीब है। तुलसी कहते हैं-

नहिं दरिद्र सम दुःख जग माहीं।

दरिद्रता जैसा कोई दुःख नहीं। लेकिन उसके सामने-

संत मिलन सम सुख जग नाहीं।।

संत के मिलन जैसा कोई सुख नहीं। और संत यानी गरीब। 'दया गरीबी बंदगी समता शील सुजान।' ऐसा कबीर कहते हैं। मेरे तुलसी ने राम को 'गरीबनवाज़' कहा। 'विनयपत्रिका' का एक भाग मैं मेरे साधु-समाज को कहना चाहता हूं। तुलसीदासजी ने 'विनयपत्रिका' में कहा कि मेरा राम गरीबनवाज़ है लेकिन मैंने गरीबी ग्रहण न की। जो गरीबी ग्रहण करेंगे उनको गरीबनवाज़ चारों हाथ सब कुछ देंगे। दरिद्र होना ये अच्छा नहीं लेकिन गरीब तो रहना ही चाहिए। गंगासती कहती है-

भक्ति रे करवी एने रांक थइने रहेवुं।

तो हमारे समाज के साथ 'गरीब' शब्द जुड़ा हुआ है। कई लोग ऐसा कहे कि यह गरीब साधु है, तब मैं खुश होता हूं। दरिद्र कहे तो मुझे पसंद न आये। दरिद्र किसका? नात-जात, वर्ण, भाषा, प्रान्त कुछ भी बिना देखे जो समाज ने सभी को रोटी दी वह दरिद्र कैसे हो सकता है? हम गरीब है। और गरीबी ये हमारा मूल स्थायी भाव है। साधु को गरीब रहना चाहिए, रांक नहीं। उसमें भी बापू ने अभी 'मार्गी' शब्द प्रयुक्त किया ये 'मार्गी' तो मुझे बहुत अच्छा लगा। कुछ समय से 'मार्गी-मार्गी' का जप बहुत चल रहा है! और उसमें से

पूरा समाज पवित्र हो रहा है। जो 'मार्गी' शब्द का जप नहीं करते थे वे 'मार्गी' महामंत्र का जप करते हैं! और उससे पर्यावरण शुद्ध होगा और उनके जन्म-जन्म के पाप का नाश होगा ऐसा उज्जवल भविष्य मुझे दिखाई देता है। मार्गी समाज यानी पूरा वैष्णव समाज, बावा समाज, हमारा वैरागी समाज। अभी एक बेटी वैश्विक कक्षा की सौन्दर्य की स्पर्धा में विजेता हुई तब मुझे पूछा गया कि एक साधु की बेटी वैश्विक कक्षा की सौन्दर्य-स्पर्धा की विजेता हुई है तो आपको कैसा लगता है? मैंने कहा, हमारी साधु की बेटी विश्वसुंदरी हो ऐसा मैं कभी न चाहूं, क्योंकि साधु की बेटी विश्व-संस्कृति है, सुंदरी नहीं। उनको विश्व-सुंदरी होने की ज़रूरत नहीं। वह विश्व-संस्कृति है।

दरिद्रता नहीं, गरीबी हमें पकड़ रखनी चाहिए। बहुत-सी स्कूल निर्मित होनी चाहिए; छात्रालय निर्मित होने चाहिए। लड़के-लड़कियां पढ़ने चाहिए। हमारे कितने सारे बालक आगे बढ़ रहे हैं! दरिद्रता नहीं लेकिन गरीबी सदा बनाये रखना। मैं थोड़े समय से कह रहा हूं कि देहातों में माँ-बाप गुस्से हो तो जो हाथ में आये उससे बच्चे को मारे! हाथ में लाठी आये तो लाठी से मारे! हाथ में बेलन आये तो बेलन से मारे! वैसे अभी-अभी मुझ पर भी चारों ओर से मार पड़ता है! मानो मार खाने का मेरा काल बीता जा रहा है! आगे-पीछे मैं क्या बोला उसका विचार किये बिना ही प्रहार हो रहे हैं! फिर भी तलगाजरडा ने गरीबी नहीं छोड़ी, क्योंकि गरीबी हमारा बल है, हमारा स्वभाव है। इसलिए यह 'मानस-बाग' गरीब का बाग है। यह कोई उद्यान नहीं, उपवन नहीं। स्वभाव से जो मेरा गरीब समाज है साधु का, उनका बाग है। और यह केवल साधु-समाज के लिए ही आभूषण है ऐसा नहीं; यह तो पूरे गिरनार का एक सगुन माना जाएगा।

मैंने अभी विजयभाई को पूछा कि गुजरात में जिल्ले कितने? अच्छी बात है कि उनको पता है वरना कई राजनीतिकों को पता भी नहीं होता कि गुजरात में कितने जिल्ले हैं? मुझे लगा कि विजयभाई को होगा कि बापू मेरी कसौटी कर रहे हैं! पहले तो मेयर को ही पूछने की इच्छा हुई लेकिन बाद में हुआ कि जो हमारे हैं उनसे ही पूछूं! तैतीस जिल्ले है। गिरनार की तलहटी में मैं चाहूं कि गुजरात के तैंतीसों जिल्ले में एक-एक ऐसा स्थान हो। राजकोट में है। हमारे मंगलदास बापू से लेकर ये सब लड़के संभालते हैं। जूनागढ में हमारी बेटियों का छात्रालय है। महुवा में वनुबापू और सभी ने मिलकर हनुमंत-बाग किया है। भावनगर में हरुबापू और अन्य सब मिलकर बहुत अच्छे बाग का निर्माण कर रहे हैं। वैसा भिन्न-भिन्न जगह पर होंगे। लेकिन जहां न हो वहां गुजरात के तैंतीस जिल्ले में निर्मित हो। और इसमें सेवा की वैसे बापूओं सभी जगह सेवा करो तो बहुत बड़ा काम होगा। हर तहसील पर न हो तो कोई बात नहीं लेकिन हर जिल्ले में तो एक ऐसा स्थान होना चाहिए कि जहां मेरा गरीब साधु-समाज आदर से कह सके कि यह मेरे साधु-समाज का बाग है और हमारे साधु-संतों-महंतों जब भी आयें तब उनके निवास की व्यवस्था है।

साधु-समाज के लिए ऐसा कुछ होना चाहिए। और जब भी ऐसा जो जिल्ले के अगुआ सोचेंगे तब मेरा पूरा गरीब समाज तैयार है; उसमें कोई पीछे हटनेवाला नहीं है। इसमें कौन कितने रुपये देता है उसका महत्त्व नहीं है। आज के इस उद्घाटन अवसर पर हमारे एक साधु ने भोजन का खर्च दिया; किसी ने मंडप का खर्च दिया। अब मेरी एक ही बिनती है कि यह समिति जो कार्य करे उसमें कहीं भी राजनीति न आये। कहीं खटपट न हो। खटपट अमीरों में होती है; गरीबों में होती ही नहीं। हमारा साधु-समाज पूरे समाज को प्रेरणा प्रदान करे कि देखो, हम सेवा करते हैं। और यह बुज़ुर्गों के मार्गदर्शन में कितना अच्छा हुआ! दो-तीन बुज़ुर्गों के मार्गदर्शन में हमारा महुवा का बाग कितना सुंदर चल रहा है! राजकोट में कितना अच्छा चल रहा है! वैसे कच्छ में-भुज में एक बाग होना चाहिए। सभी जगह हो।

मेयर साहब ने कहा कि ऐसे ही ये उत्तरदायित्व आ गया है और मैं सेवा करने तैयार हूं। वैसे आज मेरे

समाज में कितने कथाकार है; कितनी नई-नई चेतनाओं ने व्यासपीठ पर विनम्रता से आसन ग्रहण किया है उसका एक साधु के नाते में गौरव महसूस करता हूं। वे सब भी अपने-अपने जिल्ले में आपको साथ देंगे। एक कथा की जितनी दक्षिणा मिले उसमें से दसवां हिस्सा दे तो भी बहुत फ़ायदा होगा। पचीस हजार दक्षिणा मिले तो उसमें से दसवां हिस्सा निकाल देना मेरे साधु-समाज की सेवा के लिए। और इसमें मेरा कोई कथाकार पीछे नहीं हटेगा क्योंकि वह दूसरे यजमान से इतना ले लेंगे। इसलिए बिलकुल चिंता नहीं।

मैं चाहूं कि हर जिल्ले में ऐसा हो सके। लाइब्रेरी की शुरूआत हुई। ओर तो क्या कहे? मैं किसी के पास मांगू नहीं। शायद कोई कुछ दे और वो मेरे पास हिसाब मांगे तो मैं ना बोल दूं! हिसाब चाहिए तो किसी ओर के पास जा! यहां तो जो पैसा आया वो ऐसे ही गया! हिसाब करना हो तो कथा छोड़कर हमने धंधा ना किया होता? सूरत में हीरे की पांच चक्की न की होती? हिसाब या पावती नहीं है। देना हो तो दो! और वो भी जल्दी दो! बिलंब करे वो मुझे रास नहीं आता। इसलिए इस वक्त मैं हमारे लंडन के लोर्ड पोपट को आग्रह करता हूं कि इस मंगल अवसर पर सगुन के रूप में एक लाख रुपया दे। रमेशभाई ने तो पचीस लाख दिये ही है। लेकिन वो ऐसे ही पैसे छोड़े नहीं! उनको मुझे कहना पड़े! रमेशभाई उनका परिवार मांगे तो एक पैसा भी न दे! वो कहे, बापू को पूछ लूं। फिर दे और करोड रुपये फ़ेंक दे साहब! ऐसा समर्पित आदमी है। उनको भी कहता हूं कि मेला करने आये हो तो एक लाख रुपया देकर जाना यह साधु को। दूसरा नरेशभाई आया है वो भी एक लाख रुपया समझकर सयाना होकर दे दे। और एक लाख नवसारीवाले लड़के देंगे। आशिष की अभी शादी हुई है तो वो कहता है, मेरी ओर से एक लाख रुपया देता हूं। खेतशी कहता है, मुझे भी एक लाख रुपया देना है। एक लाख रुपया हमारा भरतभाई डेर देता है; वो तो सतत सेवा करता है। जयंतीभाई वैसे भी हमेश खड़ा रहता है इसलिए उनका नाम मैंने नहीं लिया। दुबई से हमारा एक लड़का आया है, वह कहता है कि मुझे भी एक लाख रुपया देना है। और ये कोई चंदा नहीं है, हां! मेरे पास से बहुत ले गये हो इसलिए देते हो! ये आप दातारी नहीं करते! रमेशभाई की कंपनी का नाम तो 'गोड माय सायलन्ट पार्टनर' है। ईश्वर मेरा मौन पार्टनर है। वह ट्रस्टी है। वह मौन कौन? वह मैं। मैं ज्यादातर मौन ही रहता हूं।

तो यह मंगल अवसर है। शिवरात्रि में यह 'मानस' का अभिषेक है। आप इतनी सेवा करने तैयार हुए हो, परमात्मा आपको बहुत-बहुत प्रसन्न रखे। ये तो अभी-अभी मुझे विचार आया कि ये मेरे साथ-साथ घूमते हैं तो कुछ करे तो सही! रात को एक जगह मैं फोन पर बात करता था; मुझे पूछा गया कि बापू, मेले में आपके साथ कितने लोग होते हैं? मैंने कहा, पूरा मेला होता है! हमारी गीताबहन अमरिका से है वह भी एक लाख रुपया देगी।

बापू, इस बाग में एक लिफ्ट लगवा दो। मुझे तो पचहत्तर साल हुए फिर भी कोई तकलीफ़ नहीं, लेकिन कोई वयोवृद्ध साधु आये तो उनको कोई मुश्किल न हो। तो बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। और यह संस्था कन्या छात्रालय का भी ख्याल रखे, बेटीओं का ख्याल रखे। और ऐसा जहां-जहां जिल्ले में होगा तो मुझे बहुत आनंद होगा। और कोई बैठा है वह संकल्प पूरा करे। मेयर पर तो ये दायित्व आ गया है तो करते हैं! हमारे पर तो पहले से आ गया है साहब! इसलिए हमें करना है।

तो यह सुंदर अवसर पर मैं बहुत ही प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मैं सराहना करूं इसलिए नहीं लेकिन आप अपनी ओर से देखना कि कितना सुंदर कार्य हुआ है! बापू, इसको अच्छी तरह से मेन्टेइन करना, स्वच्छ रखना। दो-तीन ज्यादा आदमी की आवश्यकता हो तो रखना; उनकी तनख्वाह तलगाजरडा से ले जाना। लेकिन कोना-कोना स्वच्छ होना चाहिए। 'हनुमंत बाग' में से प्रेरणा लेना। उसका कोना-कोना मुझे पसंद है। हर जगह ऐसा हो ऐसी हनुमानजी को मैं प्रार्थना करता हूं। यह

गरीब समाज का बहुत बड़ा काम है साहब! मेरा समाज कायम गरीब रहे, दरिद्र नहीं। स्वभाव न छोड़ना। हमारा स्वभाव गरीब है। तुलसी कहे, मैंने इतना भजन किया, इतनी माला की, 'मानस' लिखा, इतनी साधना की, चित्रकूट में मैं तपा, जन्म से मेरी यह दशा; लेकिन ईश्वर अगर 'गरीबनवाज़' कहलाता हो तो मुझ पर करुणा क्यों न उतरी? तब वह स्वयं कहते हैं, 'ग्रहि न मैं गरीबी', मैंने गरीबी ग्रहण न की। क्योंकि ईश्वर कहते हैं कि अगर तू 'गरीब' हो तो मैं 'गरीबनवाज़' बनूं। तू गरीब ही नहीं है! तू तेरी जात को कुछ समझ बैठा है, इसलिए मेरा नवाज़पना रुका हुआ है। मेरा यह समाज गरीब था, है और सदा रहेगा ऐसी तलगाजरडा को श्रद्धा है।

बहुत ही प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मेरे संतों को मेरा बहुत-बहुत प्रणाम। ये सबका बहुत आशीर्वाद है साहब! सब मुझे आगे-आगे करते हैं वो उनका बड़प्पन है। जगु बापू और अजय बापू; सभी का नाम नहीं लेता लेकिन छोटी से लेकर बहुत-सी सेवा की है साधु-समाज ने। शुरूआत की तब देहाती स्थानों ने कितनी उदारता से संकल्प किये हैं! ऐसा हर जिल्ले में हो सके। सभी समाज वहां मदद करे और ऐसा सदा होता रहे ऐसी हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना। मुझे कई लोग कहते हैं कि बामणा की कथा में आपने ऐसा कहा था कि अब मैं कोई छोटे-बड़े कार्यक्रमों में नहीं जाऊंगा। अब मुझे कोई बुलाये ना। तलगाजरडा आना, लेकिन कोई समारोह में बुलाना नहीं। मैं निवृत्ति नहीं लेता लेकिन देश और दुनिया में सभी जगह पहुंच नहीं पाता। तो आपने ऐसा कहा था लेकिन साधु के भंडारे में तो आप गये थे! लोग ऐसी नोंध रखने लगे हैं! इसकी भी नोंध ली जाएगी कि आप शिवरात्रि में तो गये थे! मैं आपका गुलाम थोड़ा हूं? मुझे जहां जाना हो वहां जाऊं। और मैं जिस घोंसले का पंछी हूं उस घोंसले में तो अवश्य जाऊं।

('मानस-बाग' अर्पण समारोह में जूनागढ (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक २०-२-२०२०)

मायाभाई आहीर

देवराज गढवी (नानो डेरो)

हकादान गढवी

मेराण गढवी

दीपकबापू हरियाणी

राजभा गढवी

जितेन्द्र गढवी

हरेशदान सुरु

ललिताबहन घोडाद्रा

देवराज गढवी

अनुभा गढवी

बिहारी हेमु गढवी

भारतीबहन व्यास

इशानी दवे

निरंजन राज्यगुरु

घनश्याम लाखाणी

भरतदान गढवी (रंघोळा)

. जितुदान गढवी

नगीनदास संघवी

नरोत्तम पलाण

रघुवीर चौधरी

रतिलाल बोरीसागर

वी. एस. गढवी

शाहबुद्दीन राठोड

भद्रायु वछराजानी

जय वसावडा

काजल ओझा (वैद्य)

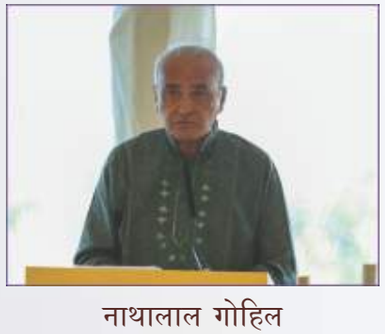

नाथालाल गोहिल

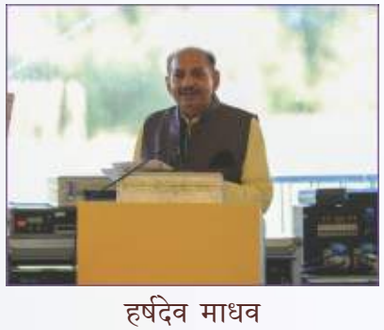

हर्षदेव माधव

बलवंत जानी

अंकित त्रिवेदी

चिंतन पंड्या

हरिश्चंद्र जोशी

जलन मातरी

खलील धनतेजवी

जवाहर बक्षी

माधव रामानुज

विनोद जोशी

संजु वाळा

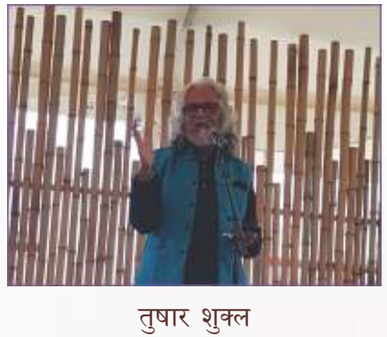

तुषार शुक्ल

हर्षद त्रिवेदी

शोभित देसाई

नीतिन वडगामा

राहत इन्दौरी

वसीम बरेलवी

विज्ञान व्रत

दीक्षित दनकौरी

जमील हापुडी

डो. विजेन्द्रसिंह परवाज़

डो. कुंअर बेचैन

मासूम गाज़ियाबादी

दीप्ति मिश्र

नइम अख्तर

राजेश रेड्डी

अंदाज़ दहेलवी

मिर्ज़ा आरिफ

राज कौशिक

उस्ताद ज़ाकिर हुसैन - नीलाद्रि कुमार

कौशिकी चक्रवर्ती

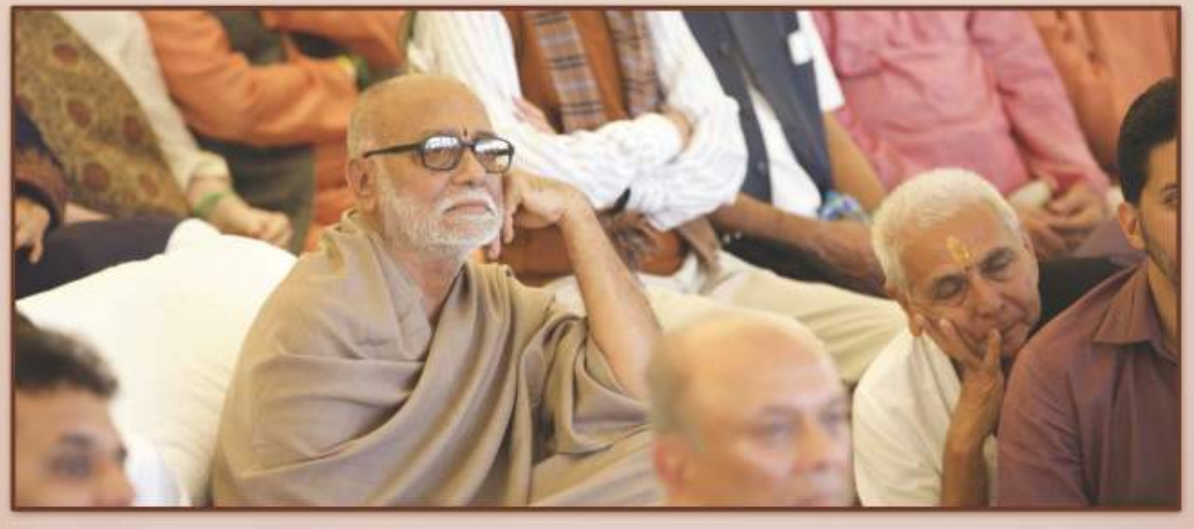

शिवमहिम्नःस्तोत्रम्

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः ।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ।।

●

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्ववर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ।।

●

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च ।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ।।

●

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः ।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मङ्गलमसि ।।

●

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिंधुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ।।

॥ जय सीयाराम ॥